Registered with the Registrar of Newspaper for India
R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946
94251-01132

Supported by:
Kisaan Helpline
+91-7415538151

गौरवपूर्ण प्रकाशन-द्वितीय दशक की ओर अग्रसर

मध्य भारत कृषक भारती

READ FOR ONLINE EDITION
Website: www.krishakbharti.in
E-mail: bhartikrishak75@gmail.com

ISSN-2582-5976

हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली मासिक पत्रिका

वर्ष-20 अंक-02 ग्वालियर, मई -2025 मूल्य 30 रुपए

मध्यप्रदेश में किसान मेला

किसानों को आधुनिक कृषि यंत्रों और तकनीकों को लाभ

देश में किसानों को खेती-किसानी की नई तकनीकों से अवगत कराने के साथ ही सरकारी योजनाओं की जानकारी देने के लिए सरकार द्वारा किसान मेलों का आयोजन किया जाता है। इस कड़ी में मध्य प्रदेश के सभी संभागों में किसान मेलों का आयोजन किया गया। मध्यप्रदेश के किसान कल्याण एवं कृषि विकास मंत्री एदल सिंह कंषाना ने जानकारी देते हुए बताया कि उज्जैन संभाग के मंदसौर में पहला किसान मेला आयोजित किया गया। उन्होने कहा कि मध्यप्रदेश सरकार ने राज्य के सभी संभागों में किसान मेलों का आयोजन करने का निर्णय लिया है। इन मेलों में किसानों को कृषि, खाद्य प्र-संस्करण, उधानिकी और पशुपालन से संबंधित नवीनतम जानकारी दी जायेगी।

बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर सम्मान अभियान के अंतर्गत संगोष्ठी

मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने रविन्द्र नाट्यगृह, इंदौर में भारत रत्न बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर सम्मान अभियान के अंतर्गत आयोजित संगोष्ठी का शुभारंभ किया।

जिला स्तरीय मिलेट्स फूड फेस्टिवल सह कृषि मेला

किसानों की आर्थिक उन्नति और आधुनिक खेती को बढ़ावा देने के लिए सरकार पूरी तरह प्रतिबद्ध है। कृषि यंत्रों की प्रदर्शनी, किसानों के नवाचार का सम्मान और मिलेट्स उत्पादन को बढ़ावा देने के संकल्प के साथ सागर में दो दिवसीय जिला स्तरीय मिलेट्स फूड फेस्टिवल सह कृषि मेले का आयोजन।

ग्वालियर। आपकी थाली में कितना पोषण है इसका पता अब राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय ग्वालियर के वैज्ञानिक एवं एम्स के चिकित्सक पता लगाएंगे। इसी को लेकर कृषि विवि ग्वालियर एवं एम्स भोपाल और न्यूटिशन इंटरनेशनल के बीच एक त्रिपक्षीय अनुबंध किया गया है।

मप्र कृषि उद्योग विकास निगम की 199वीं बोर्ड बैठक का आयोजन उद्यानिकी एवं खाद्य प्रसंस्करण मंत्री नारायण सिंह कुशवाह की अध्यक्षता में किया गया। बैठक में मंत्री ने कहा कि निगम का प्रमुख उद्देश्य राज्य में कृषि आधारित उद्योगों को सशक्त करना और कृषि उद्यमिता को प्रोत्साहित करना है।

राष्ट्रीय बागवानी अनुसंधान एवं विकास प्रतिष्ठान पटना केन्द्र द्वारा दो दिवसीय राज्य स्तरीय संगोष्ठी का आयोजन कृषि विज्ञान केन्द्र भागवानपुर सिवान में ß प्याज की उन्नत उत्पादन तकनीकी एवं कटाई उपरांत प्रबन्धन ß विषय पर किया गया ।

कृषि विज्ञान केंद्र डिंडोरी के सभागार में टीएसपी (एसटी) के अंतर्गत आईसीएआर द्वारा स्वीकृत परियोजना अपशिष्ट के जैव रूपांतरण एवं उच्च मूल्य बायोमास उत्पादन के लिए ब्लैक सोल्जर फ्लाई (बीएसएफ) के उत्पादन विषय पर प्रशिक्षण।

कृषि महाविद्यालय रीवा में अनुसूचित जन जाति उपयोजना, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा वित्त पोषित दो दिवसीय जैविक खेती प्रबंधन पर प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया गया।

जवाहर लाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय जबलपुर, कृषि विज्ञान केन्द्र शहडोल के वरिष्ठ वैज्ञानिक सह प्रमुख डॉ. मृगेन्द्र सिंह के मार्गदर्शन में केन्द्र के श्रीमती आशा श्रीवास्तव सहायक ग्रेड 3 का सम्मान सह विदाई कार्यक्रम का आयोजन।

रायपुर। कृषि के क्षेत्र में ड्रोन की बढ़ती उपयोगिता एवं अनुप्रयोग को देखते हुए इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय छत्तीसगढ़ द्वारा कृषि अनुसंधान, नवाचार और विस्तार को बढ़ावा देने के लिए यहां कैटेलिस्ट फाउंडेशन नामक संस्था के साथ समझौता किया गया।

इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय के विद्यार्थी अब उच्च शिक्षा एवं अनुसंधान हेतु उज्बेकिस्तान जा सकेंगे और उज्बेकिस्तान के विद्यार्थी कृषि विवि में अध्ययन एवं शोध कर सकेंगे। कृषि विवि रायपुर एवं डेनाउ इंस्टीट्यूट ऑफ एंटरप्रेन्योरशिप एंड पेडागॉजी, डेनाउ, उज्बेकिस्तान के बीच इस आशय का एक समझौता किया गया।

लाखों टन अनाज बर्बादी की जवाबदेही तय हो...

जिस देश में करोड़ों लोग कुपोषण व खाद्यान्न की किल्लत से जूझ रहे हों, उसके सिर्फ एक राज्य में ही, चार साल में 8191 मीट्रिक टन अनाज सड़ जाए, इससे ज्यादा शर्मनाक कुछ नहीं हो सकता। हमारा गैर-जिम्मेदार तंत्र व अदूरदर्शी नेतृत्व इसकी जवाबदेही से बच नहीं सकता। ये लापरवाही की अंतहीन श्रृंखला की दुर्भाग्यपूर्ण परिणति है। किसानों के खून-पसीने से उपजी और कर दाता के धन से खरीदी गई लाखों टन उपज का यूं बर्बाद होना बताता है कि हमारे तंत्र में प्रबंधन से जुड़े अधिकारी कितने संवेदनहीन और गैर-जिम्मेदार हैं। चिंता की बात यह है कि पंजाब में साल-दर-साल बर्बाद होने वाले अनाज की मात्रा लगातार बढ़ती ही जा रही है। यानी इस संकट को अधिकारी गंभीरता से नहीं ले रहे हैं। चिंता की बात यह कि जहां वर्ष 2022-23 में जहां करीब 264 मीट्रिक टन अनाज खराब हुआ था, वहीं वर्ष 2023-24 में यह आंकड़ा 29 गुना बढ़ गया बताया जाता है। मीडिया रिपोर्टों के अनुसार यह आंकड़ा बढ़कर 7764 मीट्रिक टन हो गया बताया जाता है। जिस देश में तमाम लोग कुपोषण व भुखमरी का दंश झेलते हों, वहां ये आंकड़े शर्मशार करने वाले ही हैं। एक आकलन के अनुसार इस बर्बाद हुए अनाज से सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत सोलह लाख लोगों का पेट भरा जा सकता था। बताया जाता है कि खाद्यान्न की बर्बादी के इस आंकड़े का उल्लेख उपभोक्ता मामले, खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय की रिपोर्ट में किया गया है। निश्चित रूप से साल-दर-साल बढ़ती अन्न की बर्बादी हमारी लचर भंडारण क्षमता पर सवाल खड़े करती है।

हरित क्रांति की सफलता का पंजाब को भरपूर लाभ मिला। किसानों ने भी पूरे मनोयोग से कंधा से कंधा लगाकर सहयोग दिया। तत्कालीन सत्ताधीशों की सजगता व सक्रियता से यह क्रांति परवान चढ़ी। कालांतर में धरती सोना उगलने लगी। देश की खाद्य श्रृंखला को मजबूत बनाने में पंजाब के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। लेकिन राज्य के सत्ताधीशों ने इस बहुमूल्य खाद्यान्न को सहेजने में दूरदर्शिता नहीं दिखाई। यदि सरकार समय रहते बड़े पैमाने पर अनाज के गोदाम बनाती तो आज ये संकट पैदा नहीं होता। भंडारण संकट के चलते ही किसान भी फसल की कटाई के बाद तुरंत फसल बेचने मंडियों की तरफ दौड़ता है। जिसके चलते बिचौलिए व आढ़ती औने-पौने दाम पर किसानों को फसल बेचने के लिये मजबूर कर देते हैं जिससे किसान को उसकी उपज का वाजिब दाम नहीं मिल पाता।

तेरी खुबसूरती की क्या मिशाल दू...

तेरी खुबसूरती की क्या मिशाल दू...

❋ ❋ ❋

✍ काजल राजावत
(कुहू)
बिधुना जिला औरैया (उ.प्र.)

कि तेरी खुबसूरती
की क्या मिशाल दू...

❋ ❋ ❋

इसे कोई रंगरेज
कहूं या बेमिसाल
कहूं...?

❋ ❋ ❋

माना कि है दसों
दिशाएं हर तरफ नजारों से भरी...

❋ ❋ ❋

पर तू जब संवर कर उस सादगी से निकले...

❋ ❋ ❋

इसे खंजर कहूं या कुदरत का दिया हुआ
एक और जहां कहूं...???

❋ ❋ ❋

और तेरी प्यारी सी मुस्कुराहट के बाद
खिलखिलाती हुई हसी की आवाज की
क्या जुबान दू...???

❋ ❋ ❋

इसे सलाम दू या खुद को तुझपे एक बार
फिर से कुर्बान होने का अंजाम दू...

सदस्यता ग्रहण करने एवं विज्ञापन प्रकाशन हेतु निम्न प्रतिनिधियों से सम्पर्क करें

छिंदवाड़ा (म.प्र.)
रामप्रकाश रघुवंशी
98272-78063
***
नरसिंहपुर (म.प्र.)
नवीन शुक्ला: 89894-36330

मुंगावली (म.प्र.)
भगवानदास चौबे
96854-88453
बलिया (उ.प्र.)
आर.एन. चौबे-94535-77732
पश्चिम बंगाल
राजेश नायक-98831-57482

उड़ीसा
समीर रंजन नायक
70422-31678
***
हापुड़ (उ.प्र.)
मयंक गौड़: 83848-66823

Online मंगाएं साहित्य

मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ में अत्यंत लोकप्रिय हिन्दी मासिक समाचार पत्रिका **मध्य भारत कृषक भारती** द्वारा प्रकाशित कृषि साहित्य अब आप ऑनलाइन भी खरीद सकते हैं। हमारी वेबसाइट **www.krishakbharti.in** पर जाकर **Purchase** को क्लिक करके ऑनलाइन ऑर्डर कर सकते हैं।

वैज्ञानिक/लेखकों के लिए सूचना

प्रत्येक माह की 22 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को प्रिंट एडिशन में स्वीकार किया जाता है तथा 23 से 28 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को डिजीटल एडिशन में सम्मिलित किया जाना संभव हो सकेगा। लेख में मोबाइल नम्बर होना अनिवार्य है।

-संपादक

मध्य भारत कृषक भारती में प्रकाशित पाठ्य सामग्री में व्यक्त विचार वैज्ञानिकों/लेखकों के हैं। सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। किसी त्रुटि शंका या समाधान के लिये वैज्ञानिकों/लेखकों के पते प्रकाशित किये जाते हैं जिस पर संपर्क किया जा सकता है। सभी प्रकार के विवादों के लिये न्याय क्षेत्र ग्वालियर होगा। सभी पद मानसेवी हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
सदस्यता एवं विज्ञापन के लिए सम्पर्क करें
94251-01132 0751-4070802
▪ वार्षिक ₹ 400 ▪ द्विवार्षिक ₹ 750
▪ पंचवार्षिक ₹ 1800
▪ वर्ष 20 ▪ अंक 02 ग्वालियर, मई 2025 मूल्य ₹ 30/-

: सम्पादक मण्डल :

प्रधान सम्पादक
राजू गुर्जर (MJC)
94251-01132
94245-22090
❖
प्रसार/मार्केटिंग टीम
डी.के. बरार
91791-85002, 70247-93010
महेश अहिरवार: 94251-48365

: तकनीकी मार्गदर्शन/वैज्ञानिकगण :

डॉ. व्ही.एस. तोमर (पूर्व कुलपति)
राजमाता विजयाराजे सिंधिया
कृषि विश्वविद्यालय
***
डॉ. अर्पिता श्रीवास्तव
(Assistant Professor)
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन
महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)
***
डॉ. आर.के.एस. तोमर
राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि वि.वि.
ग्वालियर (म.प्र.)
***
डॉ. अनिल कुमार सिंह (उद्यान वैज्ञानिक)
कृषि विज्ञान केन्द्र, पीपराकोठी (पूर्वी चम्पारण),
डॉ.रा.प्र.के.कृ.वि.वि.,पूसा, समस्तीपुर

प्रो. (डॉ.) के. आर. मौर्य
पूर्व कुलपति, राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय
पूसा (बिहार), एवं महात्मा ज्योति राव फूले
विश्वविद्यालय जयपुर (राजस्थान)
***
डॉ. रंजु कुमारी (स.प्रा. सह कनीय वैज्ञानिक)
पादप प्रजनन एवं अनुवांशिकी विभाग, नालन्दा
उद्यान महाविद्यालय, नूरसराय (नालन्दा), बिहार
कृषि वि.वि.,सबौर, भागलपुर
***
डॉ. भागचन्द जैन
प्राध्यापक एवं प्रचार अधिकारी
कृषि महाविद्यालय, इंदिरा गांधी कृषि
विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)
***
डॉ. विश्वनाथ सिंह कंसाना
कृषि विज्ञान केन्द्र दतिया (म.प्र.)

डॉ. विनीता सिंह, अध्यक्ष
अनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग
AKS विश्वविद्यालय, सतना (म.प्र.)
***
तपस्या तिवारी पीएचडी शोधार्थी, मृदा विज्ञान और
कृषि रसायन विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आज़ाद कृषि
और प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)
***
बसंत कुमार दादरवाल
इंस्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चर साइंस बनारस
हिन्दू यूनिवर्सिटी वाराणसी (उ.प्र.)
***
श्रीमती रिया ठाकुर (वैज्ञानिक उद्यानिकी)
कृषि विज्ञान केन्द्र, चंदनगांव, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
मोबाइल: 9907279542
***
डॉ. मोहब्बत सिंह जमरा (असिस्टेंट प्रोफेसर)
पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन
महाविद्यालय, महू, (म.प्र.)

अंदर के पन्नों पर

मध्यप्रदेश/छत्तीसगढ़

- आवरण फसलें और हरी खाद: स्थायी कृषि की नई दिशा 10
- कुत्तों में डिस्टेंपर: लक्षण, कारण, इलाज और बचाव... 11
- पालतू पशुओं का प्राथमिक उपचार 12
- बायोचार: टिकाऊ कृषि हेतु एक मृदा संशोधन 13
- पशुओं में डर्मेटोफाइट संक्रमण, लक्षण एवं निदान 14
- ड्रोन तकनीक: कृषि के लिए वरदान 15
- हाइड्रोपोनिक्स: सब्जी उत्पादन की एक आधुनिक तकनीक 16
- मशरूम की खेती-एक लाभकारी कृषि व्यवसाय 17
- सतावरी की उत्पादन विधि 18
- गर्मी के मौसम में गाय-भैंस के दूध उत्पादन... 19
- मृदा स्वास्थ्य एवं मृदा गुणवत्ता का प्रबंधन 20
- ट्राइचिनेलोसिस: एक उपेक्षित परजीवी रोग 21
- भिण्डी की नवीन किस्में 22
- भूमि का बेहतर उपयोग: कृषि और सौर ऊर्जा का संगम 23

उत्तर प्रदेश

- 'किसान क्रेडिट कार्ड योजना' 24
- हीड्रोपोनिक्स विधि से चेरी टमाटर की खेती... 25
- नर्सरी में सब्जियों की उत्पादन तकनीक 26
- सर्वाधिक लाभदायक कृषि प्रणालियां 27
- बीज प्राइमिंग प्रयोग से फसलों की उन्नत खेती 28
- बाल संरक्षण एवं बाल अधिकार 29
- जामुन की खेती, किस्में एवं कीट प्रबंधन 30
- उत्तर भारतीय मैदानों में गेहूँ के फूलने और दाना... 31
- नसदार तोरई की वैज्ञानिक खेती 32
- वेस्ट डिकम्पोस्टर: एक तकनीकी पहल 33
- भविष्य में ऑर्गेनिक खेती को बढ़ावा देना क्यों है जरूरी 34
- खीरा की वैज्ञानिक खेती 35
- उर्वरकों के उपयोग की महत्वता एवं सावधानियां 36

राजस्थान

- करेला की उन्नत फलोत्पादन तकनीक 37
- बहुपयोगी औषधीय पादप: गिलोय 38
- पर्यावरण संरक्षण में युवाओं की भूमिका 39
- अंजीर की फसल: आधुनिक उत्पादन तकनीक ... 40
- करौंदा का प्रसंस्करण और पोषक महत्व 41

हरियाणा

- जीरो वेस्ट होम: भारतीय परिवारों के लिए एक नया कदम 42
- गेहूँ की उन्नत खेती 43
- वैज्ञानिक बछड़ा प्रबंधन 44
- औषधीय और पोषक गुणों से भरपूर विभिन्न बहुमूल्य मशरूम 45
- राजमा: मुख्य रोग एवं उनका उपचार 46
- पशुओं में परजीवियों के लिए आयुर्वेदिक उपचार 47

हिमाचल प्रदेश

- कुकुर्बिट्स की डायरा खेती 48

बिहार

- हरा चारा उत्पादन की उन्नत तकनीक 49
- बिहार क्षेत्र में कटहल की खेती की संभावनाएं 50
- श्रीअन्न विधि उत्पाद का प्रसंस्करण एवं भण्डारण 51

महाराष्ट्र

- AI (कृत्रिम बुद्धिमत्ता) और GIS (भौगोलिक सूचना प्रणाली)... 52

केविके अम्बाला में 7वें राष्ट्रीय पोषण पखवाड़े का शुभारंभ

अंबाला। कृषि विज्ञान केन्द्र, अम्बाला द्वारा राष्ट्रीय पोषण पखवाड़े का आयोजन किया जा रहा है जिसका शुभारंभ प्रांगण में हुआ। डॉ. उपासना सिंह, वरिष्ठ

वैज्ञानिक एवं प्रधान, केवीके ने बताया कि महिला एवं बाल विकास विभाग के सहयोग से कृषि विज्ञान केन्द्र तेपला के प्रांगण में इस पखवाड़े का शुभारम्भ हुआ जिसमें महिला बाल विकास अधिकारी श्रीमती ईशा ने विशेष रूप से शिरकत की। कार्यक्रम में 45 सुपरवाइजर एवं आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य कुपोषण को काम करना, एनीमिया से निपटना और पोषण के प्रति जागरूकता को बढ़ाना है। इसके बाद अंबाला में एनीमिया की शिकार महिलाओं/किशोरियों की बढ़ती संख्या पर प्रकाश डाला गया और कुपोषण से बचने के लिए पोषक थाली के बारे में और प्रत्येक वर्ग के आहार वर्ग के बारे में जानकारी दी गई। इसके साथ ही प्रसार कार्यकर्ताओं के लिए प्रशिक्षण के अंतर्गत पोषक गृह वाटिका स्थापित करके पोषकता में अपना योगदान देने के लिए प्रशिक्षण दिया गया। केवीके के फार्म मैनेजर अभय कुमार ने गृह वाटिका के ले-आउट प्लान के बारे में विशेष जानकारी दी। पोषक आहार पर प्रदर्शनी लगाकर प्रतिभागियों को प्रोत्साहित किया गया। श्रीमती ईशा ने कुपोषण मुक्त भारत की शपथ दिलवाई और छोटे बच्चों, महिलाओं और किशोरियों में कुपोषण, बौनापन एवं कम वजन इत्यादि की रोकथाम के लिए जानकारी, गर्भवती महिलाओं एवं स्तनपान करने वाली महिलाओ में एनीमिया को कम करने के लिए आयरन एवं फोलिक एसिड की गोलियां खाने के लिए प्रेरित किया। डॉ. सिंह ने बताया कि आगामी दिनों में भी पोषकता के महत्व और सही आहार खाने से संबंधी रैली, विभिन्न जागरूकता कार्यक्रम, प्रतियोगिताएं इत्यादि आयोजित किए जाएंगे। अंत में श्रीमती काजल ने सभी प्रतिभागियों का धन्यवाद प्रेषित किया।

मुख्य आकर्षण

• राष्ट्रीय पोषण पखवाड़े के मुख्य उद्देश्य-कुपोषण को काम करना, एनीमिया से निपटना, पोषण के प्रति जागरूक होना एवं स्वस्थ भारत का निर्माण • कुपोषण मुक्त भारत पर शपथ • पोषण गृह वाटिका पर प्रसार कार्यकर्ताओ के लिए प्रशिक्षण • न्यूट्री रिच डाइट पर प्रदर्शनी

नरवाई न जलाने की कृषकों को सलाहः डॉ.अखिलेश

रीवा। पौध सरंक्षण वैज्ञानिक डॉक्टर अखिलेश कुमार कृषि विज्ञान केंद्र रीवा द्वारा कृषको को समसामयिक सुझाव एवं सलाह में किसान खेत में नरवाई न जलाए क्योंकि भूमि की जलधारण क्षमता कम होने के साथ वातावरण का तापमान भी बढ़ जाता है। मृदा में पाये जाने वाले लाभदायक जीव या सूक्ष्मजीव के नष्ट होने के साथ.साथ पर्यावरण भी दूषित होता है और भूमि कठोर हो जाती है। खेत में पड़ा कचरा भूसा, डंढल सड़ने के बाद भूमि को प्राक्रतिक रूप से उपजाऊ बनाते हे। खेती का देष की आर्थव्यवस्था में बड़ा योगदान है। अगर नरवाई न जलाकर स्ट्रा रीपर का प्रयोग करके भूसा बनाकर पशुओ को खिला सकते है और जमीन मे मिट्टी पलटने वाले हल से पलटकर खेत में मिलाना चाहिए। उर्द एवं मूंग की फसल में पीला रोग लगने पर इमीदाक्लोप्रिड्ड 17.8 एस एल की 8 मिली मात्रा प्रति टंकी या थायोमेथोसाम एवं इमीदाक्लोप्रिड्ड की मिश्रित दवा की 10 मिली मात्रा प्रति टंकी या 15 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। इस समय रीवा में प्याज में झुलसा रोग का प्रकोप देखा जा रहा है जिसमें पौधों की पत्तियां ऊपर से पीली पड़कर सूखने लगती है इसके नियंत्रण हेतु कैप्टान एवं हेक्साकोनोजोल की मिश्रित दवा की 30 ग्राम मात्रा प्रति टंकी या प्रोपिकोनाजोल 13.9 प्रतिशत एवं डायफेनोकोनाजोल 13.9 प्रतिशत ईसी की मिश्रित दवा की 20 एम एल मात्रा प्रति टंकी या टेबुकोनाजोल 25.9% ईसी की 25 एम एल प्रति टंकी की दर से प्रकोपित फसल पर छिड़काव करना चाहिए।

कृषि विज्ञान केन्द्र, झाबुआ में कृषि चौपाल कार्यक्रम का सीधा प्रसारण

झाबुआ। कृषि विज्ञान केन्द्र में कृषि चौपाल कार्यक्रम के 5वे एपिसोड का सीधा प्रसारण का आयोजन किया गया जिसमें ठाकुर सिंह डुडवे, प्रक्षेत्र विस्तार अधिकारी, अनिल कुमार शर्मा, निकरा परियोजना, चन्द्रशेखर लोखण्डे केवीके झाबुआ, राघवेन्द्र सिंह भदौरिया केवीके झाबुआ, सहित झाबुआ जिले के उमरी, भूरीमाटी व सजेली ग्राम से आये 48 किसान सम्मिलित हुए। इस कार्यक्रम में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के विभिन्न वैज्ञानिको द्वारा मखाने की खेती से किसानों को होने वाले वित्तीय लाभों के बारे में विस्तृत जानकारी प्रदान की एवं मखान की खेती में आने वाली विभिन्न समस्याओं एवं उनके निवारण के बारे किसानों को विस्तार से जानकारी प्रदान की साथ ही किसानों को विभिन्न फसलों के लिए माननीय प्रधानमंत्री महोदय द्वारा की जाने वाले प्रयासों के बारे में बताया।

।। श्री गणेशाय नम ।।

फक्कड़ बाबा
खाद बीज भण्डार
खाद बीज एवं कृषि कीटनाशक दवाईयों के विक्रेता

सदर बाजार गंज मुरार, ग्वालियर, मोबा. 9926988124, 9340964335
01/2023-24

मृदा परीक्षण विषय पर प्रशिक्षण

शहडोल। कृषि विज्ञान केन्द्र शहडोल के वरिष्ठ वैज्ञानिक सह प्रमुख डा. मृगेंद्र सिंह के मार्गदर्शन में शासकीय पंडित शम्भुनाथ शुक्ला विश्वविद्यालय, शहडोल के वनस्पति विज्ञान विभाग के विद्यार्थियों ने मृदा परीक्षण विषय पर तकनीकी प्रषिक्षण कार्यक्रम में हिस्सा लिया। जिसके केंद्र के वैज्ञानिक डॉ. ब्रजकिशोर प्रजापति ने प्रशिक्षार्थियों को बताया कि मृदा स्वास्थ्य कार्ड जिस पर निम्न जानकारी जैसे मृदा का पी.एच. मान, ई.सी., कार्बनिक पदार्थ, नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश, सल्फर, जिंक, लोहा, कॉपर, मैग्नीज, बोरान, अंकित कर कृषकों को उपलब्ध कराया जाता है जिससे कृषक अपनी फसलानुसार, क्षेत्र अनुसार संतुलित उर्वरकों का प्रयोग कर अच्छा उत्पादन प्राप्त कर सकें। यदि हमें मिट्टी की सुरक्षा करनी है तो उसके बारे में जानकारी होनी भी जरूरी है। मिट्टी की शक्ति और उसकी स्थिति के बारे में हमें तभी जानकारी हो पाएगी, जब हम उसका समय-समय पर परीक्षण कराते रहे। कृषि में मृदा परीक्षण या भूमि की जांच एक मृदा के किसी नमूने की रासायनिक जांच हैं जिससे भूमि में उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा के बारे में जानकारी मिलती हैं।

इस परीक्षण का उद्देश्य भूमि की उर्वरकता मापना तथा यह पता करना है कि उस भूमि में कौन से तत्वों की कमी है। मृदा की जांच करवाने के लिये सर्वोत्तम समय फसलों की कटाई के उपरांत मई एवं जून का होता है।

डॉ. प्रजापति ने यह भी जानकारी दी कि कृषि में बीज के बाद उर्वरक ही सबसे मंहगा तथा महत्वपूर्ण निवेश है, जो उत्पादन बढाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। उन्नत प्रजातियों की आनुवंशिक क्षमता के अनुरूप उपज प्राप्त करने के लिए बीज और स्वस्थ मृदा के साथ-साथ सिंचाई तथा कृषि रक्षा निवेश अत्यंत आवश्यक है। पोषक तत्वों का सही अनुपात में और सही समय पर सही विधि द्वारा मृदा, फसल और जलवायु की विभिन्नता के अनुसार प्रयोग करना ही संतुलित उर्वरक प्रयोग माना जाता है।

हवा व पानी में उग रही फसलें देखने पहुंचे राष्ट्रीय संगठन मंत्री

ग्वालियर। राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय में परंपरागत खेती को आधुनिक तरीके से किस तरह से किया जाए इसका माडल देखने के लिए स्वदेशी जागरण मंच के राष्ट्रीय संगठन मंत्री कश्मीरी लाल जी मंगलवार को पहुंचे। जहां पर उन्होंने हवा और पानी में उगाई जा रही फसल तकनीक को देखा साथ ही किस तरह से परंपरागत खेती को आधुनिक तरीके से किया जा रहा है इसे देखकर वह आश्चर्य चकित भी हुए। जिसको लेकर उन्होंने विश्वविद्यालय के कुलपति डा अरविंद कुमार शुक्ला व उनकी टीम की प्रशंसा करते हुए उन्हें बधाई दी और साथ ही कहा कि जिस तरह से कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर में नवाचार हो रहे है इस तरह के नवाचार हर विश्वविद्यालयों में भी होने चाहिए। संगठन मंत्री ने कहा कि इस तरह के नवाचार करना तभी संभव होगा जब उन संस्थानों में कुलपति डा शुक्ला जैसा विचारक पहुंचेगा।

कृषि विश्वविद्यालय के कुलपति डा अरविंद कुमार शुक्ला ने राष्ट्रीय संगठन मंत्री को पुष्पगुच्छ भेंट कर स्वागत किया और परिसर में स्थित एरोपोनिक यूनिट और हाइड्रोपोनिक यूनिट का भ्रमण कराया। भ्रमण के दौरान राष्ट्रीय संगठन मंत्री ने कहा कि जिस तरह से कृषि भूमि सिकुड़ती जा रही है उसको देखते हुए इस तरह के नवाचार होना जरूरी । जिससे लोग कम जगह और कम लागत में खेती वाड़ी कर मुनाफा कमा सकें। हाइड्रोपोनिक यूनिट लोग अपने घर में भी स्थापित कर जैविक पद्धति से सब्जियां उगा सकते हैं। इसमें खर्च भी कम आता है और स्थान की आवश्यकता कम ही पड़ती है। राष्ट्रीय संगठन मंत्री ने परिसर में तैयार हो रहे जैविक तालाब का माडल भी देखा और उसकी प्रशंसा की। कुलपति डा शुक्ला ने परिसर में गांव की परिकल्पना के तैयार हो रहे माडल के बारे में बताया, जहां पर विद्यार्थी शोध कार्य कर सकेंगे और पर्यटन की दृष्टी से भी इसका फायदा मिलेगा।

उपयुक्त समय के लिए नमूना नमूना जांच : डॉ. जाखड़

रतलाम। सभी किसान उपकरण वर्तमान समय में आपके फसल कर खेत खाली हो गए हैं। ऐसे में आप अपने खेत की मिट्टी का नमूना लेकर जांच के लिए कृषि विज्ञान केंद्र कालू में संपर्क कर सकते हैं। जिससे आपको सही समय पर खेत की मानक क्षमता का पता चल सके और आगामी उत्पादन में वृद्धि हो सके। साथ ही किसान भाई अपने खेत में फसल के मैदान या नरवाई को नहीं जलाते, प्लाऊ या रोटावेटर से जमीन में पलट देते हैं। साथ ही अगर पानी की सामुद्रिक हो तो एक केला में फ़सल फ़्लोरिडा को इकट्ठा कर पानी के साथ वेस्ट डि-कम्पोज़र का उपयोग कर खाद भी बना सकते हैं।

प्रो. बालिक दास राय
बन्टी राय
98276-11495
88715-18885
मै. माँ उर्वरक केन्द्र

अमित राय
रसायनिक एवं जैविक खाद बीज एवं दवाई के विक्रेता

पताः भितरवार रोड, डबरा (म.प्र.)
03/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

मैदानी कार्यकर्ता एवं आयुष कार्यालय के चिकित्सक के लिए दो दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन

धार। कृषि विज्ञान केंद्र, धार एवं आयुष कार्यालय द्वारा "एक जिला एक औषधीय फसल" विषय पर दो दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन कृषि विज्ञान केन्द्र, धार में वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं केन्द्र प्रमुख डॉ. एस.एस. चौहान के मार्गदर्शन में किया गया। यह प्रशिक्षण मुख्यतः धार जिले के उद्यानिकी विभाग के मैदानी कार्यकर्ता एवं आयुष कार्यालय में कार्यरत चिकित्सक हेतु रखा गया जिसका उद्देश्य एक जिला एक औषधीय फसल योजना की शुरुआत कर प्रत्येक जिले में एक विशिष्ट औषधीय फसल को बढ़ावा देना है। केंद्र के वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रमुख डॉ. एस.एस. चौहान ने अपने संबोधन में बताया कि ये देवारण्य योजना 2.0 के अंतर्गत एक पहल है जिसके तहत राज्य के पाँच जिलों में एक जिला एक औषधीय फसल कार्यक्रम का आरंभ किया गया है। जिसमें प्रत्येक जिले के लिए एक विशेष औषधीय फसल निर्धारित की गई है। जिसमें धार जिले के स्टीविया को औषधीय फसल के रुप में लिय जाना है। राज्य में औषधीय फसलों का एक विस्तृत नक्शा तैयार किया जा रहा है, जिससे इन फसलों की खेती और विपणन को सुव्यवस्थित तरीके से किया जा सके।

15 दिवसीय वेयर हाउस प्रबंधक के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम

रीवा। कृषि विज्ञान केन्द्र, रीवा मध्यप्रदेश में वेयर हॉउस प्रबंधक के लिए 15 दिवसीय कार्यक्रम का आयोजन उर्वरक विपणन प्राविधिकार के अंतर्गत जिला विपणन अधिकारी श्रीमती शिखा वर्मा के मार्गदर्शन में आयोजन किया जा रहा है। इस कार्यक्रम के नोडल मृदा वैज्ञानिक अखिलेश पटेल एवं समन्वयक डा.के.एस. बघेल तकनीकी अधिकारी पादप रोग विज्ञान है यह कार्यक्रम अधिष्ठाता कृषि महाविद्यालय रीवा डा. एस.के. त्रिपाठी के मार्गदर्शन एवं केन्द्र प्रमुख डा. अजय कुमार पाण्डेय के निर्देशन में आयोजित किया जा रहा है। इस कार्यक्रम में ए.के.पटेल वैज्ञानिक, डा. बी.के. तिवारी डा. सी.जे. सिंह, डा. अखिलेश कुमार, डा. स्मिता सिंह, डा. के.एस. बघेल, संदीप शर्मा, एंव श्रीमती मंजू शुक्ला ने अपने-अपने विषय में जानकारी अधिकारियों एवं कर्मचरियों को दी।

जल गंगा संवर्धन अभियान अंतर्गत ग्राम बरखेड़ा काछी में जल संरक्षण के लिए चौपाल आयोजित

अशोक नगर। जल गंगा संवर्धन अभियान के अंतर्गत नवांकुर संस्था स्व श्री भवानी प्रसाद मेमोरियल शिक्षा प्रसार समिति द्वारा प्रस्फुटन ग्राम बरखेड़ा काछी में जल संरक्षण के प्रति चौपाल का आयोजन जिला समन्वयक सुश्री अनिता जाटव एवं विकासखंड समन्वयक श्रीमति सुखवती वर्मा के मार्गदर्शन में ग्राम के माता मंदिर प्रांगण में किया गया। जिसमें जिला समन्वयक द्वारा उपस्थित लोगों को जल सहेजने हेतु एवं जल के महत्व के बारे में बताया कि यह अभियान हम सभी का अभियान है। आज हम जल संवर्धन के प्रति नहीं जगे तो आगे आने वाले समय में हम सभी को गंभीर जल संकट का सामना करना पड़ सकता है। इसलिए हमें कल को बेहतर बनाने के लिए आज जागरूक होना पड़ेगा। बारिश होने के पहले हमें जल को सहेजने के इंतजाम करने होंगे। विकासखंड समन्वयक द्वारा जल संरक्षण के उपाय लोगों को बताए इस दौरान सभी को जल बचाने हेतु शपथ दिलाई गई। स्थानीय नदी पर श्रमदान किया गया।कार्यक्रम का संचालन संस्था सचिव राकेश चौबे द्वारा किया गया। आभार प्रस्फुटन समिति अध्यक्ष अखिलेश श्रीवास्तव ने किया। कार्यक्रम में नवांकुर संस्था गुपलिया के अध्यक्ष शेर सिंह यादव,बीएसडब्ल्यू छात्रा पूजा श्रीवास्तव सहित ग्रामीणजन उपस्थित रहे।

पोषण पखवाडा अंतर्गत समूह की महिलायें ग्राम स्तर पर कर रही जागरूकता का कार्य

इन्दौर। पोषण पखवाड़े के अंतर्गत इन्दौर जिले के म.प्र. डे राज्य ग्रामीण आजीविका मिशन अंतर्गत संचालित 4 हजार से अधिक स्व-सहायता समूहों की सदस्यों के साथ यह पोषण पखवाडा जिले की 40 प्रशिक्षित समूह सदस्य पोषण सखियों के साथ मनाया जा रहा है। इस पोषण अभियान के तहत विभिन्न प्रकार कि गतिविधियां पोषण सखियों द्वारा महिला एवं बाल विकास विभाग के सहयोग से की जा रही हैं, जिसमें बच्चों के जन्म से लेकर गर्भवस्था के 1000 दिवस के महत्व के साथ गर्भवती महिलाओं को टीकाकरण एवं संस्थागत प्रसव के लिये प्रोत्साहित किया जा रहा है। साथ ही महिलाओं के खून की जांच करवाने के साथसाथ एनीमिक पाई जाने वाली महिलाओं को आंगनवाडी केंद्र की मदद से पौष्टिक आहार लेने के लिये जागरूक करना एवं घर में पोषण वाटिका लगाने हेतु समूह सदस्यों को प्रेरित करना इत्यादि प्रमुख गतिविधिया की जा रही हैं। साथ ही जागरूकता के उद्देश्य से ग्राम में पोषण आहार व मोटे अनाज की प्रदर्शनी लगाई जा रही है, जिससे अधिक से अधिक महिलाओं को जागरूक किया जा सके। अभियान में समूह सदस्य स्थानीय आंगनवाडी कार्यकर्ताओं के सहयोग से कार्य सम्पादित कर रही है। मुख्य कार्यपालन अधिकारी जिला पंचायत श्री सिद्धार्थ जैन ने बताया कि आजीविका मिशन अंतर्गत समूह सदस्यों को स्वस्थ व व्यक्तिगत स्वच्छता पोषण आहार सम्बन्धी प्रशिक्षण प्रदाय किये जाते हैं, जिससे ग्राम स्तर पर पोषण सम्बन्धी आने वाली समस्याओं का स्थानीय स्तर पर ही समाधान किया जा सके।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

चावल अनुसंधान विशेष कर आदिवासी बाहुल्य क्षेत्र में उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ाने नए शोध की आवश्यकता

रीवा। भारतीय चावल अनुसंधान संस्थान हैदराबाद में राष्ट्रीय कार्यशाला डायमंड जुबली के रूप में हैदराबाद में 26 से 28 अप्रैल को आयोजित की जा रही है उसमें देश के विभिन्न संस्थाओं के कृषि वैज्ञानिक एवं अंतरराष्ट्रीय वैज्ञानिकों ने बढ़ती हुई आबादी एवं सीमित संसाधन और घटते हुए खेती योग्य भूमि को दृष्टिगत रखते हुए चावल अनुसंधान विशेष कर आदिवासी बाहुल्य क्षेत्र में उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ाने के लिए नए शोध की आवश्यकता है जिससे की पोषण की समस्या खासतौर से जिंक आयरन जैसी तत्वों का समावेश किस्मो में किया जाए जिससे कि स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव पड़े और उत्पादकता उत्पादन भी बढ़ाया सके वातावरण परिवर्तन को दृष्टिगत रखते हुए क्षेत्रीय स्तर पर वहां के जलवायु एवं भूमि के अनुरूप शोध किया जाए तथा ऐसी किस्में विकसित की जाए जो कम समय में पक के अच्छी उत्पादकता के साथ कृषकों की मालिहालत को सुधारने में योगदान दें तथा बीमारी एवं कीटों की प्रति रोग रोधी हो इस बात पर विशेष बल दिया गया है की 60% आबादी पूरे देश में चावल पर निर्भर है जिसमें ग्लाइसिन इंडेक्स जो एक बहुत महत्वपूर्ण कारक होता है उसे कम किया जाए ताकि डायबिटीज जैसी समस्याओं से भी निजात मिल सके ऐसी किस्में विकसित की जाए जो उच्च तापक्रम , सूखा के प्रति अवरोधी हो । कम पानी में वह अच्छा उत्पादन दे सके और कृषकों को आर्थिक लाभ मिल सके प्रमुख बीमारियां जिसे लिफ़ ब्लास्ट, बैक्टीरिया बलाइट, सीथ बलाइट फॉल्स स्मार्ट और कीट विशेष रूप से लीफ फोल्डर, गंधी बग, तना छेदक और फुदका जैसे महत्वपूर्ण नुकसान करने वाले कीटों की रोकथाम पर भी व्यापक चर्चा की गई राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय पर स्तर पर विशेष शोध की आवश्यकता है जिससे जैविक संसाधनों का उपयोग करते हुए पर्यावरण संरक्षण संवर्धन की दिशा में काम हो सके और कम रसायनों का प्रयोग हो जिससे कि हमारा पर्यावरण भी सुरक्षित रहे।

वैज्ञानिक सलाहकार समिति की बैठक आयोजित

दतिया। कृषि विज्ञान केन्द्र दतिया की 35वीं वैज्ञानिक सलाहकार समिति की बैठक का आयोजन ऑनलाईन/ऑफलाईन माध्यम से किया गया। बैठक का शुभारंभ मां सरस्वती पूजन के साथ किया गया तदुपरांत डॉ. अवधेश सिंह वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं केन्द्र प्रमुख द्वारा बैठक में आये हुये समस्त अतिथियों के लिये स्वागत उद्बोधन किया गया। बैठक में डा. वाय.पी. सिंह निदेशक विस्तार सेवायें ने अध्यक्षता, डॉ. एस.एस तोमर अधिष्ठाता कृषि महाविद्यालय ग्वालिय मुख्य अतिथि, डॉ. एस.आर.के. सिंह, निदेशक अटारी जबलपुर विशिष्ट अतिथि के रूप में एवं डॉ. ए. राउत अटारी जबलपुर एवं रिंग कृषि विज्ञान केन्द्र ग्वालियर, शिवपुरी, लहार, मुरैना के केन्द्र प्रमुखों द्वारा ऑनलाईन सहभागिता की गई साथ ही बैठक में कृषि, उद्यानिकी, पशुपालन, मत्स्पालन सहित अन्य विभाग के अधिकारियों एवं जिले के प्रगतिशील कृषकों ने केन्द्र पर उपस्थित होकर सहभागिता की। केन्द्र के वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. एस.के. सिंह ने केन्द्र की रबी 2024-25 में की गई गतिविधियों एवं आगामी खरीफ 2025 में किये जाने वाले कार्यक्रमों को विस्तार से प्रिंजेंटेशन के माध्यम प्रस्तुत किया।

इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय तथा आई.आई.टी., भिलाई के बीच हुआ पांच वर्षीय समझौता

रायपुर। छत्तीसगढ़ के दो प्रतिष्ठित शिक्षा संस्थान इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय और भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आई.आई.टी.), भिलाई शिक्षा, शोध तथा प्रौद्योगिकी विकास के क्षेत्र में मिलकर काम करेंगे। दोनों संस्थानों के विद्यार्थियों के प्रशिक्षण, गुणवत्तापूर्ण स्नातकोत्तर शोध, संकाय शोध तथा अनुसंधान एवं प्रौद्योगिकी विकास की संयुक्त परियोजनाओं के क्रियान्वयन हेतु यहां दोनों संस्थानों के मध्य पांच वर्षीय समझौता किया गया। समझौता ज्ञापन पर इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. गिरीश चंदेल और भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, भिलाई के निदेशक डॉ. राजीव प्रकाश ने हस्ताक्षर किये। प्रदेश के दो उत्कृष्ट शिक्षा संस्थानों के बीच हुए समझौते से राज्य में शोध, अनुसंधान, नवाचार और प्रौद्योगिकी विकास को नई दिशा मिलेगी। इस अवसर पर भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आई.आई.टी.), भिलाई एवं छत्तीसगढ़ बायोटेक प्रमोशन सोसायटी के मध्य स्टार्टअप इन्क्यूबेशन एवं प्रौद्योगिकी विकास में सहयोग हेतु भी समझौता ज्ञापन किया गया।

12/2025-26

पोषण वाटिका मिटायेगा कुपोषणः डॉ. मिश्रा

ग्वालियर। राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय के कृषि विज्ञान केन्द्र, ग्वालियर द्वारा पोषण अभियान के तहत पोषण पखवाड़ा का आज समापन हो गया यह पखवाडा 8 से 22 के मध्य चला। केन्द्र की वरिष्ठ वैज्ञानिक डा. रीता मिश्रा ने बताया कि घर में बनाई गई पोषण वाटिका कुपोषण को दूर करने का एक अच्छा विकल्प है। पोषण वाटिका से तात्पर्य है कि गांव व शहर में रहने वाले परिवार अपने घर में एक छोटी सी जगह में फल सब्जी जैविक पद्धति से उगाये और उन्हें अपने आहार में शामिल करे और वे पौष्टिक होती है और शरीर को पोषण प्रदान करने में सहायक होती है। एक तो हम पोषित आहार मिलता है और आर्थिक रूप से हमें मददगार होती है। आपको यहां पर बता दे कि केन्द्र द्वारा द्वारा पोषण वाटिका द्वारा खाद्य एवं पोषण सुरक्षा, आहार में विविधता तथा कृषि एवं पोषण वाटिका आधारित पोषण प्रबंधन मॉडल के माध्यम से पांच वर्ष की आयु के छोटे बच्चों, किशोरी बालिकाओं तथा गर्भवती व धात्री महिलाओं में कुपोषण का प्रबंधन करने के लिए विभिन्न गतिविधियों का आयोजन किया गया। यह कार्यक्रम केन्द्र के वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रमुख डॉ.एस.एस. कुशवाहा के मार्गदर्शन में आयोजित किया गया। पोषण पखवाड़े के दौरान कृषि विज्ञान केन्द्र, ग्वालियर द्वारा आयोजित गतिविधियों में स्थानीय स्तर पर उपलब्ध पोषण संसाधनों को बढ़ावा देने के लिए तथा कृषि एवं पोषण आधारित प्रशिक्षण, महिला सगं ोष्ठी तथा पोषण कार्यशाला, इत्यादि कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। न्यटू ्री स्मार्ट गांव के साथ-साथ जिले के विभिन्न गांवों में स्वादिष्ट एवं पौष्टिक भोजन विकल्पों को बढ़ावा देने के लिए महिलाओं को प्रशिक्षित एवं जागरूक किया गया जिसमें लगभग 160 किशोरी बालिकाओं, ग्रामीण महिलाओं एवं आंगनवाड़ी कार्यकत्ताओं की भागीदारी रही। डा. मिश्रा ने बताया कि घर के आस-पास पोषण वाटिका निर्माण से खाद्य एवं पोषण सुरक्षा प्राप्त की जा सकती है। यह ग्रामीण स्तर पर कुपोषण को कम करने के लिए एक अच्छा विकल्प है। परिवार के सदस्यों के अनुसार 100 से 250 वर्गमीटर क्षेत्रफल में पोषण वाटिका स्थापित करके परिवार की दैनिक फलों व सब्जियों विशेषकर हरी पत्तेदार तथा अन्य पौष्टिक सब्जियों की आवश्यकता को परू ा किया जा सकता है। साथ ही उन्होने बताया कि आहार में विविधता द्वारा विभिन्न खाद्य समूहों से आवश्यक पोषक तत्वों को आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। प्रतिभागियों को मोटे अनाजों के उत्पादन तथा इससे बनने वाले विभिन्न पौष्टिक व स्वादिष्ट व्यंजनों को भोजन में शामिल करने हेतु जागरूक किया गया। कृषि एवं पोषण के सम्बन्ध को खेत से लेकर पोषणयुक्त भोजन थाली तक लाने के महत्व को भी विभिन्न उदाहरणों के साथ समझाया गया। कार्यक्रम में स्थानीय स्तर पर उपलब्ध सहजन के पौष्टिक एवं औषधीय महत्व के साथ सहजन की पत्ती एवं फली से बनने वाले विभिन्न स्वादिष्ट खाद्य पदार्थो के निर्माण पर भी प्रकाश डाला गया। कृषक महिलाओं एवं किशोरी बालिकाओं को पोषण हेतु जागरूक करने हेतु केन्द्र के वैज्ञानिकों डा. रश्मि वाजपेयी, डा.अमिता शर्मा, डॉ. जितेन्द्र राजपूत, डा. एस.सी. श्रीवास्तव तथा महिला बाल विकास विभाग के परियोजना अधिकारी ज्ञानेन्द्र कुमार शर्मा, ई.ए.आई.आई. के रजनीश सक्सेना आदि के व्याख्यानों द्वारा, पोस्टर प्रदर्शन, पोषण रंगोली निर्माण, पोषण प्रश्नोत्तरी जैसे अनेक कार्यक्रमों से पोषण पखवाड़े का सफल आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम में केन्द्र के समस्त वैज्ञानिक व स्टॉफ, महिला बाल विकास विभाग, ब्रिटेनिया न्यूटीशन फाउंडेशन एवं अन्य सम्बन्धित सस्थांओं का भरपूर सहयोग रहा।

केवीके जावरा द्वारा कृषि खेती पर रोजगारपरक प्रशिक्षण का आयोजन

रतलाम। कृषि विज्ञान केंद्र जावरा जिला 5 डिवीज़न ग्रामीण ग्रामीण युवा-युवाओं द्वारा रोजगारपरक प्रशिक्षण कार्यक्रम डॉ. सर्वेश त्रिया, वृद्ध वैज्ञानिक एवं प्रमुखों का मार्ग दर्शन किया गया। जिसमें डॉ. सी.आर. कांतवा, विषय वस्तु विशेषज्ञ (शस्य विज्ञान) द्वारा कृषि उपकरण पर प्रशिक्षण दिया गया। जिसमें डॉ. कांटवा द्वारा बताया गया कि ग्रामीण युवा युवा जोखाने का काम करते हैं, बागवानी के साथ-साथ बागवानी के साथ-साथ मछली पालन, बकरी पालन, पालन, मत्स्यपालन, पशुपालक, अजोला फार्मिंग, वर्मी कम्पोस्ट, बाउण्ड्री चाक आदि के बारे में, बाउंड्री पर घास आदि के बारे में जानकारी प्रदान की और प्रशिक्षण दिया। कृषि विज्ञान केंद्र के डॉ. के दौरान प्रशिक्षण कार्यक्रम बरखा शर्मा, डॉ. रामधन घोषवा, डॉ. रोहताश सिंह श्रमिक, डॉ. सुशील कुमार, एवं डॉ. शीशराम जाखड़ ने अपने - अपने विषय से संबंधित व्याख्यान नीचे दिए। प्रशिक्षण उक्त कार्यक्रम में 20 प्रशिक्षणार्थियों ने भाग लिया।

अक्षिता एग्रो

राघवेन्द्र सिंह
8959728253
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता
हमारे यहां सभी प्रकार के बीज एवं कीटनाशक दवाएं एवं खरपतवार नाशक दवाएं और अधिक उपज की दवाएं उचित दामों पर मिलती हैं
पता : अरैया रोड, आंतरी, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
01/203-24

आवरण फसलें और हरी खाद: स्थायी कृषि की नई दिशा

रुचिका चौधरी शोध छात्रा (सस्य विज्ञान)
उमेश पटले शोध विद्यार्थी (सस्य विज्ञान)
रोहित राठौड़ शोध विद्यार्थी (मृदा विज्ञान),
राजमाता विजयराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

निधि त्रिपाठी शोध छात्रा (मृदा विज्ञान),
रानी लक्ष्मीबाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय झांसी

आज की बदलती जलवायु, घटती उपजाऊ भूमि और बढ़ते रासायनिक उपयोग के चलते कृषि जगत एक बड़े संकट से जूझ रहा है। ऐसे समय में "स्थायी कृषि" (Sustainable Agriculture) की आवश्यकता पहले से कहीं अधिक हो गई है। इस दिशा में दो महत्वपूर्ण उपाय हैं- आवरण फसलें (Cover Crops) और हरी खाद (Green Manure)। ये दोनों न केवल भूमि की उर्वरता को बनाए रखने में सहायक हैं, बल्कि पर्यावरण संरक्षण, जल संरक्षण, कीट प्रबंधन और किसानों की आमदनी बढ़ाने में भी अहम भूमिका निभाते हैं।

आवरण फसलें: परिभाषा और प्रकार

आवरण फसलें वे फसलें होती हैं जो मुख्य फसल के अलावा उगाई जाती हैं, ताकि मिट्टी की नमी और उर्वरता को बनाए रखा जा सके। इनमें मूंग, उड़द, चना और अल्फाल्फा जैसी फसलें शामिल होती हैं। ये फसलें नाइट्रोजन स्थिरीकरण, मिट्टी के क्षरण को रोकने और खरपतवार नियंत्रण में मदद करती हैं। **इसके अतिरिक्त, आवरण फसलों के प्रकार निम्नलिखित हैं-**

दलहनी आवरण फसलें: जैसे मूंग, उड़द, सोयाबीन, जो नाइट्रोजन स्थिरीकरण में सहायक होती हैं।

- **अनाज आधारित आवरण फसलें:** जैसे जौ, बाजरा, जो मिट्टी के कटाव को रोकने में मदद करती हैं।
- **तिलहनी आवरण फसलें:** जैसे सरसों, अलसी, जो जैव विविधता को बढ़ाने में मदद करती हैं।

आवरण फसलें: मिट्टी की सुरक्षा कवच

- आवरण फसलें वे फसलें होती हैं जिन्हें मुख्य फसल की बुआई के बीच में बोया जाता है। इनका उद्देश्य भोजन उत्पादन नहीं, बल्कि मिट्टी को ढककर उसकी रक्षा करना होता है।

मुख्य लाभ

- **मिट्टी का क्षरण रोकना:** बारिश और तेज हवाओं से मिट्टी के कटाव को आवरण फसलें रोकती हैं।
- नाइट्रोजन स्थिरीकरण: मटर, मूँगफली, बरसीम जैसी दलहनी फसलें नाइट्रोजन को वायुमंडल से लेकर मिट्टी में स्थिर करती हैं।
- **खरपतवार नियंत्रण:** आवरण फसलें खरपतवारों को उगने नहीं देतीं, जिससे रासायनिक दवाओं का उपयोग घटता है।
- **मिट्टी की संरचना में सुधार:** जड़ों की गहराई से मिट्टी को भुरभुरी बनाकर जलधारण क्षमता को बढ़ाती हैं।

5.कीट और रोग नियंत्रण: कुछ आवरण फसलें प्राकृतिक रूप से कीट-प्रतिरोधक होती हैं।

लोकप्रिय आवरण फसलें

दलहनी: बरसीम, लूसर्न, मूँग
घास प्रजाति: राई ग्रास, ओट्स
तेलहन: सरसों (कुछ क्षेत्रों में)

हरी खाद: हरियाली से उपजाऊ भूमि

हरी खाद के लिए उगाई जाने वाली फसलें मिट्टी में आवश्यक पोषक तत्व जोड़ने का कार्य करती हैं। इन्हें मुख्य फसल से पहले या बाद में उगाया जाता है और मिट्टी में मिलाकर जैविक खाद तैयार की जाती है। यह प्रक्रिया न केवल रसायनों के उपयोग को घटाती है, बल्कि मिट्टी की संरचना को भी सुधारती है। हरी खाद में ऐसी फसलें उगाई जाती हैं जिन्हें बाद में जुताई करके मिट्टी में मिला दिया जाता है। यह जैविक खाद का एक प्रमुख स्रोत है जो रासायनिक उर्वरकों का प्राकृतिक विकल्प बनता है।

हरी खाद के लाभ

1.उर्वरता में वृद्धि: हरी खाद मिट्टी में जैविक पदार्थ, नाइट्रोजन और सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ाती है।

2. मिट्टी की नमी बनाए रखना: मिट्टी में जीवांश तत्वों की वृद्धि से उसकी नमी बनाए रखने की क्षमता बढ़ती है।

3. पानी का बेहतर उपयोग: बेहतर संरचना और भुरभुरेपन से जल अधिक देर तक मिट्टी में टिकता है।

4. मिट्टी में जैव विविधता को बढ़ावा: केंचुए और सूक्ष्मजीवों के लिए बेहतर वातावरण तैयार होता है।

5. दीर्घकालिक लाभ: भूमि की उत्पादकता लंबे समय तक बनी रहती है।

प्रचलित हरी खाद फसलें

- सन (साण), ढैंचा, खेसारी, मूंग, उरद, बरसीम

टिकाऊ कृषि की दिशा में कदम

आवरण फसलें और हरी खादें कृषि को आत्मनिर्भर और टिकाऊ बनाने के लिए आवश्यक कदम हैं। **इनके प्रयोग से निम्नलिखित फायदे प्राप्त हो सकते हैं:**

चुनौतियां और समाधान

इन तकनीकों के व्यापक उपयोग में किसानों को जागरूकता की कमी, शुरुआती निवेश और उपयुक्त जानकारी की आवश्यकता होती है। समाधान के रूप में:

- कृषि प्रशिक्षण और कार्यशालाओं का आयोजन।
- सरकारी योजनाओं के माध्यम से आर्थिक सहायता।
- शोध और विकास में निवेश, जिससे नई और प्रभावी तकनीकों का विकास हो।
- डिजिटल तकनीकों का उपयोग, जिससे जानकारी का प्रसार हो सके।

आर्थिक और पर्यावरणीय दृष्टिकोण

कृषकों के लिए लाभ

- रासायनिक उर्वरकों की लागत में कमी
- भूमि की दीर्घकालिक उपज बढ़ती है
- कम सिंचाई की आवश्यकता
- बाजार निर्भरता घटती है

पर्यावरण के लिए लाभ

- जलस्रोतों का संरक्षण
- कीटनाशकों और उर्वरकों के कारण होने वाले प्रदूषण में कमी
- जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों से कुछ हद तक सुरक्षा
- जैव विविधता में वृद्धि
- आवरण फसलें और हरी खाद भारतीय कृषि की परंपरागत पद्धतियों का ही एक आधुनिक रूप हैं। ये तकनीकें खेती को अधिक प्राकृतिक, सस्ती और पर्यावरण हितैषी बनाती हैं। आज जब किसान रासायनिक खेती से थक चुके हैं और मिट्टी की उर्वरता तेजी से घट रही है, तब इन दोनों उपायों को अपनाना ही एकमात्र व्यवहारिक समाधान बनता जा रहा है।
- सरकार और कृषि वैज्ञानिकों को चाहिए कि वे किसानों को इन उपायों के लाभों से अवगत कराएं, प्रशिक्षण दें और आवश्यक सहायता प्रदान करें। जब किसान अपनी मिट्टी को पुनर्जीवित करेगा, तब ही भारत आत्मनिर्भर कृषि की दिशा में सशक्त कदम बढ़ा सकेगा।

आवरण फसलें और हरी खादें टिकाऊ कृषि के लिए एक स्थायी समाधान प्रस्तुत करती हैं। इनका उपयोग करके किसान अपनी फसलों की उत्पादकता को बढ़ाने के साथ-साथ पर्यावरण को भी संरक्षित कर सकते हैं। यह पद्धति कृषि को आत्मनिर्भर और सतत विकास की ओर ले जाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। इसके साथ ही, किसानों की आर्थिक स्थिति को सुधारने और कृषि पर होने वाले खर्चों को कम करने में भी यह सहायक हो सकती है। सतत कृषि के लिए यह कदम एक प्रेरणा और नई दिशा की ओर इशारा करता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

✍शुभम शर्मा (Department of Livestock Production and Management)

✍प्रिया पचौरी, योगिता पांडे
(Department of Veterinary Anatomy)
(M.P.)

कुत्तों में डिस्टेंपर: लक्षण, कारण, इलाज और बचाव पर सम्पूर्ण जानकारी

परिचय

कैनाइन डिस्टेंपर (Canine Distemper) कुत्तों में होने वाली एक घातक वायरल बीमारी है, जो उनके सांस, पाचन, त्वचा और तंत्रिका तंत्र को प्रभावित करती है। यह बीमारी न केवल तेजी से फैलती है, बल्कि इलाज में देरी होने पर यह जानवर के जीवन के लिए खतरनाक हो सकती है। डिस्टेंपर इंसानों में नहीं फैलता, लेकिन कुत्तों, लोमड़ियों, भेड़ियों और कुछ अन्य जानवरों को संक्रमित कर सकता है।

वायरस का परिचय

डिस्टेंपर वायरस का वैज्ञानिक नाम है- Canine Distemper Virus (CDV), यह परामिक्सोवायरस (Paramyxoviridae) परिवार से संबंधित है–जो इंसानों में खसरा (measles) फैलाने वाले वायरस से संबंधित है, यह वायरस शरीर के multiple organ systems को प्रभावित करता है, जिससे इसके लक्षण बेहद विविध होते हैं।

फैलाव के तरीके

डिस्टेंपर वायरस कुत्तों के शरीर से निकलने वाले स्राव (secretions) से फैलता है- संक्रमित कुत्ते की नाक या मुंह से निकले स्राव से, हवा में तैरते वायरस कणों के जरिए, खिलौनों, खाने के बर्तन, पानी के बाउल आदि से, संक्रमित मां से उसके पिल्लों में, वायरस वस्त्र, हाथ या जूतों के ज़रिए भी अप्रत्यक्ष रूप से फैल सकता है

महत्वपूर्ण: वायरस वातावरण में कुछ घंटों से लेकर कुछ दिनों तक जीवित रह सकता है, विशेष रूप से ठंडी और नम जगहों पर।

संभावित लक्षण (Phases of Symptoms)

डिस्टेंपर के लक्षण धीरे-धीरे अलग-अलग चरणों में सामने आते हैं। यह बीमारी कई अंगों को प्रभावित करती है, इसलिए लक्षण अलग-अलग हो सकते हैं:

1. **प्रारंभिक चरण (Respiratory & Digestive Symptoms):** बुखार (103°F–106°F तक), आँखों और नाक से पानी या पीला/सफेद स्राव, खांसी और छींक, भूख कम लगना, सुस्ती और कमजोरी, उल्टी और दस्त।

2. **त्वचा एवं अन्य लक्षण:** त्वचा पर मोटे धब्बे या रैश, पंजों और नाक की त्वचा कठोर हो जाना (Hard Pad Disease)

3. **तंत्रिका तंत्र प्रभावित होने पर (Neurological Symptoms):** दौरे (seizures), सिर हिलना या झटके आना (head tilt, tremors), संतुलन की कमी, अजीब व्यवहार या चक्कर खाना, लकवा (paralysis) जैसे लक्षण

› **नोट:** कुछ कुत्तों में तंत्रिका संबंधी लक्षण महीनों बाद भी दिखाई दे सकते हैं।

जोखिम में कौन-कौन से कुत्ते आते हैं? - 6 हफ्ते से कम उम्र के पिल्ले, बिना टीकाकरण वाले कुत्ते, अस्वच्छ जगहों पर रहने वाले कुत्ते (सड़क या केनल्स), कमजोर रोग प्रतिरोधक क्षमता वाले कुत्ते

परीक्षण और निदान

डिस्टेंपर का निदान पशु चिकित्सक द्वारा निम्न तरीकों से किया जाता है: रक्त परीक्षण (CBC): संक्रमण के संकेतों को देखना, PCR टेस्ट: वायरस के डीएनए की पहचान, Serology (Antibody test), Cerebrospinal fluid analysis (अगर तंत्रिका लक्षण हों)।

इलाज

डिस्टेंपर वायरस का कोई सीधा एंटीवायरल इलाज नहीं है, लेकिन supportive treatment से जान बचाई जा सकती है:

1. **Fluid Therap4:** डिहाइड्रेशन को रोकने के लिए IV fluids

2. **दवाइयाँ:** बुखार, उल्टी, दस्त के लिए लक्षण आधारित दवाएं, सेकेंडरी बैक्टीरियल संक्रमण रोकने के लिए एंटीबायोटिक, दौरे या न्यूरोलॉजिकल लक्षणों के लिए एंटी-सीजर दवाएं, दर्द और सूजन के लिए NSAIDs (पशु चिकित्सक की निगरानी में)।

3. **पोषण:** हल्का, सुपाच्य आहार, कभी-कभी बलपूर्वक भोजन देना पड़ सकता है

4. **आइसोलेशन:** संक्रमण को फैलने से रोकने के लिए कुत्ते को अलग रखना अनिवार्य

बचाव ही सबसे बेहतर उपाय

1. **टीकाकरण:** 6-8 हफ्ते की उम्र में पहला डिस्टेंपर टीका, फिर हर 3-4 सप्ताह में बूस्टर, 16 सप्ताह के बाद वार्षिक बूस्टर, कुत्ते को ले जाते समय वैक्सीनेशन कार्ड जरूर साथ रखें।

2. **स्वच्छता और खानपान:** साफ-सुथरा और हवादार वातावरण, पौष्टिक आहार और नियमित व्यायाम, समय-समय पर पशु चिकित्सक से चेकअप

क्या डिस्टेंपर से पीड़ित कुत्ता ठीक हो सकता है?

हां, लेकिन यह बीमारी की गंभीरता, इलाज में लगने वाला समय, और कुत्ते की उम्र व इम्युनिटी पर निर्भर करता है। कुछ मामलों में तंत्रिका संबंधी लक्षण ठीक नहीं हो पाते और कुत्ते को जीवनभर दिक्कत रह सकती है। इसलिए जल्दी पहचान और उपचार बहुत जरूरी है।

निष्कर्ष

डिस्टेंपर एक गंभीर, संक्रामक और जानलेवा रोग है जो एक ही समय में कुत्ते के कई अंगों को नुकसान पहुंचा सकता है लेकिन समय पर टीकाकरण और सतर्कता के जरिए इसे 100% रोका जा सकता है। यदि आपका कुत्ता सुस्त दिख रहा है या उपरोक्त लक्षणों में से कोई भी दिखाई दे रहा है तो देर न करें, तुरंत किसी योग्य पशु चिकित्सक से संपर्क करें।

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

डॉ. ए. एस. परिहार एवं डॉ. एस.एस. माहौर
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय महू (म.प्र.)

पालतू पशुओं का प्राथमिक उपचार

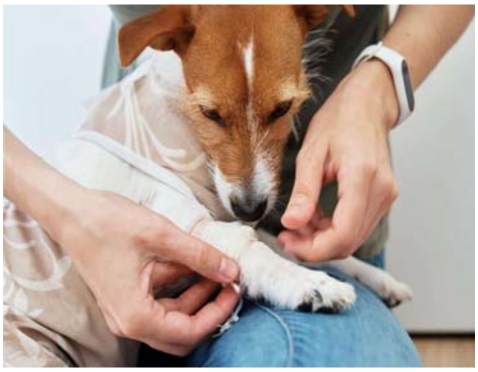

गावों में पशुपालन आजीविका का मुख्य आधार है। लेकिन कई बार जब कोई आपात स्थिति आती है जैसे कि पशु को चोट लगना, सांप काटलेना, गैस बनना, गर्भाशय गिरना, या प्रसव में कठिनाई, तो समय पर सही निर्णय और प्राथमिक उपचार न होने से पशु की जान जा सकती है।

एक प्रशिक्षित पशु चिकित्सक द्वारा इलाज सबसे उत्तम होता है, लेकिन जब तक डॉक्टर नहीं पहुंचे, तब तक कुछ प्राथमिक उपचार जान कर पशु पालक, पशु की जान बचा सकते हैं व आर्थिक नुकसान से बच सकते हैं।

महत्वपूर्ण प्राथमिक उपचार

1. चोट लगने पर

- घाव को साफ पानी या हल्के एंटीसेप्टिक से धोएं।
- टिंचर आयोडीन या पोटेशियम परमेगनेट का हल्का घोल लगाएं।
- गहरा घाव होने पर पट्टी करें और पशुचिकित्सक से परामर्श लें।

2. गैस बनना

- तुरन्त पशु को चलाएं।
- थोड़ी मात्रा में सरसों का तेल या अदरक का रस गर्म पानी में मिला कर पिलाएं।

3. गर्भाशय बाहर आना

- साफ गीले कपड़े से ढकें, गंदगी न लगने दें।
- खुद से वापस डालने की कोशिश न करें, तुरन्त वेटरिनरी सर्जनको बुलाएं।

4. साँप या विषैले कीड़े का काटना

- काटे गए स्थान को ऊपर बांधें, ताकि जहर पूरे शरीर में न फैले।
- बर्फ लगाएं और तुरंत डॉक्टर से संपर्क करें।

5. हड्डी टूटना

- पशु को हिलाएं नहीं।
- लकड़ी की पट्टी से प्रभावित अंग को स्थिर करें और डॉक्टर को बुलाएं।

6. अचानक गिर जाना

- मुँह में गन्ना या गुड़ का रस डालें, कभी-कभी ब्लड शुगर की कमी होती है।
- बुखार या इंफेक्शन की संभावना पर डॉक्टर की मददलें।

क्या न करें

- बिना डॉक्टर की सलाह के इंजेक्शन न लगाएं।
- पुराने देसी नुस्खों से गंभीर बीमारी का इलाज न करें।
- पालतू और उत्पादन पशुओं में अंतर समझें, एक ही दवा सभी के लिए नहीं होती।

निष्कर्ष

- प्राथमिक उपचार का उद्देश्य पशु को स्थिर रखना और समय पर सही इलाज तक पहुंचाना होताहै। एक जागरूक पशु पालक छोटी जानकारी से बड़े नुकसान को रोक सकता है।लेकिन प्राथमिक उपचार केवल पहला कदम है, पशु चिकित्सक की सलाह लेना अनिवार्य है।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

रश्मिता सोनारे (पीएचडी स्कॉलर) विस्तार शिक्षा विभाग, ज.ने.कृ.वि.वि. जबलपुर (म.प्र.)

चेतना पाठक (पीएचडी स्कॉलर) विस्तार शिक्षा विभाग, ज.ने.कृ.वि.वि. जबलपुर (म.प्र.)

डॉ. सीमा नबेरिया (सहायक प्राध्यापक) विस्तार शिक्षा विभाग, ज.ने.कृ.वि.वि. जबलपुर

डॉ. कामिनी बिष्ट (सहायक प्राध्यापक) विस्तार शिक्षा विभाग, ज.ने.कृ.वि.वि. जबलपुर

बायोचार : टिकाऊ कृषि हेतु एक मृदा संशोधन

परिचय

वर्ष 2050 तक विश्व की जनसंख्या 9.2 बिलियन होने का अनुमान है, जिसके लिए कृषि उत्पादन में 70% वृद्धि की आवश्यकता होगी। सीमित भूमि पर उच्च उत्पादन और अकृष्य भूमि के उपयोग से पर्यावरण पर गंभीर प्रभाव पड़ता है। इस संदर्भ में, मृदा वैश्विक कार्बन संचय का एक महत्वपूर्ण स्रोत है, जो घास के मैदानों के क्षेत्रफल पर निर्भर करता है। मृदा में कार्बन संचय वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड को स्थिर कर दीर्घकालिक भंडारण का एक प्रभावी तरीका है, जो मृदा स्वास्थ्य सुधारने और ग्लोबल वार्मिंग को कम करने में मदद करता है।

बायोचार क्या है?: बायोचार, जिसे जैविक चारकोल भी कहा जाता है, एक कार्बन-समृद्ध पदार्थ है जो पौधों के अवशेष, लकड़ी, फसल अपशिष्ट, और अन्य जैविक सामग्री को ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में उच्च तापमान पर अपघटन (पायरोलिसिस) की प्रक्रिया द्वारा तैयार किया जाता है। यह प्रक्रिया हानिकारक गैसों के उत्सर्जन को कम करती है और पर्यावरण के अनुकूल ऊर्जा प्राप्त करती है। बायोचार में उच्च स्तर का कार्बन होता है, जो इसे मृदा में लंबे समय तक स्थिर बनाए रखता है।

बायोचार का ऐतिहासिक संदर्भ: बायोचार की प्रथा हजारों साल पहले अमेजॉन बेसिन में शुरू हुई थी, जहां स्थानीय लोग उपजाऊ मृदा के द्वीप तैयार करते थे। अमेजॉन की "टेरा प्रेटा" काली मृदा के अध्ययन से मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने में इसके अद्वितीय गुण सामने आए हैं। वैज्ञानिकों ने पाया कि बायोचार मृदा की उर्वरता और कार्बन सामग्री को बढ़ाता है। यह मृदा आज भी कार्बन को संरक्षित रखती है।

बायोचार उत्पादन की प्रक्रिया

सामग्री का चयन: बायोचार उत्पादन के लिए विभिन्न प्रकार की जैविक सामग्री का चयन किया जाता है, जिसमें पौधों के अवशेष, लकड़ी के टुकड़े, फसल अपशिष्ट (जैसे धान का पुआल, गेहूं की भूसी), नारियल के छिलके, गन्ने की खोई, पशु अपशिष्ट और अन्य जैविक कचरा शामिल हैं। चयनित सामग्री की नमी 10-20% से अधिक नहीं होनी चाहिए, ताकि पायरोलिसिस प्रक्रिया सुचारू रूप से हो सके।

तैयारी: चयनित जैविक सामग्री को पहले छोटे टुकड़ों में काटा जाता है और उचित नमी स्तर बनाए रखने के लिए सुखाया जाता है। इससे पायरोलिसिस प्रक्रिया में ऊर्जा की बचत होती है और अधिक कुशलता से बायोचार प्राप्त होता है।

पायरोलिसिस प्रक्रिया: इस चरण में जैविक सामग्री को ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में 400-700°C तापमान पर गर्म किया जाता है। यह प्रक्रिया चारकोल उत्पादन के समान होती है, लेकिन इसमें कार्बन को अधिक स्थिर रूप में संरक्षित किया जाता है। **पायरोलिसिस के दौरान निम्नलिखित उप-उत्पाद बनते हैं:**

बायोचार: ठोस अवस्था में प्राप्त प्रमुख उत्पाद।

बायो-ऑयल: काले या भूरे रंग का तरल उप-उत्पाद।

सिंथेटिक गैस (सिंथ गैस): जो ऊर्जा उत्पादन में सहायक होती है।

शीतलन और संग्रहण: पायरोलिसिस के बाद उत्पन्न बायोचार को नियंत्रित रूप से ठंडा किया जाता है ताकि यह जलकर राख न बन जाए। ठंडा होने के बाद इसे छानकर महीन किया जाता है और संग्रहण के लिए तैयार किया जाता है।

बायोचार का उपयोग: बायोचार को मृदा में मिलाकर इसकी उर्वरता बढ़ाई जाती है। यह जल धारण क्षमता बढ़ाने, कार्बन पृथक्करण में सहायता करने और मृदा स्वास्थ्य सुधारने में मदद करता है। इसके अलावा, इसे पशु आहार में मिलाने, जल शोधन और औद्योगिक कार्बन सामग्री के रूप में भी उपयोग किया जाता है।

बायोचार के फायदे

1.मृदा की गुणवत्ता में सुधार: बायोचार मिट्टी की जलधारण क्षमता को बढ़ाता है, पोषक तत्वों को स्थिर करता है और मृदा के जैविक स्वास्थ्य को बेहतर बनाता है। यह खासतौर पर रेतीली और कम उपजाऊ मिट्टी के लिए फायदेमंद है।

2.कार्बन पृथक्करण: बायोचार कार्बन को मृदा में स्थिर रूप में संग्रहीत करता है, जिससे वायुमंडल में ग्रीनहाउस गैसों की मात्रा कम होती है। यह जलवायु परिवर्तन को कम करने में सहायक है।

3.पौधों की वृद्धि में मदद: बायोचार पौधों की जड़ों को बेहतर पोषण प्रदान करता है और उन्हें रोगों से लड़ने की क्षमता बढ़ाता है। इसके उपयोग से फसल उत्पादन में वृद्धि होती है।

4.पानी की बचत: बायोचार मृदा में पानी को लंबे समय तक बनाए रखता है, जिससे सिंचाई की जरूरत कम होती है। यह जल संकट वाले क्षेत्रों के लिए अत्यंत उपयोगी है।

5.कचरे का प्रबंधन: बायोचार उत्पादन में जैविक कचरे का उपयोग किया जाता है, जिससे कचरे का पुनः उपयोग होता है और पर्यावरण स्वच्छ रहता है।

6.मृदा जैविक गुणों पर प्रभाव: बायोचार मृदा के पीएच में सुधार करता है, जिससे सूक्ष्मजीवों की सक्रियता और विकास के लिए आवास क्षेत्र बढ़ता है।

7.धातुओं का संतुलन: बायोचार के प्रयोग से मृदा में कुल कार्बन, कार्बनिक कार्बन, कुल नाइट्रोजन, उपलब्ध फॉस्फोरस, कैल्शियम, मैग्नीशियम, सोडियम और पोटेशियम जैसे विनिमय योग्य धनायनों की मात्रा में वृद्धि होती है और मृदा में एल्यूमिनियम की सक्रियता घट जाती है।

निष्कर्ष: बायोचार न केवल मृदा उर्वरता बढ़ाने का एक प्रभावी उपाय है बल्कि यह जलवायु परिवर्तन को कम करने और कृषि उत्पादकता बढ़ाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके उपयोग से किसानों की आय बढ़ाने का संभावित मार्ग भी खुलता है। इसलिए, बायोचार को टिकाऊ कृषि प्रणाली का एक अनिवार्य हिस्सा माना जाना चाहिए। बायोचार के अनुसंधान और विकास पर ध्यान केंद्रित करना आवश्यक होगा ताकि इससे अधिकतम लाभ उठाया जा सके। सरकार और संगठनों को इस दिशा में निवेश करना चाहिए ताकि टिकाऊ कृषि प्रथाओं को अपनाया जा सके और पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना किया जा सके।

12/2022-23

रवि सिकरोडिया, दलजीत छाबड़ा
राखी गांगिल, जोयसी जोगी
राकेश शारदा
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय महू (म.प्र.)

पशुओं में डर्मेटोफाइट संक्रमण, लक्षण एवं निदान

पशुओं में फंगस के द्वारा होने वाली एक बिमारी होती है इस रोग को डर्मेटोफाइटोसिस, रिंग वर्म अथवा टीनिया के नाम से भी जाना जाता है । यह बिमारी सभी पशुओं को प्रभावित कर सकती है परन्तु मुख्य रूप से कुत्तों, बिल्ली एवं मनुष्यों में देखने को मिलती है यह गाय एवं अन्य बड़े पशुओं में भी हो सकती है यह फन्जाई मुख्य रूप से शरीर के उन भाग पर मुख्य रूप से होती है जहाँ पर किरेटिन होता है जैसे की बाल, त्वचा, खुर, नाखून आदि यह मुख्यतः ऊपरी सतह को ही प्रभावित करती है इस फन्जाई की 30 से भी अधिक प्रजातियों के बारे में जानकारी प्राप्त है ।

रोग का कारण

इस फंजाई की 30 से भी अधिक प्रजातियों के बारे में जानकारी प्राप्त है परन्तु मुख्यतः तीन प्रजातियाँ ही पशुओं में बिमारी करती है जो की माइक्रोस्पोरम, ट्राईकोफाइटोन एवं एपीडेर्मेटोफाइटोन है । इनमे से माइक्रोस्पोरम एवं ट्राईकोफाइटोन पशुओं में बिमारी करता है जबकि एपीडर्मेटोफाइटोन फ्लोकोसम प्रजाति मुख्य रूप से मनुष्यों में इन्फेक्शन करती है यह इन्फेक्शन पशुओं से मनुष्यों में हो सकता है अतः यह जूनोटिक बीमारी होती है यह एरोबिक प्रकार की फन्जाई जो कि सेप्टेट होती है यह वातावरण में लम्बे समय तक जीवित रह सकती है यह माइक्रोकोनीडीया एवं मैक्रोकोनीडीया भी बनाते है जो कि इनकी पहचान में भी सहायक होते है ।

डर्मेटोफाइट इनके पाए जाने के स्थान एवं होस्ट के प्रकार के कारण अलग -अलग प्रकार के होते है जो की जियोफिलिक, ज़ूफिलिक एवं एन्थ्रोपोफिलिक के रूप में पाए जाते है जियोफिलिक मुख्यतः जमीन में पाए जाते है ज़ूफिलिक पशुओं को इन्फेक्ट करते है मुखतः पशुओं पर पाए जाते है । एन्थ्रोपोफिलिक मुख्यत मनुष्यों को प्रभावित करती है साथ ही यह एक दुसरे को भी इन्फेक्ट कर सकते है।

गोवंशीय पशुओं में डर्मेटोफाइटोसिस संक्रमण

ट्राईकोफाइटेन वेरुकोसम मुख्यतः गोवंशीय पशुओं में डर्मेटोफाइटोसिस संक्रमण करता है सामान्य रूप से बछड़ों में आँख एवं चेहरे लक्षण देखने को मिलता है जबकि बछिया एवं गाय में गर्दन एवं पैर लक्षण देखने को मिलते है प्रभावित पशुओं में त्वचा पर गोलाकार लीजन जहाँ पर बाल भी नहीं होते एवं घाव ग्रे व सफ़ेद क्रस्ट भी बन जाती है संक्रमण मुखतः सर्दी में होता है संक्रम सामान्यतः अपने आप ठीक हो जाता है ।

कुत्तों एवं बिल्ली में डर्मेटोफाइटोसिस संक्रमण

मुख्य रूप से माइक्रोस्पोरम केनिस संक्रमण करता है जिसमें की प्रभावित स्थान पर बाल झड जाते है साथ ही खुजली भी अधिक होती है प्रभावित जगह पर त्वचा भी मोटी हो जाती है डर्मेटोफाइट की अन्य प्रजातियाँ भी इन्फेक्शन कर सकती है जिनमें ट्राईकोफाइटोन मेंटेग्रोफाइट, माइक्रोस्पोरम जिप्सीयम एवं ट्राईकोफाइटोन मेंटेग्रोफाइट की एरीनासि प्रजाति प्रमुख है ।

घोड़ों में डर्मेटोफाइटोसिस संक्रमण

ट्राईकोफाइटोन एक्वानम घोड़ों में डर्मेटोफाइटोसिस संक्रमण करता है माइक्रोस्पोरम एक्वानम एवं ट्राईकोफाइटोन ओटोट्रोफिकम भी पशुओं में इन्फेक्शन करता है इस बीमारी का संक्रमण मुख्य रूप से डायरेक्ट अथवा घोड़ों के हार्नेस और ग्रूमिंग गियर के द्वारा होता है माइक्रोस्पोरम जिप्सीयम का संक्रमण जमीन से होता है चार वर्ष के घोड़े मुख्य रूप से इन्फेक्शन के लिए संवेदनशील होते है ।

पिग्स में डर्मेटोफाइटोसिस संक्रमण

पिग्स में डर्मेटोफाइटोसिस संक्रमण की सम्भावना अत्यधिक कम होती है फिर भी माइक्रोस्पोरम नेनम पिग्स में डर्मेटोफाइटोसिस संक्रमण करता है सभी उम्र के पिग्स में डर्मेटोफाइटोसिस संक्रमण हो सकता है पुरे शरीर पर रिंग जैसे लीजन मिल सकते है ।

मुर्गियों में फेवस

मुर्गियों में माइक्रोस्पोरम गेलीनी मुख्य रूप से इन्फेक्शन करता है जिसे एवीअन रिंगवर्म अथवा फेवस के नाम से भी जाना जाता है मुर्गियों के वेटल अथवा कोंब पर सफ़ेद प्रकार के क्रस्ट बन जाते है कभी कभी फोल्लिकल भी बन सकते है ।

रोग की पहचान

डर्मेटोफाइट की विभिन्न प्रजातियों की पहचान उनकी कॉलोनी के आकार, रंग एवं माइक्रोस्कोप में कोनिडिया के आकृति एवं खंड को देखकर की जाती है अलग-अलग की डर्मेटोफाइट फंजाई के माइक्रोकोनिडिया भी अलग-अलग आकार के होते है जैसे की माइक्रोस्पोरम केनिस के स्पिंडल आकर के साथ 15 सेपटा से विभाजित हो सकते है। माइक्रोस्पोरम जिप्सीयम में बोट के आकार के माइक्रोकोनिडिया होते है जो की 6 सेपटा से विभाजित हो सकते है । माइक्रोस्पोरम नेनम पीअर के आकार के होते है जिसमें की एक सेपटा तक पाया जाता है । लेक्टोफीनोल स्टैनिंग का उपयोग किया जाता है इसके अलावा माइक्रोस्पोरम केनिस की पहचान के लिए वुड्स लैंप का प्रयोग कर सकते है हेयर परफ़ोरेसन टेस्ट भी प्रजातियों में अन्तर करने के लिए किया जाता है ।

जय शीतला खाद बीज भण्डार
उच्च क्वालिटी के बीज, कीटनाशक दवाईयां एवं खाद के थोक व खेरीज विक्रेता
विवेक सिंह (लोहगढ़ वाले)
मोबाइल : 9425116760, 7000820097
आई.सी.आई.सी.आई. बैंक के पास, जवाहरगंज, डबरा, जिला-ग्वालियर
03/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

ड्रोन तकनीक: कृषि के लिए वरदान

नीलम बुनकर, एम.एल. जादव
कृषि महाविद्यालय इंदौर, आरवीएसकेवीवी, ग्वालियर

एच.एस. भदौरिया कृषि महाविद्यालय
ग्वालियर, आरवीएसकेवीवी, ग्वालियर (म.प्र.)

परिचय

ड्रोन तकनीक कई सालो से ही कृषि में नवाचार कर रही है। हालाँकि, 2000 के दशक तक इनका व्यापक रूप से उपयोग नहीं किया गया था। ड्रोन ने खेती के एक नए युग की शुरुआत की और आधुनिक कृषि को अगले स्तर पर ले जाने वाले इमेजिंग और स्वचालित फ़ील्ड मॉनिटरिंग जैसी सुविधाएँ उपलब्ध करवाई है। वर्तमान समय में ड्रोन किसानों के लिए आवश्यक उपकरण हैं, जो सटीक कृषि कार्यों के लिए आवश्यक डेटा और विश्लेषण प्रदान करते हैं। जलवायु परिवर्तन और पर्यावरण प्रदूषण आज विश्व स्तर पर महत्वपूर्ण चुनौती हैं, जो कृषि उत्पादकता को बुरी तरह प्रभावित कर रहे हैं। पारंपरिक कृषि पद्धतियों में वनों की कटाई, जीवाश्म ईंधन का दहन, ग्लोबल वार्मिंग में वृद्धि और इससे संबंधित कई प्रभाव शामिल हैं। सतत कृषि पद्धति, पर्यावरण प्रदूषण और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने मे मददगार है, जिससे जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम किया जा सकता है। पारंपरिक कृषि प्रणालियों में किसान अत्यधिक और अंधाधुंध मात्रा में उर्वरकों, कीटनाशकों और अन्य कृषि रसायनों का उपयोग करते हैं। उर्वरकों की यह अतिरिक्त मात्रा फसलों द्वारा पूरी तरह से उपयोग नहीं की जा सकती है, जिसके परिणामस्वरूप पर्यावरण प्रदूषण और ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन होता है। इसलिए, सतत कृषि को मजबूत करने के लिए स्वच्छ और पर्यावरण के अनुकूल प्रौद्योगिकियों की बहुत आवश्यकता है। इस संदर्भ में, ड्रोन या मानव रहित हवाई वाहन (AV), इस उद्देश्य के लिए वरदान हैं। ड्रोन ऑटोपायलट और GPS निर्देशों का उपयोग करके स्वायत्त रूप से संचालित हो सकते हैं या रेडियो सिग्नल तथा स्मार्टफोन एप्लिकेशन के माध्यम से मैन्युअल रूप से नियंत्रित किए जा सकते हैं और वे दृश्यमान स्पेक्ट्रम से परे घटनाओं का पता लगाने में में भी सक्षम होते हैं। वर्तमान समय में, किसानों को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जैसे कि श्रम की कमी या उच्च श्रम लागत, उर्वरकों और कीटनाशकों के संपर्क में आकर स्वास्थ्य जोखिम और कीड़ों या जानवरों से खतरा। ड्रोन इन विषयों में भलीभाँति किसानों की सहायता कर सकते हैं। आज, ड्रोन को कृषि के अभिन्न अंग के रूप में पहचाना जा रहा है और यह सतत खेती के तरीकों में योगदान देता है। कृषि कार्यों में आवश्यकता के अनुसार विभिन्न सेंसर को ड्रोन से जोड़ा जा सकता है। **चित्र में कृषि क्षेत्रों में ड्रोन के अनुप्रयोग को दर्शाता है। कृषि क्षेत्र में ड्रोन के विभिन्न अनुप्रयोग हैं जैसे-**

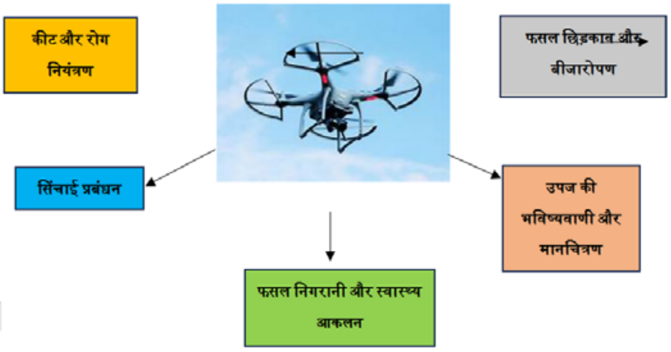

चित्र 1:- कृषि क्षेत्रों में ड्रोन के अनुप्रयोग

छिड़काव के लिए ड्रोन के उपयोग के दौरान विचार किए जाने वाले कारक- 1. फसल और क्षेत्र की प्रकृति 2. ड्रोन की तकनीकी क्षमताएं 3. मौसम और पर्यावरणीय स्थितियां 4. छिड़काव के लिए उपयोग होने वाले रसायन 5. सुरक्षा और संचालन के नियम 6. ड्रोन की मेंटेनेंस और निरीक्षण 7. लागत और समय का प्रबंधन 8. डेटा और ऑटोमेशन का उपयोग

ड्रोन तकनीक का उपयोग खेती में न केवल छिड़काव और निगरानी के लिए किया जा रहा है, बल्कि अब इसे ड्रोन तकनीक की मदद से उगाई जाने वाली फसलो के रूप में भी विकसित किया जा रहा है। ड्रोन का उपयोग खेती के हर चरण को कुशल और सटीक बनाने के लिए किया जा सकता है। नीचे सारणी में ड्रोन तकनीक से प्रभावी रूप से उगाई जाने वाली फसलों की जानकारी दी गई है

फसल	ड्रोन का उपयोग
धान (चावल)	* बीज बोने और उर्वरक छिड़कने में।
	* जल प्रबंधन और पौधों के स्वास्थ्य की निगरानी हेतु।
गेहूं	* उर्वरक और कीटनाशक के सटीक छिड़काव हेतु।
	* मिट्टी की गुणवत्ता और नमी के स्तर की निगरानी हेतु।
मक्का (कॉर्न)	* बड़े पैमाने पर खेतों में बीज बोने और कीटनाशक के छिड़काव हेतु।
	* पौधों की ऊंचाई, स्वास्थ्य और ग्रोथ पैटर्न का विश्लेषण।
तिलहन (सरसों, सोयाबीन, मूंगफली)	* बीज बोने, पोषण सामग्री और कीटनाशक छिड़काव के लिए।
	* नाइट्रोजन और अन्य पोषक तत्वों के संतुलन की निगरानी।
कृषि बागवानी (फल और सब्जियां)	* उर्वरक और कीटनाशक छिड़काव। *पेड़ों और पौधों की ऊंचाई, पत्तियों के स्वास्थ्य, और कीट संक्रमण का विश्लेषण।
दालें (चना, अरहर, मूंग)	* बीज छिड़काव, मिट्टी का परीक्षण और कीटनाशक के छिड़काव हेतु।
कपास (कॉटन)	* कपास के पौधों पर कीटनाशक और रोगनाशक का छिड़काव।
	* फसल की स्थिति का विश्लेषण।
चाय और कॉफी	* पहाड़ी और कठिन इलाकों में छिड़काव और फसल की निगरानी हेतु।
	* पौधों की ग्रोथ और जलवायु परिवर्तन के प्रभाव का अध्ययन।
गन्ना (शुगरकेन)	* खेतों में समान रूप से उर्वरक और पानी का वितरण।
	* कीटों के आक्रमण की निगरानी

कृषि में ड्रोन प्रौद्योगिकी के लाभ

कृषि में ड्रोन प्रौद्योगिकी को अपनाने से कई लाभ मिलते हैं। यह क्षेत्र की निगरानी के लिए आवश्यक श्रम और समय को काफी कम करता है, कृषि कार्यों में सटीकता बढ़ाता है और संसाधनों की बर्बादी को कम करता है। ड्रोन योग्य जानकारी प्रदान करके किसानों को सटीक कृषि पद्धतियों को अपनाने में सक्षम बनाता है, जिससे अधिक पैदावार और लाभप्रदता होती है। इसके अलावा ड्रोन पानी की खपत, रासायनिक उपयोग और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करके टिकाऊ खेती में योगदान करते हैं।

चुनौतियाँ और सीमाएं

इतने सारे लाभों के बावजूद, ड्रोन तकनीक को व्यापक रूप से अपनाने में कई परेशानियों का सामना करना पड़ता है। उच्च प्रारंभिक लागत, विनियामक प्रतिबंध और किसानों के बीच तकनीकी विशेषज्ञता की कमी प्रमुख बाधाएँ हैं। ड्रोन की चरम मौसम स्थितियों में सीमाएँ होती हैं और उन्हें नियमित रखरखाव की आवश्यकता हो सकती है।

भविष्य की संभावनाएं

कृषि में ड्रोन तकनीक का भविष्य आशाजनक दिखता है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI), मशीन लर्निंग और स्वचालन में प्रगति से ड्रोन क्षमताओं में और वृद्धि होने की उम्मीद है। इंटरनेट ऑफ़ थिंग्स (IoT) उपकरणों और कृषि प्रबंधन प्रणालियों के साथ ड्रोन को एकीकृत करने से यह और अधिक कुशल बन जाएगा। सरकारें और अन्य संगठन भी अपनाने को प्रोत्साहित करने के लिए प्रशिक्षण और सब्सिडी प्रदान करने के लिए काम कर रहे हैं। निष्कर्ष यह है कि, ड्रोन तकनीक दक्षता में सुधार, लागत कम करने और स्थिरता को बढ़ावा देकर कृषि को बदल रही है। जैसे-जैसे तकनीकी प्रगति जारी रहेगी, ड्रोन वैश्विक खाद्य सुरक्षा और पर्यावरणीय चुनौतियों का समाधान करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे।

हाइड्रोपोनिक्स: सब्जी उत्पादन की एक आधुनिक तकनीक

✍ अभिषेक यादव, मनीषा पाठक
✍ रोहित कुमार यादव (पीएचडी शोधार्थी)
उद्यानिकी विभाग, राजमाता विजयराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.)

भारत में खेती-बाड़ी का एक अलग ही इतिहास रहा है. यहां के किसानों का ये मानना है कि खेती करने के लिए उपयुक्त मौसम, जलवायु और मिट्टी की जरूरत होती है, लेकिन बदलते दौर और समय के साथ हर चीज़ में आए दिन नए बदलाव होते जा रहे हैं. ऐसे में कृषि क्षेत्र में भी कई आधुनिक बदलाव हुए हैं, जो समय की मांग और आवश्यकता दोनो ही हैं. दरअसल देश दुनिया की दिन प्रतिदिन बढ़ती आबादी और इसके साथ ही शहरीकरण भी इसकी मुख्य वजह है. ऐसे में इन तमाम समस्याओं को खत्म करने के लिए वैज्ञानिकों ने हाइड्रोपोनिक्स और ड्रिप हाइड्रोपोनिक्स तकनीक की खोज की है। ताजा, स्वस्थ उपज की बढ़ती मांग और पारंपरिक खेती के लिए उपलब्ध सीमित भूमि के साथ, इनडोर हाइड्रोपोनिक सिस्टम का उपयोग करके घर पर सब्जी की बागवानी एक लोकप्रिय और टिकाऊ समाधान बन गया है। यह आधुनिक खेती तकनीक आपको कम जगह, पानी और संसाधनों का उपयोग करके साल भर घर पर अपनी सब्जियाँ उगाने की सुविधा देती है। चाहे आप शहरी अपार्टमेंट में रहते हों या छोटे घर में अतिरिक्त जगह के बिना भी इनडोर सब्जी की बागवानी संभव है।

हाइड्रोपोनिक्स क्या है?: हाइड्रोपोनिक्स मिट्टी के बिना पौधों को उगाने की एक विधि है। इस तकनीक में पौधे पोषक तत्वों से भरपूर पानी में उगते हैं, जहाँ उनकी जड़ें सभी आवश्यक पोषक तत्वों को अवशोषित करती हैं। हाइड्रोपोनिक सब्जी की खेती में, पानी और पोषक तत्वों को सावधानीपूर्वक नियंत्रित किया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप पौधे तेजी से बढ़ते हैं और अधिक उपज होती है। यह विधि विशेष रूप से छोटे स्थानों में इनडोर सब्जी के पौधे उगाने के लिए आदर्श है।

इनडोर सब्जी उगाने के लिए हाइड्रोपोनिक प्रणालियों के प्रकार: कई प्रकार की हाइड्रोपोनिक प्रणालियाँ इनडोर सब्जी उगाने के लिए अच्छी तरह से काम करती हैं, जो आपके पास मौजूद पौधों और स्थान के प्रकार पर निर्भर करती हैं:

1. **पोषक तत्व फिल्म तकनीक (एनएफटी) :** यह प्रणाली हाइड्रोपोनिक्स पत्तेदार सब्जियों जैसे लेट्यूस और पालक के लिए बहुत बढ़िया है। पोषक तत्व समाधान की एक पतली धारा जड़ों पर बहती है, जिससे पौधों को पोषक तत्वों और ऑक्सीजन की निरंतर आपूर्ति होती है।
2. **डीप वाटर कल्चर (डीडब्ल्यूसी) :** इस विधि में, पौधों की जड़ों को पोषक तत्वों के घोल में डुबोया जाता है। एक वायु पंप जड़ों को ऑक्सीजन प्रदान करता है, जो टमाटर, मिर्च और खीरे जैसी तेजी से बढ़ने वाली इनडोर सब्जियों को उगाने में मदद करता है।
3. **ईब और फ्लो (बाढ़ और जल निकासी) :** यह प्रणाली पौधों की जड़ों में पोषक तत्वों के घोल को कुछ अंतराल पर भरती है और फिर उसे बहा देती है। यह एक बहुमुखी विधि है जो विभिन्न प्रकार के इनडोर सब्जी पौधों के लिए अच्छी तरह से काम करती है।
4. **ड्रिप सिस्टम :** इनडोर सब्जी उगाने के लिए एक लोकप्रिय प्रणाली, ड्रिप सिस्टम प्रत्येक पौधे को नियंत्रित मात्रा में पोषक तत्व घोल प्रदान करता है। यह जड़ी-बूटियों से लेकर टमाटर और मिर्च जैसे फलदार पौधों तक कई तरह की सब्जियाँ उगाने के लिए एकदम सही है।
5. **बाती प्रणाली :** एक सरल, निष्क्रिय प्रणाली जिसमें एक बाती पोषक तत्वों को जलाशय से पौधों की जड़ों तक खींचती है। यह प्रणाली जड़ी-बूटियों और छोटी पत्तेदार सब्जियों जैसी जल्दी उगने वाली इनडोर सब्जियों के लिए सबसे अच्छा काम करती है।

इनडोर सब्जी बागवानी के लिए हाइड्रोपोनिक्स के लाभः इनडोर हाइड्रोपोनिक सब्जी की खेती घर पर सब्जियां उगाने के इच्छुक घरेलू बागवानों के लिए कई लाभ प्रदान करती हैः

1. **साल भर उगाना :** सब्जियों के लिए सही इनडोर ग्रो सिस्टम के साथ, आप पूरे साल ताज़ी उपज का आनंद ले सकते हैं। मौसम या खराब मौसम के बारे में चिंता करने की कोई ज़रूरत नहीं है।
2. **जल दक्षताः** हाइड्रोपोनिक सिस्टम पारंपरिक खेती की तुलना में 90% तक कम पानी का उपयोग करते हैं। इन प्रणालियों में पानी को पुनः परिचालित किया जाता है, जिससे यह अत्यधिक कुशल बन जाता है।
3. **जगह की बचत :** इनडोर सब्ज़ियों की खेती में बहुत कम जगह की ज़रूरत होती है। आप सब्जियों को खड़ी अवस्था में या ढेरों परतों में उगा सकते हैं, जिससे छोटे इनडोर क्षेत्रों का अधिकतम लाभ उठाया जा सकता है।
4. **मिट्टी की जरूरत नहीं :** हाइड्रोपोनिक्स मिट्टी की जरूरत को खत्म कर देता है, जिसका मतलब है कि गंदगी नहीं होगी और कीट भी कम होंगे। इनडोर सब्जी के पौधे बिना सूरज की रोशनी के इनडोर सब्जी के पौधों के लिए ग्रो लाइट के साथ नियंत्रित वातावरण में पनप सकते हैं।
5. **तेज़ विकास और ज़्यादा पैदावार** : हाइड्रोपोनिक सिस्टम में उगाए गए पौधों को सीधे पोषक तत्व मिलते हैं, जिससे वे तेज़ी से बढ़ते हैं और ज़्यादा सब्ज़ियाँ पैदा करते हैं। यह सलाद और पालक जैसी तेज़ी से बढ़ने वाली इनडोर सब्ज़ियाँ उगाने के लिए आदर्श है।
6. **कीटनाशक मुक्त उपज :** चूँकि पर्यावरण नियंत्रित है, इसलिए रासायनिक कीटनाशकों की कोई ज़रूरत नहीं है। आप अपने घर में ही स्वच्छ, जैविक सब्जियाँ उगा सकते हैं।

इनडोर हाइड्रोपोनिक्स के लिए उपयुक्त सब्जियाँ: हाइड्रोपोनिक्स कई तरह की सब्जियाँ उगाने के लिए बहुत बढ़िया है। इनडोर बागवानी के लिए कुछ बेहतरीन सब्जियाँ इस प्रकार हैं:

पत्तेदार सब्जियाँ : लेट्यूस, पालक, केल और अरुगुला कुछ सबसे आसान और जल्दी उगने वाली इनडोर सब्जियाँ हैं। वे हाइड्रोपोनिक सिस्टम में पनपती हैं और कुछ ही हफ़्तों में कटाई हेतु तैयार हो जाती हैं।

जड़ी-बूटियाँ : तुलसी, पुदीना, अजमोद और धनिया हाइड्रोपोनिक सेटअप में अच्छी तरह से उगते हैं, जिससे वे इनडोर सब्जी उगाने के लिए एकदम उपयुक्त हैं।

टमाटर और मिर्च : टमाटर और मिर्च जैसे फल देने वाले पौधे हाइड्रोपोनिक प्रणाली में असाधारण रूप से अच्छी तरह से विकसित होते हैं, विशेष रूप से सही मात्रा में प्रकाश और देखभाल के साथ।

खीरे : ये हाइड्रोपोनिक प्रणालियों के लिए भी बहुत अच्छे हैं, विशेष रूप से इनडोर सब्जी उगाने वाली प्रणालियों में जो अपनी लताओं के लिए पर्याप्त समर्थन प्रदान करते हैं।

इनडोर हाइड्रोपोनिक सब्जी उगाने की प्रणाली कैसे स्थापित करें: इनडोर सब्जी उगाने की प्रणाली स्थापित करना पहली बार में कठिन लग सकता है, लेकिन यह जितना आप सोचते हैं उससे कहीं ज़्यादा आसान है। **शुरू करने के लिए आपको ये चीज़ें चाहिए:**

1. **हाइड्रोपोनिक सिस्टम :** ऐसी प्रणाली चुनें जो आपके स्थान और आपके द्वारा उगाई जाने वाली सब्जियों के प्रकार के अनुकूल हो। शुरुआती लोगों के लिए, एक साधारण बाती या ड्रिप सिस्टम प्रबंधन में सबसे आसान हो सकता है।
2. **इनडोर वेजिटेबल प्लांट्स के लिए ग्रो लाइट्स :** चूंकि इनडोर प्लांट्स को हमेशा पर्याप्त प्राकृतिक धूप नहीं मिलती है, इसलिए LED ग्रो लाइट्स का उपयोग करने से सूर्य की किरणों की नकल करने में मदद मिलती है। ये लाइट्स सुनिश्चित करती हैं कि आपके पौधों को बढ़ने हेतु उचित रोशनी मिले।
3. **पोषक तत्व समाधान :** आपके पौधों को पनपने के लिए संतुलित पोषक तत्व समाधान की आवश्यकता होती है। आप हाइड्रोपोनिक्स में सब्जियों के लिए विशेष रूप से डिज़ाइन किए गए प्रीमिक्स समाधान खरीद सकते हैं।
4. **वेंटिलेशन और आर्द्रता :** इनडोर सब्जियों को उगाने के लिए उचित वायु प्रवाह और आर्द्रता नियंत्रण आवश्यक है। बहुत ज़्यादा आर्द्रता से फफूंद लग सकती है, जबकि बहुत कम आर्द्रता से आपके पौधे सूख सकते हैं।
5. **पीएच और पोषक तत्वों की निगरानी :** अपने पोषक तत्वों के घोल के पीएच स्तर पर नज़र रखें। आदर्श रूप से, ज़्यादातर सब्ज़ियों के लिए पीएच 5.5 और 6.5 के बीच होना चाहिए।

मशरूम की खेती-एक लाभकारी कृषि व्यवसाय

✍डॉ. मुकेश कुमार धाकड़ (सहायक प्राध्यापक) पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, आरएनटीयू, रायसेन (उ.प्र.)

✍डॉ. दिनेश सिंह तोमर डीन, (पादप रोग विज्ञान), कृषि महाविद्यालय, जेएनकेवीवी, टीकमगढ़ (उ.प्र.)

✍डॉ. एच.डी. वर्मा डीन, (सस्य विज्ञान), कृषि संकाय, आरएनटीयू, रायसेन (म.प्र.)

✍डॉ. प्रदीप कुमार शिक्षण सहायक, कृषि कीट विज्ञान विभाग, बुंदेलखंड वि.वि. झांसी

✍डॉ. ऋषिकेश मंडलोई (सहायक प्राध्यापक) कृषि कीट विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, आरएनटीयू, रायसेन (म.प्र.)

मशरूम का उत्पादन और इसका कारोबार कृषि में एक बड़े बदलाव का वाहक बन रहा है, जिससे आर्थिक अवसर और पर्यावरणीय लाभ दोनों मिल रहे हैं। इससे किसानों को अच्छी कमाई के अवसर भी मिल रहे हैं। खाद्य मशरूम का बढ़ता बाजार भारत के कृषि क्षेत्र और उससे जुड़े क्षेत्रों को पर्याप्त लाभ प्रदान करने के लिए तैयार है।

1.प्रस्तावना: मशरूम की खेती एक ऐसी विधा है, जो न केवल पारंपरिक कृषि हेतु चुनौतीपूर्ण होती है, बल्कि कृषकों को नए अवसर और उन्नति का मार्ग प्रदान करती है। मशरूम प्रोटीन, विटामिन, और खनिजों का उत्कृष्ट स्रोत है, जिसके कारण इसकी वैश्विक मांग तेजी से बढ़ रही है। यह पर्यावरण के अनुकूल खेती है, जो जैविक कचरे का उपयोग करके उत्पादकता को बढ़ाती है। इसके अलावा, कम समय में अधिक उत्पादन और उच्च लाभ इसके प्रमुख गुण हैं। मशरूम उत्पादन न केवल किसानों के जीवन स्तर को ऊपर उठाने में मदद करता है, बल्कि यह ग्रामीण अर्थव्यवस्था को भी प्रोत्साहित करता है। शहरी क्षेत्रों में इसकी मांग, ताजा या प्रसंस्कृत रूप में, एक आकर्षक बाजार का निर्माण करती है।

मशरूम के प्रकार: * बटन मशरूम * ऑयस्टर (ढिंगरी) मशरूम * मिल्की मशरूम * शीटाके मशरूम प्रकार का चुनाव स्थान और बाजार की मांग के अनुसार करें।

जलवायु आवश्यकताएँ: a.तापमानः 20-30°C (प्रकार के अनुसार) b.आर्द्रताः 70-80% c.वेंटिलेशनः उचित वायुवीजन वातावरण आवश्यक।

कच्चा माल: a.गेहूं/धान का भूसा, कम्पोस्ट, गाय का गोबर, जिप्सम और बीजाणु (स्पॉन)।

खेती की प्रक्रिया: a.स्पॉन तैयार करना या खरीदना। b.कम्पोस्ट बनाना और पाश्चराइज करना। c.स्पॉन को कम्पोस्ट में मिलाकर पॉलीथीन बैग या ट्रे में भरना। d.उपयुक्त वातावरण में रखना और पानी का छिड़काव करना। e.कटाई के लिए 20-30 दिनों में तैयार हो जाता है।

सावधानियां: a.साफ-सफाई बनाए रखें। b.संक्रमण से बचने के लिए पर्यावरण नियंत्रित करें। c.सही समय पर पानी दें और जरूरत से ज्यादा नमी न होने दें।

मशरूम की खेती के लिए प्रारंभिक लागत: मशरूम की खेती की प्रारंभिक लागत कई कारकों पर निर्भर करती है, जैसे कि खेती का आकार, मशरूम की किस्म, स्थान, और उपयोग किए जाने वाले उपकरण। सामान्यतः, छोटे स्तर पर मशरूम की खेती शुरू करने हेतु निम्नलिखित लागतें होती हैं:

स्थान और संरचना: * यदि आप कमरे में खेती कर रहे हैं, तो 10×10 फीट के कमरे की व्यवस्था की लागत लगभग रु. 10,000-रु. 15,000 हो सकती है। * यदि आप ग्रीनहाउस या शेड बना रहे हैं, तो लागत अधिक हो सकती है।

कच्चा माल: * भूसा, कम्पोस्ट, और अन्य सामग्री की लागत रु. 5,000-रु. 10,000 तक हो सकती है। * मशरूम के बीज (स्पॉन) की कीमत रु. 100-रु. 200 प्रति किलो होती है।

उपकरण: * प्लास्टिक बैग, ट्रे, पानी के छिड़काव के उपकरण आदि की लागत रु. 2,000-रु. 5,000 तक हो सकती है।

अन्य खर्चे : * बिजली, पानी, और श्रम की लागत रु. 2,000-रु. 5,000 तक हो सकती है।

इस प्रकार, छोटे स्तर पर मशरूम की खेती शुरू करने के लिए रु. 20,000-रु. 30,000 की लागत आ सकती है। बड़े स्तर पर खेती के लिए लागत अधिक हो सकती है। यदि आप सरकारी सब्सिडी या प्रशिक्षण कार्यक्रम का लाभ उठाते हैं, तो लागत कम हो सकती है।

बाजार: मशरूम की खेती के लिए वर्तमान बाजार की मांग तेजी से बढ़ रही है। हाल के वर्षों में मशरूम को एक पौष्टिक औरपर्यावरण-अनुकूल खाद्य पदार्थ के रूप में पहचान मिली है, जिससे इसकी लोकप्रियता में वृद्धि हुई है।

वैश्विक स्तर पर वृद्धि: मशरूम का वैश्विक बाजार 2024 तक लगभग 67.4 अरब डॉलर का था और 2029 तक इसके 97.1 अरब डॉलर तक पहुंचने का अनुमान है। यह 7.57% की चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर (CAGR) को दर्शाता है।

भारत में मांग: भारत में मशरूम की खेती तेजी से बढ़ रही है। 2025 तक इसका बाजार मूल्य 34.7 अरब डॉलर तक पहुंचने की संभावना है। बटन मशरूम, ऑयस्टर मशरूम और शीटाके मशरूम जैसी किस्मों की मांग विशेष रूप से अधिक है।

सरकारी समर्थन: भारत में कई राज्य सरकारें मशरूम की खेती को बढ़ावा देने के लिए सब्सिडी और प्रशिक्षण कार्यक्रम चला रही हैं। उदाहरण के लिए, बिहार सरकार मशरूम किट पर 90% तक सब्सिडी प्रदान कर रही है, जिससे छोटे किसान और बेरोजगार युवा भी इस व्यवसाय में शामिल हो सकते हैं।

लाभ: मशरूम की खेती के कई लाभ हैं जो इसे एक आकर्षक और लाभकारी व्यवसाय बनाते हैं। **यहां उनके मुख्य बिंदु निम्नलिखित हैं:**

1.कम लागत, अधिक लाभ: मशरूम की खेती के लिए बहुत अधिक भूमि या साधनों की आवश्यकता नहीं होती। इससे कम निवेश पर उच्च लाभ मिलता है।

तेजी से उत्पादन: मशरूम अन्य फसलों की तुलना में जल्दी तैयार हो जाता है। इसे 20-30 दिनों में काटा जा सकता है।

पोषण से भरपूर: मशरूम प्रोटीन, विटामिन (बी और डी), खनिज, और एंटीऑक्सीडेंट्स का उत्तम स्रोत है। इसकी मांग स्वास्थ्य के प्रति जागरूक उपभोक्ताओं में अधिक है।

पर्यावरण के अनुकूल: यह जैविक कचरे (जैसे भूसा और अन्य कृषि अवशेष) का उपयोग करता है, जिससे पर्यावरण संरक्षण में योगदान मिलता है।

कम स्थान में खेती संभव: इसे वर्टिकल फार्मिंग या नियंत्रित वातावरण में भी उगाया जा सकता है, जो शहरी क्षेत्रों में भी संभव बनाता है।

बाजार की बढ़ती मांग: ताजा और प्रसंस्कृत मशरूम की मांग घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में निरंतर बढ़ रही है।

रोजगार का सृजन: यह स्वरोजगार के अवसर प्रदान करता है और ग्रामीण क्षेत्रों में आजीविका को बढ़ावा देता है।

औषधीय उपयोग: कुछ मशरूम, जैसे शीटाके और गैनोडर्मा, औषधीय गुणों के लिए जाने जाते हैं, जिनका उपयोग स्वास्थ्य उत्पादों में किया जाता है।

सफाई और कम रखरखाव: मशरूम की खेती को साफ-सफाई और नियंत्रित वातावरण में किया जाता है, जिससे देखभाल आसान हो जाती है।

मशरूम की खेती में सरकार द्वारा दी जाने वाली सब्सिडी और योजनाएँ

भारत में मशरूम की खेती को बढ़ावा देने के लिए सरकार ने कई योजनाएँ और सब्सिडी लागू की हैं। यहाँ कुछ प्रमुख योजनाएँ और सब्सिडी का विवरण हैः

राष्ट्रीय बागवानी मिशन-इस योजना के तहत मशरूम उत्पादन इकाइयों के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है।

प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि योजना- किसानों को आर्थिक सहायता प्रदान करने हेतु यह योजना लागू की गई है।

राष्ट्रीय कृषि विकास योजना: इस योजना के तहत मशरूम उत्पादन और विपणन के लिए सहायता दी जाती है।

कृषि यंत्रीकरण उप-मिशन: इस योजना के तहत मशरूम उत्पादन में उपयोग होने वाले उपकरणों पर सब्सिडी दी जाती है।

परंपरागत कृषि विकास योजना: जैविक मशरूम उत्पादन को बढ़ावा देने हेतु यह योजना लागू की गई है।

मशरूम के कीट और रोग: मशरूम बेड पर विभिन्न कीट और नेमाटोड उगते हैं और उपज में कमी के लिए जिम्मेदार होंगे। यहां तक कि चूहे भी अनाज और अन्य चीजों के साथ फलों के शरीर को खा जाते हैं जिससे उपज में कमी आती है।

सतावरी की उत्पादन विधि

बलराम नायक (कृषि छात्र) कृषि विज्ञान संस्थान, सेज विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

यश प्रताप सिंह (कृषि छात्र) कृषि विज्ञान संस्थान, सेज विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

रंजित चौहान (सहायक प्रोफेसर) कृषि विज्ञान संस्थान, सेज विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

भारत में हर क्षेत्र की तरह कृषि निरंतर बदलाव आ रहे हैं। समय के साथ-साथ जैसे-जैसे किसानों में कृषि की प्रति जागरुकता बढ़ती जा रही है। वैसे-वैसे किसान जन्म से नई फसलों की तरह किसान बढ़ रहा है। इस कारण भारतीय कृषि वर्ष में औषधीय पौधों की तरह बढ़ रही है। औषधीय पौधों की कृषि कर किसान प्रति वर्ष 6 से 7 लाख रुपए तक कमा सकते हैं। इन पौधों में से एक है सतावर (सतावरी)।

इसकी पौधों को अलग-अलग क्षेत्रों में विभिन्न नामों से जाना जाता है। जैसे कि सतावर, सतावरी सतमुल आदि तथा इसका वनस्पति नाम ऐस्पेरेगस रेसीमोसस नाम से जाना जाता हैं। इस पौधें के पत्ती से लेकर जड़ सभी अंगों का उपयोग औषधि के रूप में किया जाता है, परंतु इसके जड़ व पत्तियों का विशेष उपयोग किया जाता है। इस पौधे पर औषधीय कारणों से इस पर किसी प्रकार के कीट भी नहीं लगते और कांटेदार होने के कारण कोई जानवर भी नहीं खाते न ही इसे दूसरा कोई खतरा होता हैं। सतावर की खेती नर्सरी विधि द्वारा की जाती है और इसकी खेती के लिए छिड़काव विधि भी की जा सकती है, परंतु यह विधि अवैज्ञानिक तथा इसमें बीजों की संख्या भी अधिक लगती है और पौधों के बीच दूरी भी अनिश्चित रहती है, इस कारण इसकी खेती के लिए नर्सरी विधि ही उपयुक्त है नर्सरी तैयार करने के लिए पहले खेत को जोतकर अच्छे से भुरभुरा बना लेते है तथा खेत में आवश्यकता अनुसार जैविक खाद का प्रयोग किया जाता और इसकी खेती में जल निकासी भी विशेष आवश्यकता पड़ती है।

सतावरी सबसे कोमल जड़ी बूटी में से एक है जिसका उपयोग कई रोगों के उपचार विशेषकर महिला रोगों के उपचार में किया जाता है। इस पौधों की जड़ों का हर वर्ष लगभग 500 टन का उपयोग दवाइयां बनाने में किया जाता हैं इसका उपयोग गैस्टिक अत्सर तांगिक तंत्र सबिध विकार तथा अपच के इलाज में किया जाता है। सतावर एक झाड़ियां पौधा है जिसकी ऊंचाई 1.5 से 3 मीटर तक पाई जाती है तथा इसकी जड़े गुहलो के रूप में पाई जाती है। 2 से 4 सेंटीमीटर मोटी तथा से भी लंबी होती है। इसके फूल शाखाओं में होते है व 3 सेंटीमीटर लंबे तथा सफेद रंग के और सुगंधित होते हैं, यह जामुन रंग का होता है। यह पौधा अफ्रीका, श्रीलंका, चीन, भारत, और हिमालय में पाई जाती है। यह भारत के कई राज्यों में पाया वह उगाया जाता है जैसे वाह चल प्रदेश असम छतीसगढ़ दिल्ली गुजरात हरियाणा हिमाचल प्रदेश झारखंड और पंजाब आदि राज्यों में उगाया जाता है।

सतावर की उत्पादन प्रौद्योगिकी

जलवायु: सतावरी की खेती उष्ण कटिबंधीय क्षेत्र में सबसे अच्छी है,इसकी बुवाई केलिए 30 से 35 डिग्री सेल्सियस तक के तापमान की आवश्यकता होती है तथा सामान्य वृद्धि 25 से 35 डिग्री सेल्सियस ठीक रहता है तथा इसके उत्पादन के लिए 600 से 1000 मिमी. तक वर्षा प्रतिवर्ष काफीहै तथा आवश्यकता पड़ने पर सिंचाई कि जा सकती है। इसकी खेती के लिए 300 से 1500 मीटर किस मुद्री पतल से ऊंचाई पर सफलता पूर्वक की जा सकती हैं।

मिट्टी (मृदा): सतावर की खेती के लिए तो सभी मृदाए अच्छी है

परंतु लेटराईट लाल, दोमट मृदा जिससे उचित जल निकासी सुविधा हो उसे प्राथमिकता दी जाती है।इसकी खेती हेतु उथली तथा पठारी मृदा के तहत 20 से 30 सेंटीमीटर की गहराई में इसकी खेती की जा सकती हैं। काली तथा दोमट मृदा में जल निकास की विशेष आवश्यकता होती है। इसके अच्छे उत्पादन के pH 6 से 8 तक हो तो बहुत अच्छा होता है।

जमीन की तैयारी: सतावर की खेती के लिए अच्छे जल निकासी की आवश्यकता होती है जिसके लिए मिट्टी को भुरभुरा करना आवश्यक है जिसके लिए अच्छे से जुताई करनी चाहिए जिसके 15 सेंटीमीटर की गहराई तक गड्ढा खोदे तथा रोपाई के लिए बैड तैयार करे।

सतावर की प्रसिद्ध किस्म: इसके लिए सामान्यः दो जातियों का उपयोग किया जाता है।

1.Satavari (Asparagus xacemasas)

यह अफ्रीका, श्रीलंका, भारत और हिमालय में पाई जाती है। पौधे की ऊंचाई 1 से 3 मी. होती है। इसके फूलों की लंबाई 3 सेंटीमीटर तक हो जाती हैं।

2.Satavari (Asparagus Sarmentoso himm)

यह किस्म स्वीजरलेंड, बुरसेल और दक्षिण अफ्रीका में पाई जाती है इसके पौधे की लंबाई 2 से 4 मीटर तक होती है तथा इसके फूलो की लंबाई सामान्य तथा फूलो का बाहरी भाग 1 इंच लंबा होता हैं।

बीज की मात्रा व बीजोपचार

सतावर की खेती नर्सरी विधि द्वारा की जाती है जिसके लिए सामान्यतः कम बीजों की आवश्यकता होती है। सतावर की एक एकड़ के लिए 400 ग्राम बीज उपयुक्त है। इसके बीजों को कीटों व रोगों के नियंत्रण के लिए गाय के मूत्र में 24 घंटो के लिए भिगोकर रखें तथा इसके पश्चात बुआई करे। सतावर की रोपाई के लिए जून जुलाई के महीने में करना काफी अच्छा होता हैं। सतावरी के पौधे की प्रजाति के अनुसार 4.5X1.2 मीटर की दूरी पर उगाना चाहिए।

खाद

अन्य फसलों की तरह सताव के लिए भी रासायनिक खादों का प्रयोग किया जाता है, जो की इस प्रकार दिए जाते हैं खेत की तैयारी के समय 80 क्विंटल प्रति एकड़ गली हुई खादको मृदामें अच्छे से मिलाए तथा 24 किलो नाइट्रोजन 32 किलो फास्फोरस और 40 किलो पोटाशप्रति एकड़ दर से प्रयोग करना चाहिए। यह तो की मात्रा भूमि व किस्म के अनुसार अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग हो सकती हे।

खरपतवार नियंत्रण

फसल के विकास के समय लगातार गोड़ाई अर्थात मिट्टी चढ़ाने की आवश्यकता होती है तथा खरपतवार नियंत्रण के लिए समय समय पर 6 से 8 बार निदाई की आवश्यकता होती है तथा जड़ों का विकास भी अच्छे से होता है।

सिंचाई: पौधों को खेत में रोपण करने के पश्चात सिंचाई की आवश्यकता होती है वैसे तो इस फसल के लिए ज्यादा सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती परंतु शुरुआत में जल्दी-जल्दी चार से 6 दिन के अंतराल पर सिंचाई की आवश्यकता होती है जो कुछ समय बाद एक सप्ताह हो जाती है और समय-समय पर सिंचाई की आवश्यकता पूरी फसल पर पड़ती रहती है। यह जलमात्रा मृदा के अनुसार बदलती रहती है मृदामें नमी को देखकरसिंचाई करनी चाहिए। फसल काटने के समय सिंचाई की विशेष आवश्यकता होती है जिससे गड्ढों से जड़ों को निकालने में आसानी होती है।

पौधों की देखभाल कर: वैसे तो निदाई व गुड़ाई के अलावा इसमें कोई विशेष देखभाल की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि इसके कटीली झाड़ियों के कारण व औषधि गुणों के कारण कोई कीटों का प्रकोप नहीं होता ना ही ज्यादा रोग आते है परंतु एक रोग ज्यादातर देखा जाता है।

कुंगी रोग: यह रोग प्यूचिनिया एस्पार्गी के कारण होता ही इस बीमारी से पत्ते पर भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते है जिसके परिणाम स्वरूप पत्ते सुख जाते है। इस रोग के नियंत्रण के लिए बॉडी ऑक्सा घोलको 1% डालें।

फसल की कटाई: सतावर की फसल एक लम्बी फसल ही इसे तैयार होने में लगभग 25 से 30 माह का समय लगता है यह फसल कुछ जलवायु मृदा में 12 से 14 माह में भी तैयार हो जाती है। इसकी पुटाई मार्च से मई के मध्य जब बीज पककर तैयार हो जाए तब करनी चाहिए बीज पकने की अवस्था में दवाइया तैयार करने के लिए यह उपयुक्त होती है इस फसल की पिटाई कषि की सहायता से की जाती है। फसल कटाई के पश्चात इसकी जड़ों को मोटाई के अनुसार अलग-अलग कर लिया जाता है और सुखाकर बाजार में बेचा जा सकता है या इस से जड़ों के विभिन्न उत्पाद तैयार किए जा सकते है जैसे पाउडर गुलाम और घ्रात्म बनाकर बाजार में ज्यादा मुनाफा कमा सकते है। सतावर को आप अपने नजदी की औषधि बाजार में बेच सकते हैं। इसका बाजार मध्यप्रदेश में नीमच और मंदसौर में है। यह आप 20 से 30 हजार प्रति क्विंटल की दर से आप मुनाफा कमा सकते से जिससे प्रति फसल 6 से 7 लाख तक कमाई कर सकते हैं।

गर्मी के मौसम में गाय-भैंस के दूध उत्पादन में बढ़ोतरी के घरेलू उपाय

✍ डॉ राखी वर्मा, डॉ. अमित कुमार
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन
महाविद्यालय, महू (म.प्र.)

गाय का दूध बच्चों के लिए अमृत माना जाता है. दूध पोषक तत्वों से भरपूर होता है. कुछ प्रजाति की गाय बहुत अधिक दुग्ध उत्पादन करती हैं, जबकि कुछ प्रजाति की गायों का दूध सामान्य स्तर का होता है। पहले लोग ऑक्सीटोसीन इंजेक्शन लगाकर दूध अधिक दोह लेते थे लेकिन इसके बॉडी पर निगेटिव इफेक्ट और अन्य परेशानियों को देखते हुए इसकी बिक्री बैन कर दी गई है। कई बार गाय-भैंस कम दूध देने लगती हैं. इस स्थिति से निपटने के लिए पशुपालक कई तरह के उपाय करने शुरू कर देते हैं। ऐसे में पशुओं के स्वास्थ्य पर असर पड़ता है। गाय के दूध बढ़ाने के लिए किसी तरह की दवा या फिर इंजेक्शन की जरूरत नहीं है। इन स्थितियों से बचने और पशुओं का दुग्ध उत्पादन औसत से बेहतर रखने के लिए पशुपालक कुछ घरेलू उपाय अपना सकते हैं।

पशुओं में दूध उत्पादन बढ़ाने के लिए, संतुलित आहार, हरे चारे के साथ-साथ खनिज और कैल्शियम की आपूर्ति, और लोबिया घास जैसे पौष्टिक चारे का उपयोग करें।

संतुलित आहार

पशुओं को रोजाना 20 किग्रा. हरा चारा, 4 से 5 किग्रा सूखा चारा और 2 से 3 किग्रा अनाज और दालों का दाना मिलाकर खिलाएं।

खनिज और कैल्शियम

पशुओं को खनिज और कैल्शियम की आपूर्ति के लिए पशु विशेषज्ञ की सलाह लेकर प्रो पाउडर, मिल्क बूस्टर, मिल्कगेन आदि चारे के साथ खिला सकते हैं।

लोबिया घास

लोबिया घास में प्रोटीन और फाइबर की मात्रा ज्यादा होती है, जो दूध उत्पादन के लिए जरूरी है।

अन्य पौष्टिक चारा

नेपियर घास, अल्फा, बरसीम, लोबिया, मक्का की उन्नत किस्मों का चारा भी खिलाएं।

देशी उपाय

सरसों का तेल और आटे का मिश्रण: 200-300 ग्राम सरसों का तेल और 250 ग्राम गेहूं का आटा मिलाकर शाम को पशु को खिलाएं।

गेहूं का दलिया, गुड़ शर्बत (आवटी), मैथी, कच्चा नारियल, जीरा, अजवाइन का मिश्रण: गाय के ब्याने के बाद 3 दिन तक दें।

अनाज और सांद्रण

ये अनाज अतिरिक्त ऊर्जा और आवश्यक अमीनो एसिड प्रदान करते हैं, जिससे दूध उत्पादन और गाय के समग्र स्वास्थ्य को बढ़ावा मिलता है। गायों के आहार में सोयाबीन, कैनोला भोजन और कपास के बीज जैसे प्रोटीन युक्त अनाज शामिल करने से उनकी आहार संबंधी ज़रूरतें पूरी होती हैं।

संतुलित आहार

* हरे चारे के अलावा, पशुओं को 4-5 किलो सूखे चारे के साथ 2-3 किलो अनाज और दालें मिलाएं।
* खनिज और कैल्शियम की आपूर्ति के लिए पशु विशेषज्ञ की सलाह लेकर चारे के साथ प्रो पाउडर, मिल्क बूस्टर या मिल्कगेन खिलाएं।
* पशुओं को लोबिया घास या अजोला घास खिलाएं, जो फाइबर, प्रोटीन और औषधीय गुणों से भरपूर होते हैं।

पानी की उपलब्धता

* पशुओं को भरपूर मात्रा में ठंडा और साफ पानी उपलब्ध कराएं।
* पानी में नमक या शक्कर मिलाकर भी दे सकते हैं, जिससे वे अधिक पानी पिएं।
* रिहाइड्रेशन थेरेपी पाउडर (जैसे कूल मैक्स) का उपयोग करें, जो शरीर में पानी की कमी को पूरा करता है।

सरसों का तेल और आटा, ऐसे बढ़ जाएगा दूध

ये बेहद साधारण नुस्खा है, जो कि सभी लोगों के घर में मौजूद होता है सरसों के तेल और आटे की दवा बनाकर गाय भैस को खिलाने से उसके दूध की मात्रा को बढ़ाया जा सकता है.

जान लेते हैं कि दवा बनती कैसे है

* करीब 300 ग्राम सरसों का तेल और 250 ग्राम आटा लें. दोनों को मिलाकर रख दें।
* शाम को जब पानी पिला दिया जाए और चारा खिला दें। उसके बाद यह दवा गाय को खिला देना चाहिए।
* इस दवा के खाने के बाद पानी नहीं देना है और न ही पानी के साथ यह दवा देनी है।
* 7 से 8 दिन तक इस दवा को डेली खिलाना होगा जो पोषक चारा गाय को रहे हैं, उसे देना जारी रखें, धीरे धीरे गाय का दूध बढ़ना शुरू हो जाएगा।

अन्य सुझाव

* पशुओं को छायादार और ठंडी जगह पर रखें।
* पशुओं को नियमित रूप से साफ-सुथरा रखें।
* पशुओं को समय-समय पर पशु चिकित्सक से जांच कराएं
* दूध दुहते समय पशु को दाना खाने को दें, ताकि वह शांत रहे और खुशी से दूध दे।
* गर्मियों में, पशुओं को भरपूर मात्रा में पानी देना चाहिए ताकि वे निर्जलीकरण न हों।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

मृदा स्वास्थ्य एवं मृदा गुणवत्ता का प्रबंधन

डॉ. केशव प्रसाद कुर्मी
डॉ. गौरव कुमार, डॉ. अंकिता राजपूत
(असिस्टेंट प्रोफेसर) मंगलायतन यूनिवर्सिटी
जबलपुर (म.प्र.)

प्रस्तावना

हमारे देश और पूरे विश्व में विभिन्न प्रकार की मृदाए हैं। मृदा का निर्माण वहाँ की स्थानीय जलवायु, जीवों ,स्थलाकृति, चट्टानो के अवसाद या विभिन्न प्रकार पैत्रिक पदार्थ एवं समय के प्रभाव से होता है और वहाँ की मृदा का निर्माण मृदा निर्माण करको के अनुसार होता है और मृदा में उपस्थित खनिज पदार्थ ,कार्बनिक पदार्थ,जल,वायु एवं अन्य पोशक पदार्थो की उपस्थिति के अनुसार मृदा को उस क्षेत्र जहां मृदा को पहली बार पहचाना गया उसी क्षेत्रानुसार मृदा का नामकरण किया जाता है

मृदा गुणवत्ता

मृदा की गुणवत्ता एक विशेष प्रकार की मृदा की क्षमता है जो प्राकृतिक या प्रबंधित पारिस्थितिक तंत्र की सीमाओं के भीतर कार्य करने के लिए, पौधे और पशु उत्पादकता को बनाए रखने, पानी और वायु की गुणवत्ता को बनाए रखने या बढ़ाने और मानव स्वास्थ्य और आवास का समर्थन करती है।

मृदा स्वास्थ

भूमि पर पादप जैव विविधता का अस्तित्व मृदा स्वास्थ्य और मृदा गुणवत्ता पर निर्भर करता है क्योंकि स्वस्थ मृदा पर ही पौधों का प्रजनन और संवर्धन होता है।

स्वस्थ मृदा के कार्य

स्वस्थ मृदा हमें स्वच्छ हवा ,पानी एवं भरपूर फसल,फल और चारागाह भूमि, विविध वन्य जीवो के लिए उत्पादक वन, और सुंदर परिदृश्य प्रदान करती है। मृदा के पाँच आवश्यक कार्य निम्न प्रकार है:

1.पानी का नियमन

मृदा अंतःस्त्रवण और अपधावन के बीच वर्षा अथवा सिंचाई के पानी के वितरण को विनियमित करती हैं।

2.पौधों और जानवरों के जीवन को बनाए रखना

जीवित वस्तुओ की बृद्धि और विविधता मृदा पर निर्भर करती है।

3. संभावित प्रदूषको का फिल्टर करना

मृदा बिभिन्न प्रकार के खनिजो, जीवाणुओं, औद्योगिक और नगरपालिका उप-उत्पादों और वायुमंडलीय कार्बनिक और अकार्बनिक सामग्री को छानने, बफरिंग और तत्व स्थरीकरण करती हैं।

4. पोषक तत्वों का चक्रण

मृदा में कार्बन, नाइट्रोजन, फास्फोरस और कई अन्य पोषक तत्व संग्रहीत, रूपांतरित और चक्रित होते रहते हैं।

मृदा गुणवत्ता पैरामीटर

सामान्यतः मृदा की गुणवत्ता का आकलन किसान मृदा का रंग देखकर एवं मृदा की सुगंध से कर लेते है परन्तु वैज्ञानिक ढंग मृदा की गुणवत्ता जानने के लिए मृदा पैरामीटर का उपयोग किया जाता है मिट्टी की जटिल प्रकृति और मृदा का असाधारण रूप ,मृदा कार्य के संबंध में मृदा में उपस्थित तत्वो की विशेषताओं का चयन मृदा पैरामीटर से निर्धारित किया जाता है। मृदा निर्माण की प्रकृति के आधार पर, मृदा के संकेतकों का चयन अलग-अलग विशेषताओं के आधार पर भौतिक, रासायनिक और जैविक तीन व्यापक संकेतक रूप में वर्गीकृत किया गया है बहुत से भौतिक और रासायनिक मृदा की विशेषताएँ जैसे समय,पैत्रिक पदार्थ ,जलवायु और स्थलाकृति (सहज गुण) में स्थायी हैं। मृदा सूचक विशेषताओं का चयन निम्न पर आधारित होना चाहिए: (क) भूमि उपयोग (ख) मृदा के कार्य (ग) माप की विश्वसनीयता(घ) स्थानिक और लौकिक परिवर्तनशीलता (च) मृदा प्रबंधन में परिवर्तन के प्रति संवेदनशीलता (छ) निगरानी प्रणालियों में तुलना करना और (ज) आवश्यक कौशल का उपयोग कर व्याख्या करना

भौतिक गुण

मृदा कणाकार ,मृदा संरचना.आभासी घनत्व,सरंध्रता,समुच्चय और स्थिरता,मृदा संघनन,जलनिकास,जल धारण क्षमता ,अंतःस्यंदन ,मृदा की गहराई,मृदा तापमान आदि गुण सम्मलित है यदि मृदा के भौतिक गुण सही है तो रासायनिक और जैविक गुणो पर सकारात्मक प्रभाव पडता है ।

रासायनिक गुण

मृदा पीएच अभिक्रिया, मृदा रंग,मृदा चालकता, कार्बोनेट बाइ-कार्बोनेट ,धनायन बिनिमय क्षमता ,कार्बनिक पदार्थ ,मृदा नाइट्रोजन ,मृदा फोस्फोरस ,मृदा पोटेशियम एवं अन्य सूक्ष्म पोशक तत्व आदि गुण सम्मलित है

जैविक गुण

कार्बनिक पदार्थ की मात्रा ,जीवों की संख्या ,माइक्रोबियल बायोमास,श्वसन दर ,नेमाटोड समुदाय,एंजाइम गतिविधियों, खनिजीकरण,दूषित पदार्थो की जैव उपलब्धता आदि गुण सम्मलित है ।

सिचाई जल की गुणवत्ता

मृदा को स्वास्थ्य बनाए रखने के लिए सिचाई मे प्रयुक्त जल की गुणवत्ता का भी आकलन जरुरी है जलवायु परिवर्तन के कारण बढ़ते तापमान और वर्षा की घटनाओं की परिवर्तनशीलता के कारण भविष्य में कृषि प्रणालियों में बदलाव के कारण फसलों की सिंचाई के लिए पानी की मांग रहेगी,

मृदा का संरक्षण

मृदा संरक्षण का अर्थ उन सभी उपायों को अपनाना तथा कार्यान्वित करना है जो भूमि की गुणवत्ता को बढ़ाने और उसे बनाए रखने में मदद करते हैं। फसलों के उत्पादन के लिये मृदा में नमी संरक्षित करके जमीन की उत्पादकता को बढ़ाते हैं। इस प्रकार मुनाफायुक्त जमीन-प्रबन्ध कार्यक्रम को मृदा संरक्षण कह सकते हैं और देश के भूमि साधन एवं भूसम्पत्ति का बिना उचित व्यवहार या प्रबन्ध के कारण क्षरण होता रहा

फसल चक्र एवं दहलनी फसलो को उगाना

मृदा की गुणवत्ता को बनाये रखने के लिए फसल चक्र आवश्यक है जिससे की मृदा में पोषक तत्वो का संतुलन बना रहता है और मृदा में फसल वृद्धि करने की क्षमता भी बनी रहती है । मृदा की माँग के अनुसार फसलों का उत्पादन करने से मृदा का संक्षरण,पोषक तत्वो का संतुलित उपयोग एवं मृदा के भौतिक गुणों के विकास में भी मदद मिलती है।

एकीकृत पादप पोषक तत्व प्रबंधन

मृदा को स्वास्थ्य एवं गुणवत्तायुक्त बनाये रखने के लिए किसानो को एकीकृत पादप पोषक तत्व प्रबंधन युक्त खेती करनी चाहिए जिससे मृदा की उर्वरता एवं उत्पादकता का लगातार संतुलन बना रहे । एकीकृत पादप पोषक तत्व प्रबंधन से आशाय है कि उर्वरको ,जैव खादो , फसल अवशेष एवं जैव-उर्वरको आदि को विवेकपूर्ण एवं उचित ढंग से प्रयोग कर मृदा उत्पादकता एवं पर्यावरण संरक्षण के साथ ही फसलो के उत्पादन को बढाया जा सके और मृदा की उर्वरता शक्ति बनी रहे ।

उपसंहार

देश की बढ़ती हुई जनसंख्या की भोजनपूर्ति के लिए सघन खेती एवं हरित क्रान्ति के दुष्प्रभाव से मृदा गुणवत्ता और फसल उत्पादकता में निरंतर कमी रही है। मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन को ध्यान में रखते हुए फसलो में मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का उपयोग करना चाहिए।

ट्राइचिनेलोसिस : एक उपेक्षित परजीवी रोग

डॉ. सविता बिसेन सहायक प्राध्यापक, पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, अंजोरा, दाऊ श्री वासुदेव चंद्राकर कामधेनु विश्वविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)

ट्राइचिनेल्लोसिस, एक गंभीर जूनोटिक (जो मनुष्यों को संक्रमित कर सकता है) बीमारी है जो ट्राइचिनेल्ला नामक गोलकृमि से होती है। दुनिया भर में पाए जाने वाला यह गोलकृमि, अधिकांश स्तनधारियों एवं पक्षियों को संक्रमित कर सकता है, जबकि मनुष्य इस परजीवी की सभी प्रजातियों से संक्रमित होने के लिए अतिसंवेदनषील होते हैं। इस गोलकृमि की सबसे आम प्रजाति ट्राइचिनेल्ला स्पाइरेलिस है जो कि मनुष्यों, सूकर, चूहों, जंगली मांसाहारी ध्सर्वाहारी पषु एवं अन्य स्तनधारी जानवरों को संक्रमित करती है। इस रोग को ट्राइचिनोसिस भी कहते हैं। इस परजीवी के संक्रमण से मनुष्य के मांसपेषियों, आंतों और तंत्रिका तंत्र पर गहरा प्रभाव पड़ता है। यदि समय पर इसका उपचार न किया जाए, तो यह रोग जानलेवा भी हो सकता है। ट्राइचिनेल्लोसिस, संक्रमित मांस या मांस उत्पादों के सेवन से फैलता है।

संक्रमण एवं प्रसार ■ यह रोग सूकरों में बिना पका हुआ मांस खाने अथवा संक्रमित चूहा खाने से होता है। ■ मनुष्यों में यह रोग, संक्रमित जानवर का अधपका मांस या मांस उत्पाद खाने से फैलता है।

रोग का कारक ■ ट्राइचिनेल्लोसिस का मुख्य कारण ट्राइचिनेल्ला स्पाइरेलिस नामक सूतकृमि है। ■ यह कृमि षरीर में दो अवस्थाओं में पाया जाता है: लार्वा एवं व्यस्क रूप में ■ लार्वा रूप- ■ ट्राइचिनेल्ला स्पाइरेलिस का लार्वा संक्रमित मनुष्य या जानवर की मांसपेषियों में रहता है। ■ ये लार्वा कोषिकाओं द्वारा बनाई गई सिस्ट में सालों तक जिंदा रह सकते हैं। ■ ट्राइचिनेल्ला के लार्वा बहुत प्रचुर मात्रा में होते हैं और एक संक्रमित पषु के प्रतिग्राम मांसपेषी में कई सौ लार्वा हो सकते हैं। ■ ये लार्वा, मृत पषु के षरीर में लंबे समय तक जीवित रह सकते हैं जिसको खाने से संक्रमण फैलता है। ■ व्यस्क कृमि रूप- ■ व्यस्क कृमि पषु की आंत में प्रजनन करते हैं और लार्वा पैदा करते हैं। ■ ये लार्वा, आंत की दीवार में घुस जाते हैं, फिर लसीका और रक्त-प्रवाह के माध्यम से मांसपेषियों की कोषिकाओं में प्रवेष करते हैं।

सार्वजनिक स्वास्थ्य जोखिम: ट्राइचिनेल्लोसिस मनुष्यों की एक गंभीर बीमारी है। अनुमान है कि दुनिया भर में हर साल दस हजार लोगों में संक्रमण होता है। मनुष्यों में ट्राइचिनेल्लोसिस, आमतौर पर संक्रमित मांस (कच्चा या अधपका सूकर का मांस) खाने से होता है।

संक्रमण के लक्षण, निम्नलिखित चरणों में प्रकट होते हैं:-

प्रारंभिक चरण (संक्रमित मांस के सेवन के 1-2 दिन बाद, जब व्यस्क कृमि एवं उसके लार्वा आंतों में होते हैं) ■ उल्टी-दस्त, मतली ■ थकान, बुखार, भूख में कमी ■ पेट में तकलीफ

मध्य चरण (संक्रमण के 1 सप्ताह बाद, जब लार्वा मांसपेषियों में प्रवेष करते हैं) ■ बुखार, गंभीर सिरदर्द ■ ठंड लगना, खांसी ■ आंखों में सूजन ■ थकावट, मांसपेषियों में दर्द ■ त्वचा में खुजली या दाने ■ दस्त या कब्ज

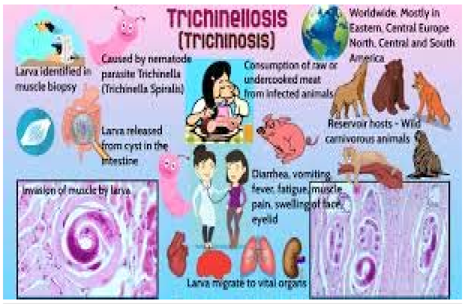

ट्राइचिनेलोसिस (इंटरनेट से)।

गंभीर संक्रमण में : ■ हृदय में सूजन ■ फेंफड़ों में जटिलताएं ■ स्नायु तंत्र की समस्या

बीमारी की गंभीरता, लार्वा की संख्या पर निर्भर करती है एवं अधिक लार्वा के सेवन के कारण, मृत्यु हो सकती है।

पषुओं में ट्राइचिनेल्लोसिस: ■ यह रोग मुख्यतः सूकर, जंगली सूकर, भालू, लोमड़ी, कुत्तों और अन्य सर्वाहारी/मांसाहारी पषुओं में पाया जाता है। ■ संक्रमित पषु अक्सर बाहरी रूप से स्वस्थ दिखते हैं जिससे रोग की पहचान कठिन हो जाती है। ■ सूकरों में यह रोग, संक्रमित मांस या मृत जानवरों के अवशेष खाने से फैलता है।

पशुओं में लक्षण

स्पष्ट लक्षणों का अभाव: कभी-कभी हल्का बुखार या कमजोरी

मांसपेषियों में जकड़न: हालांकि आमतौर पर पषुओं में लक्षण दिखाई नहीं देते हैं।

रोग का निदान: ट्राइचिनेल्ला का पता लगाने के लिए प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष तरीकों का इस्तेमाल किया जाता है जैसा कि विष्व पषु स्वास्थ्य संगठन द्वारा बताया गया है।

प्रत्यक्ष तरीके:-

■ मांस निरीक्षण प्रक्रिया हेतु, कांच की स्लाइड्स के बीच मांसपेशी के ऊतक को निचोड़कर, जांच करके, ट्राइचिनेल्ला लार्वा का प्रत्यक्ष पता लगाया जाता है।

■ एक संवेदनशील विधि में, मांसपेशी ऊतक को एंजाइमों के साथ पचाया जाता है, तत्पश्चात् अवशेष को केन्द्रित कर, सूक्ष्मदर्शी यंत्र से ट्राइचिनेल्ला लार्वा की जॉच की जाती है।

अप्रत्यक्ष परीक्षण ■ ये परीक्षण विधि संक्रमित जानवरों की प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया एवं लार्वा के विरूद्व एंटीबॉडी खोजने पर आधारित होती है। ये सीरालॉजिकल तरीके, अधिक संवेदनशील हो सकते हैं परन्तु इसके द्वारा षुरूआती संक्रमण का पता नहीं लगा सकते हैं। ■ हालांकि बड़ी संख्या में पषुओं की जांच हेतु सीरोलॉजिकल परीक्षा का उपयोग किया जा सकता है। ■ मनुष्यों में बीमारी के निदान हेतु नैदानिक संकेतों के साथ-साथ सीरोलॉजिकल परीक्षण का उपयोग किया जाता है। ■ ट्राइचिनेल्ला की विभिन्न प्रजातियों को पहचानने के लिए, आणविक परीक्षण विधि का उपयोग किया जाता है।

रोकथाम: घरेलू सूकरों में बीमारी को व्यापक रूप से फैलने से रोकने के लिए निम्नलिखित सुझावों का पालन करें:-

■ सूकर का मांस और जंगली जानवरों के मांस को 160°F (71°C) के आंतरिक तापमान पर पकॉए। तापमान सुनिष्चित करने के लिए, मीट थर्मामीटर का उपयोग करें। ■ आंच से हटाने के बाद कम से कम तीन मीनट तक मांस को काटें या खाएं नहीं। ■ छह इंच से कम मोटाई वाले सूकर के मांस को 5? या 15°c पर फ्रिज में रखें जिससे कि गोलकृमि नष्ट हो जाएंगे। परन्तु जंगली जानवरों के मांस में मौजूद राउंडवर्म परजीवी, लंबे समय तक फ्रिज में रखने से भी नहीं मरेंगे। ■ सूकरों को कच्चा कचरा खिलाने पर प्रतिबंध लगाएं। ■ ट्राइचिनेल्ला का पता लगाने हेतु, मांस निरीक्षण विधियों को अपनाएं। ■ ट्राइचिनेल्ला परजीवी के लार्वा को मारने हेतु माइक्रोवेव में खाना पकाने की सलाह नहीं दी जाती है। ■ मीट ग्राइंडर को अच्छी तरह से साफ कर इस्तेमाल करें।

■ कच्चे मांस को संभालने के बाद अपने हाथों को साबुन और पानी से 20 सेकंड तक अच्छी तरह धोएं जिससे कि दूसरे खाने में संक्रमण फैलने से रोका जा सके।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
छत्तीसगढ़

भिण्डी की नवीन किस्में

रोमा वर्मा (शाक सब्जी विभाग) महात्मा गांधी उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सांकरा, दुर्ग (छ.ग.)

भिन्डी किस्म शारदा की लहलहाती फसल

भिण्डी पुरानी दुनिया (अफ्रीका) की सौगात है। क्या आप जानते हैं कि विश्व में भारत भिण्डी उत्पादन में प्रथम स्थान पर है। एक एफ.ए. ओ. के रिपोर्ट (2021) के अनुसार भारत प्रतिवर्ष 5784 हजार टन भिण्डी का उत्पादन करता है। विश्व भिण्डी उत्पादन में भारत की कुल साझेदारी 72% की है। भारत प्रतिवर्ष भारी मात्रा में भिण्डी का निर्यात करता है जिससे भारत को विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है।

भिण्डी एक पौष्टिक सब्जी है। इसके कच्चे मुलायम फलों का उपयोग सब्जी के रूप में लोकप्रिय है। भिण्डी उत्पादन की दृष्टि से भारत की छटवीं महत्वपूर्ण सब्जी हैं। इसकी खेती रबी तथा खरीफ दोनों मौसम में व्यवसायिक स्तर पर तथा गृह वाटिका में अत्यंत लोकप्रिय है। भारत में भिण्डी की खेती 3.5 लाख हेक्टेयर भूमि में होती है। भिण्डी पर गहन अनुसंधान के फलस्वरूप पीत शिरा मोजेक विषाणु प्रतिरोधी किस्में विकसित की गई है। इसकी उत्पादकता 20 से 25 टन प्रति हेक्टेयर हो गई है। यदि किसान भाई भिण्डी की उन्नति किस्मों की अगात खेती वैज्ञानिक तौर तरीके से करें तो भारी मुनाफा प्रति इकाई भूमि से अन्य फसलों की तुलना में प्राप्त हो सकती है। आवश्यकता उन्नति किस्मों की खेती अगात करने की है जिससे बाजार में अच्छी कीमत प्राप्त होगी।

निम्नलिखित किस्मों में से किसान भाई एक किस्म चुनें तथा उसकी खेती वैज्ञानिक तरीके से करें।

किस्म	उपज क्विं./हे.	किस्म का विशेष गुण
1. अर्का अभय	125-150	पीत शिरा मौजेक के लिए प्रतिरोधी किस्म
2. अर्का अनामिका	125-150	फल पंचकोणीय, प्रथम तुड़ाई 55 दिनों बाद, पीतशिरा मौजेक के लिए प्रतिरोधी, दक्षिण भारत में उत्पादन हेतु बहुत अच्छी, उत्तरी भारत में उपज कम।
3. आजाद क्रांति	125-150	पीत शिरा मौजेक के लिए प्रतिरोधी, उत्तर प्रदेष के लिए उपयुक्त।
4.ए.ए.डी.एफ.	130-150	पीत शिरा मौजेक के लिए प्रतिरोधी।
5.गुजरात भिण्डी	70-100	फल 14-15 सेंमी. लंबे, प्रथम तोड़ाई 55-60 दिन बाद।
6.टी.एन हाइब्रिड-8	-	द. भारत में अच्छी उपज, उत्तरी, उत्तरी भारत में भी संतोषजनक, पीतशिरा मौजेक हेतु प्रतिरोधी।
7.पंजाब पद्मिनी	100-125	खेतों में पीतशिरा मौजेक हेतु प्रतिरोधी, जैसीड व चित्तीदार कपास की पहली तुड़ाई 8 सप्ताह बाद।
8.पूसा सावनी	120-125	ग्रीष्म व वर्षा दोनों में अच्छी उपज, पहले पीत शिरा मौजेक हेतु प्रतिरोधी परंतु अब क्षमता की कमी देखी गयी है।
9.पूसा मखमली	80-100	12-15 सेंमी., लम्बे फल, पीत शिरा मौजेक के लिए सुग्राहा होने के कारण अब उत्पादन में नहीं।
10.पूसा ए-4	100-120(ग्रीष्म) 175-200 (वर्षा)	12-15 सेंमी. लंबे फल, पीत शिरा मौजेक विषाणु के लिए प्रतिरोधी तथा एफिड व जैसिक कीटों के लिए सहिष्णु, तना व प्ररोह भेदक का आक्रमण कम।
11.एम.डी.यू.-1	-	पूसा सावनी के गामा विकिरण से प्राप्त, फल लगभग 20 सेंमी. लम्बे, प्रथम तोड़ाई 43 दिन बाद।
12.वर्षा उपहार	150-250	फल 18-20 सेंमी. लम्बे, प्रथम तोड़ाई 46-47 दिन बाद, पीतशिरा मौजेक के लिए प्रतिरोधी, तथा खेत में 'लीफ हापर' के लिए सहिष्णु।
13.शारदा	225-250	फल लाल रंग के, खेत में पीत शिरा मौजेक हेतु सहिष्णु तथा फल छेदक व चर्णिल आसिता के लिए सग्राहा। यह ए.के.एस. विश्वविद्यालय की देन है।
14.हिसार उन्नत	120-130	फल 15-18 सेंमी. लंबे, पीत शिरा रोग के लिए प्रतिरोधी।
15.काशी क्रांति	150-200	यह भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी द्वारा विकसित किस्म है। फल हरे रंग के 10-12 सेंमी. लंबे होते हैं। पीत शिरा मौजेक वायरस रोधी किस्म है।
16.काशी चमन	200-225	यह किस्म किसानों में आपकी अधिक उपज के कारण प्रसिद्ध है इसके फल हरे रंग के मध्यम आकार के होते है यह भी विषाणु रोधी किस्म है। इस किस्म का गर्मी तथा बरसात प्रदर्शन सराहनीय है।
17.काशी स्रीष्टि	150-200	यह किस्म भी पीत शिरा मौजेक विषाणु रोधी किस्म है। उपज अच्छी हरे फलों वाली पांच धारियों वाली किस्म है।
18.ई. एम. एस.-8	90-100	इस किस्म का विकास म्युटेशन क्रीडिंग द्वारा पी.ए.यू. लुधियाना से हुआ है उपज 85100 क्विं./हे.

शीतला कृषि सेवा केन्द्र
बंटी सिंह गुर्जर (बामौर वाले)
99267-31867, 83055-69923
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता

हमारे यहां धान, गेहूँ, सोयाबीन, सरसों, तिली एवं सब्जियों के बीज, खाद एवं उच्चकोटि की कीटनाशक दवाईयां उचित मूल्य पर मिलती है।
पता: पशु अस्पताल के सामने, भितरवार रोड, डबरा ग्वालियर (म.प्र.)
01/203-24

भूमि का बेहतर उपयोग : कृषि और सौर ऊर्जा का संगम

योगिता साहू (चतुर्थ वर्ष)
डॉ. देवेन्द्र कुमार कुर्रे (सहायक प्राध्यापक) लिंगों मुदीयाल कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केंद्र, केरलापाल, नारायणपुर (छ.ग.)
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर

"एग्रीवोल्टेइक" शब्द "कृषि" और "फोटोवोल्टेइक" शब्दों को मिलाकर बनाया गया है

"एग्रीवोल्टेइक" शब्द का इस्तेमाल मूल रूप से 2011 में डुप्राज़ एट अल (Dupraz et al. in 2011) द्वारा किए गए एक शोध में किया गया था और शुरुआती शोध ने संकेत दिया था कि भूमि उपयोग दक्षता 60-70% तक बढ़ सकती है।

एग्रीवोल्टेइक (Agrivoltaics) का मतलब है एक ही खेत की जमीन पर खेती और सौर ऊर्जा उत्पादन एक साथ करना। इस तकनीक में, सौर पैनलों को फसलों के ऊपर या बीच में लगाया जाता है, जिससे बिजली भी पैदा होती है और फसलों को कुछ हद तक छाया भी मिलती है जिससे खेत की जमीन को बेहतर उपयोग में लाया जा सकता है। आमतौर पर देखा जाता है कि जो किसान अपनी खेत में सौर पैनल लगवाते है और जिस जगह पर सौर पैनल लगा होता है उसके नीचे की ज़मीन को किसान उपयोग में नहीं ला पाते, तो ये तकनीक किसानों को सौर पैनल के नीचे की जमीन पर भी खेती करने में सहायता करेगा। इस तरह की कृषि प्रणाली में सौर पैनल को एक उचित ऊंचाई पर लगाया जाता है जिससे उसके नीचे आसानी से खेती की जा सके।

एग्रीवोल्टिक्स का महत्व

भूमि का दोहरा उपयोग

एग्रीवोल्टेइक का मुख्य उद्देश्य खेत की ज़मीन का अधिकतम उपयोग करना है। एक ही जमीन पर खेती करके और सौर ऊर्जा भी उत्पादन करके, किसान अपनी आय बढ़ा सकते हैं ।

फसलों को लाभ

सौर पैनलों की छाया से फसलों को कुछ हद तक कम सिंचाई और उच्च तापमान से बचाव मिलता है, जिससे उनकी पैदावार में सुधार हो सकता है.

ऊर्जा उत्पादन

सौर पैनल सौर ऊर्जा को बिजली में बदलते हैं, जिसे किसान अपने खेतों में प्रयोग कर सकते हैं या ग्रिड में बेच सकते हैं.

पर्यावरण के लिए

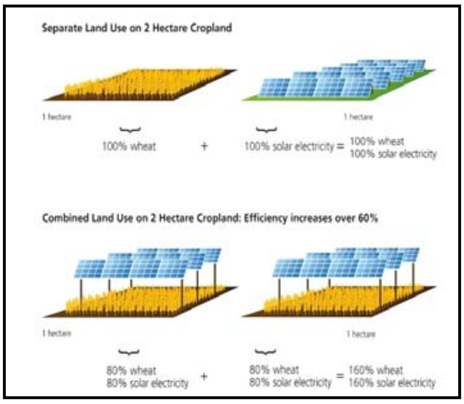

एग्रीवोल्टेइक नवीकरणीय ऊर्जा (renewable energy) के उपयोग को बढ़ावा देता है और पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों पर निर्भरता कम करता है, जिससे प्रदूषण कम होता है.

किसानों को आर्थिक लाभ

एग्रीवोल्टेइक किसानों को अतिरिक्त आय का स्रोत प्रदान करता है, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति मजबूत होती है.

भारत में एग्रीवोल्टेइक की संभावनाएं

भारत में मुख्यतः उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय (Tropical and subtropical climate) जलवायु देखा जाता है, इसलिए भारत में एग्रीवोल्टेइक की काफी संभावना है। खासकर उन क्षेत्रों में जहां पानी की कमी और कम पैदावार की समस्या है। सरकार भी इस तकनीक को बढ़ावा दे रही है और किसानों को प्रोत्साहित कर रही है कि वे इसे अपनाएं।

भारत में कृषि-वोल्टेइक को बढ़ावा देने वाली प्राथमिक सरकारी योजना कुसुम योजना (प्रधानमंत्री किसान ऊर्जा सुरक्षा एवं उत्थान महाभियान) है। यह योजना, 2018-19 के केंद्रीय बजट में घोषित की गई थी, जिसका उद्देश्य किसानों को अतिरिक्त सौर ऊर्जा उत्पन्न करने और उसे ग्रिड को बेचकर अपनी आय में वृद्धि करने में सक्षम बनाना है, अक्सर पहले बंजर भूमि पर। इसमें कृषि के सौरकरण के लिए घटक भी शामिल हैं जिसमें सौर पंपों के लिए सब्सिडी भी शामिल है।

12/2022-23

✍ डॉ. सतीश कुमार चक्रवर्ती (Farm Manager)
Krashi Vigyan Kendra, SANT KABIR NAGAR
Acharya Narendra Deva University of Agriculture
and Technology ,KUMARGANJ -AYODHYA (U.P.)

'किसान क्रेडिट कार्ड योजना'

'किसान क्रेडिट कार्ड योजना' किसानों के हित में संचालित बेहतरीन योजना है। इसके द्वारा सरकार किसानों की मदद करती है, जिससे किसानों को पैसे भारी भरकम ब्याज पर नहीं लेने पड़े और ना ही अपनी ज़मीन किसी साहूकार के पास गिरवी रखकर कृषि करनी पड़े। बल्कि 'किसान क्रेडिट कार्ड योजना' द्वारा किसान कम से कम लागत में फसल तैयार कर सके।

किसान क्रेडिट कार्ड योजना पूरे देश में लागू है और वाणिज्यिक बैंकों, सहकारी बैंकों और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा कार्यान्वित किया जाता है। केसीसी धारक दुर्घटना में मृत्यु/स्थायी विकलांगता व व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा योजना के अंतर्गत आते हैं। बैंक किसान की खेती के लिए उपलब्ध जमीन और किसान के क्रेडिट इतिहास व जिला स्तरीय तकनीकी समिति द्वारा तय वित्त की मात्रा के आधार पर किसान की ऋण के लिए योग्यता का आकलन करता है। केसीसी के दायरे में हाल ही में अल्पावधी के ऋण और खपत जरूरतों को भी शामिल करने के लिए व्यापक आधार दिया गया है। हाल ही में इस योजना के अंतर्गत पशुधन पालकों और मछुआरों को भी शामिल किया गया है।

किसान क्रेडिट कार्ड का उद्देश्य

किसान क्रेडिट कार्ड योजना का मुख्य उद्देश्य भारतीय किसानों को कृषि करते समय जो भी आवश्यकता जैसे-बीजों की खरीददारी, कृषि भूमि की जुताई, बीजों का रोपण, फसल की सिंचाई, फसल की कटाई, फसल को शीत गृह में रखने का खर्चा, फसल को मण्डी तक ले जाने का खर्चा आदि कार्य को करने के लिए जो भी वित्त की आवश्यकता होती है, उसके लिए लघु अवधि (शोर्ट टर्म) धन राशि की व्यवस्था करना, जिससे किसानों को किसी साहूकार से ऋण लेने की आवश्यकता नहीं पड़े। कृषि से संबंधित कार्यों को करने के लिए किसान किसी साहूकार पर निर्भर ना हो और साहूकार किसान का नाजायज फायदा ना उठा सके।

ऋण के लिए पात्रता

* **सभी किसानों:** एकल/संयुक्त उधारकर्ता जो कि स्वामित्वधारी कृषक हैं।
* किराए के काश्तकार, जुबानी पट्टाधारी एवं सांझा किसान इत्यादि।
* स्व-सहायता समूह के किसान जिसमें किराए के काश्तकार, सांझा किसान शामिल हैं इत्यादि।
* किसान, बैंक शाखा के परिचालन क्षेत्र के अंतर्गत आना चाहिए।

योजना की मुख्य विशेषताएं

* किसानों को सभी संबंधित कृषि आवश्यकताओं के लिए एकल क्रेडिट सुविधा प्रदान करता है।
* किसान क्रेडिट कार्ड पर धारक का नाम, पता, जमीन की जानकारी, अवधि और वैलिडिटि अंकित होती है।
* फसल के कटाई के बाद सरल चुकौती कार्यक्रम प्रदान करता है।
* सरल दस्तावेज प्रक्रिया के कारण, किसान क्रेडिट कार्ड जल्दी और समय पर क्रेडिट प्रदान करता है।
* यह कार्ड 5 वर्षों तक वैध होगा, जिसमें से फसल ऋण तथा कार्यशील पूंजी का नवीकरण वार्षिक आधार पर कराना होगा, ताकि किसानों पर ऋण का बोझ ना पड़े।
* यह खाता एक विविध खाते के स्वरूप का होगा। इस खाते में कोई जमा शेष रहने की स्थिति में उस पर बचत खाते के समान ब्याज मिलेगा।
* किसान क्रेडिट कार्ड योजना (चष्ष्ट) से जितना धन निकालते हैं आपको उतने धन पर ही ब्याज देना पड़ता है।
* 3 लाख रु. तक कोई प्रोसेसिंग शुल्क नहीं लगाया जाता है।

केसीसी अंतर्गत ब्याज दर

वर्तमान समय में जितने भी क्रेडिट कार्ड जारी किए जाते हैं। उन सभी क्रेडिट कार्ड में से KISAN CREDIT CARD YOJANA (KCC) पर सबसे कम दर पर ब्याज लिया जाता है। क्योंकि यह किसानों के लिए जारी किया जाता है। इसलिए इस की ब्याज दर काफी कम रहती है। किसान क्रेडिट कार्ड योजना (KCC) पर 7 प्रतिशत की दर से ब्याज लिया जाता है जिसमें किसान सही समय पर लोन भुगतान कर देता है तो उसे 3 प्रतिशत की छूट भी प्रदान की जाती है। इस तरह से यदि किसान सही समय पर लोन का भुगतान करता है तो उन्हें 4% प्रतिवर्ष की दर पर लोन प्रदान किया जाता है।

केसीसी के तहत बीमा

केसीसी के तहत बीमा किसान क्रेडिट कार्ड धारक एक व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा द्वारा कवर निम्नानुसार हैं-

* **मृत्यु:** 50,000 रु. * विकलांगता: 25000 रु. *अधिकतम आयु: 70 वर्ष

केसीसी के लिए आवेदन कैसे करें

* किसान क्रेडिट कार्ड के लिए आवेदन करने के लिए आपको अपने निकटतम किसी कृषि संबंधी बैंक शाखा से संपर्क करना होगा।
* वहां जाकर आपको किसान क्रेडिट कार्ड योजना के बारे में सभी जानकारी प्राप्त करना होगा।
* जानकारी प्राप्त करने के बाद आपको एक आवेदन फार्म भरकर, आवश्यक दस्तावेजों की फोटोकॉपी करके जमा करना होगा।
* इसके पश्चात् बैंक आपके आवेदन पत्र के पात्रता की जांच करेगी। यदि आप किसान क्रेडिट कार्ड के लिए पात्र होंगे तो आपको किसान क्रेडिट कार्ड प्रदान कर दिया जाएगा।

चुकौती

* **खरीफ (एकल): (1 अप्रैल से 30 सितम्बर):** 31 जनवरी
* **रबी (एकल): (1 अक्टूबर से 31 अक्टूबर):** 31 जुलाई
* **दोहरी/ विविध फसलों (खरीफ एवं रबी फसलों)** : 31 जुलाई
* **दीर्घावधि फसलों (वर्ष भर):** 12 माह (पहले संवितरण की तारीख से)

उधारकताओं को चुकौती तारीख के अंतर्गत अपनी कृषि आय या अन्य जमाओं को केसीसी खाते में जमा करना होता है जो कि ब्याज एवं अन्य प्रभारों के साथ एक न्यूनतम ऋण राशि के बराबर होना चाहिए।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

हीड्रोपोनिक्स विधि से चेरी टमाटर की खेती और लाभ

✍ **हरि शंकर सिंह** रिसर्च स्कॉलर, (मृदा विज्ञान विभाग) चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर

✍ **अनिल कुमार** प्रोफेसर, मृदा विज्ञान विभाग) (चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

चेरी टमाटर एक छोटे आकार का, गोल और स्वादिष्ट टमाटर होता है, जो सामान्य टमाटर से आकार में छोटा परंतु पोषक तत्वों में समृद्ध होता है। इसका रंग आमतौर पर लाल, पीला या नारंगी होता है। यह सलाद, पास्ता, सूप, और स्नैक्स में बहुत उपयोग किया जाता है। हाइड्रोपोनिक प्रणाली में चेरी टमाटर की खेती एक उन्नत और लाभकारी कृषि तकनीक है, जो विशेष रूप से सीमित भूमि मे अधिक लाभ प्रदान करता, जल संकट और शहरी क्षेत्रों में खेती के लिए उपयुक्त है जिसमें चेरी टमाटर के पोषण लाभ, हाइड्रोपोनिक प्रणाली की विशेषताएं, बुआई की विधि, देखभाल, और आर्थिक लाभों पर विस्तृत जानकारी दी गई है।

चेरी टमाटर में निम्नलिखित मुख्य पोषक तत्व पाए जाते हैं?

* **विटामिन C:** रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है?
* **विटामिन A:** आंखों की रोशनी के लिए लाभदायक?
* **लायकोपीन:** एंटीऑक्सीडेंट, जो कैंसर और दिल की बीमारियों से बचाता है?
* **फाइबर:** पाचन तंत्र को स्वस्थ रखता है।
* **पोटैशियम:** रक्तचाप को नियंत्रित करता है?
* विटामिन K1: हड्डियों की मजबूती के लिए आवश्यक
* फोलेट (Vitamin B9): कोशिका निर्माण और मरम्मत में सहायक

हाइड्रोपोनिक खेती क्या है?

हाइड्रोपोनिक खेती एक आधुनिक कृषि तकनीक है जिसमें पौधों को मिट्टी के बिना, पोषक तत्वों से भरपूर जल में उगाया जाता है। इस प्रणाली में पौधों की जड़ें सीधे पोषक घोल में डूबी रहती हैं, जिससे उन्हें आवश्यक पोषक तत्व और ऑक्सीजन प्राप्त होते हैं। यह तकनीक पारंपरिक खेती की तुलना में अधिक उत्पादकता, जल संरक्षण और स्थान की बचत प्रदान करता है।

हाइड्रोपोनिक प्रणाली के प्रकार

* **NFT (Nutrient Film Technique):** एक पतली पोषक घोल की परत पौधों की जड़ों के ऊपर बहती है।
* **DWC (Deep Water Culture):** पौधों की जड़ें पोषक घोल में पूरी तरह डूबी रहती है।
* Ebb and Flow: पोषक घोल को समय-समय पर पौधों की जड़ों में प्रवाहित किया जाता है?

चेरी टमाटर की हाइड्रोपोनिक बुआई की विधि

1. **बीज चयन और अंकुरण:** उच्च गुणवत्ता वाले चेरी टमाटर के बीज चुनें (पूसा टमाटर-1)और उन्हें अंकुरण के लिए नर्सरी ट्रे में बोएं, एक नर्सरी ट्रे मे 104 पौध लगाये जा सकते हैं?

2. **हाइड्रोपोनिक सिस्टम की स्थापना:** एनएफटी या डीप वॉटर कल्चर जैसे सिस्टम का चयन करें, जो टमाटर की खेती के लिए उपयुक्त हैं।

3. **पोषक घोल तैयार करना:** पानी में आवश्यक पोषक तत्व मिलाकर घोल तैयार करें, जिसमें नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम आदि शामिल हों?

4. पौधों की रोपाई

अंकुरित पौधों को हाइड्रोपोनिक सिस्टम में सावधानी से स्थानांतरित करें ताकि उनके जेड टूटे ना।

5. प्रकाश और तापमान नियंत्रण

चेरी टमाटर के लिए 18-25°C तापमान और 12-16 घंटे की प्रकाश अवधि उपयुक्त होती है।

6. निगरानी और रखरखाव

पोषक घोल के पीएच स्तर (5.5-6.5) और ईसी स्तर की नियमित जांच करें।

देखभाल और रोग नियंत्रण

1. **नियमित निरीक्षण:** पौधों की जड़ों, पत्तियों और फलों की नियमित जांच करें ताकि किसी भी रोग या कीट की पहचान समय पर हो सके और उनका समाधान किया जा सके।

2. कीट और रोग नियंत्रण

हाइड्रोपोनिक प्रणाली में कीट और रोगों का खतरा कम होता है, फिर भी जैविक कीटनाशकों का उपयोग करें।

3. पौधों की छंटाई

अवांछित शाखाओं और पत्तियों को समय-समय पर हटाएं ताकि पौधे की ऊर्जा फल उत्पादन में केंद्रित हो।

4. समर्थन प्रणाली

पौधों को सहारा देने के लिए ट्रेलिस या स्टेक्स का उपयोग करें, जिससे पौधे सीधे और स्वस्थ रूप से बढ़ सकें।

आर्थिक लाभ और निष्कर्ष

आर्थिक लाभ

उच्च उत्पादन: हाइड्रोपोनिक प्रणाली में चेरी टमाटर का उत्पादन पारंपरिक खेती की तुलना में अधिक होता है।

जल संरक्षण: इस प्रणाली में जल की खपत पारंपरिक खेती से 80-90% कम होती है।

कम भूमि की आवश्यकता: सीमित स्थान में अधिक उत्पादन संभव है, जो शहरी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है।

रोग नियंत्रण: मिट्टी रहित प्रणाली होने के कारण मिट्टी जनित रोगों का खतरा नहीं होता।

निष्कर्ष: हाइड्रोपोनिक प्रणाली में चेरी टमाटर की खेती एक उन्नत और पर्यावरण के अनुकूल कृषि तकनीक है जो विशेष रूप से शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों, सीमित भूमि और जल संकट से प्रभावित क्षेत्रों में उपयुक्त है। इस प्रणाली में मिट्टी के बिना, पौधों की जड़ों को पोषक तत्वों से भरपूर जल में उगाया जाता है, जिससे उत्पादन में वृद्धि, जल की बचत और भूमि का कुशल उपयोग संभव होता है। हाइड्रोपोनिक खेती के माध्यम से चेरी टमाटर की गुणवत्ता में सुधार, रोगों और कीटों से सुरक्षा, और उत्पादन की निरंतरता सुनिश्चित की जा सकती है। इसके अलावा, यह प्रणाली जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से बचाव, जल की बचत और भूमि की उर्वरता में सुधार में सहायक है। इसलिए, हाइड्रोपोनिक प्रणाली में चेरी टमाटर की खेती न केवल किसानों के लिए आर्थिक रूप से लाभकारी है, बल्कि यह पर्यावरण की सुरक्षा और सतत कृषि विकास की दिशा में भी महत्वपूर्ण कदम है। यह तकनीक भविष्य की कृषि चुनौतियों का समाधान प्रस्तुत करती है और कृषि क्षेत्र में नवाचार को बढ़ावा देती है।

01/2023-24

नर्सरी में सब्जियों की उत्पादन तकनीक

सचिन जायसवाल एम.एससी. एजी. हॉर्टिकल्चर (शोध छात्र) जनता कॉलेज बकेवर इटावा (उ.प्र.)

रामेन्द्र कुमार यादव एम.एससी. एजी. हॉर्टिकल्चर (शोध छात्र)

अंशू यादव एम.एससी. एजी. हॉर्टिकल्चर (शोध छात्रा)

विगत कुछ वर्षों में हमारे देश की जनसँख्या को ध्यान में रखते हुए सब्जी उत्पादन में बहुत ही तीव्र गति से वृधि हुई है सब्जी उत्पादन की बढ़ोत्तरी में उतशील प्रजातियों, संकर प्रजातियों तथा उन्नत उत्पादन तकनीकों का विशेष योगदान रहा है। विभिन्न जलवायु तथा मिट्टी के प्रकारों की उपलब्धता के कारण हम अपने देश में दुनिया की लगभग सभी प्रकार की सब्जियां उगाने में सक्षम है। किसी भी उत्पादन प्रणाली की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि हम किस प्रकार के बीज बो रहे हैं। ज्यादातर सब्जिया बीजों से उगाई जाती है। बीजों की बीजाई आमतौर पर दो प्रकार से की जाती है। पहली प्रकार में बीजों को सीधा खेत में वो दिया जाता है। इनमें जैसे- मटर, भिण्डी, गाजर, मूली, लोबिया, शलजम, ग्वार, कद्दू प्रजाति की फसलें, पते वाली सब्जियों और फ्रेंचबीन आदि सब्जियाँ आती है। दूसरे प्रकार में पहले सब्जियों की नर्सरी (पैधशाला) में बीजाई करके पौध तैयार करते है और बाद पौध की खेत में रोपाई की जाती है, इनमें जैसे फूलगोभी, पत्तागोभी , गाठगोभी, टमाटर, बैगन, मिर्च, शिमला मिर्च, बुसल स्प्राउट, प्याज आदि सब्जी की फसले आती है

पौधशाला की परिभाषा

पौधशाला एक एसा स्थान है जहा पर सब्जियों की पौध तैयार की जाती है तथा पौधों को खेत में लगाने तक उनकी विशेष देखभाल की जाती है। यहां पर स्थान बदलकर रोपी जा सकने वाली सब्जियों जैसे- टमाटर, बैगन्, मिर्च, प्याज, गोभीवर्गीय सब्जियों के बीजों को कम स्थान में सघनता के साथ कम समय के लिए बोया जाता है। आजकल कद्दू वर्गीय सब्जियों को भी पौध तैयार कर रोपित किया जाता है। ऐसे स्थान को पौधशाला कहते हैं। नर्सरी का क्षेत्र सीमित होने के कारण देखभाल करना आसान एवं सस्ता होता है, परिणामतः विपरीत परिस्थितियों में भी स्वस्थ एवं अपेक्षित मात्रा में पौधे प्राप्त किये जा सकते है

पौधशाला के लिये उपयुक्त स्थान का चयन

स्वस्थ पौध तैयार करने के लिए पौधशाला के स्थान का चयन सबसे अधिक महत्वपूर्ण है पौधशाला के लिये स्थान का चयन करते समय निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना आवश्यक है। नर्सरी क्षेत्र को पालतू जानवरों और जंगली जानवरों से बचाने के लिए अच्छी तरह से बाड़ लगना चाहिए। अधिक छाया और अधिक वायुवेग वाला स्थान नहीं होना चाहिने नर्सरी जलापूर्ति के पास होनी चाहिए ताकि सिंचाई आसानी से हो सके। चयनित क्षेत्र ऊँचाई पर अच्छी तरह से जल निकासी और जल जमाव से मुक्त होना चाहिए। दक्षिण-पश्चिमी दिशा से सूर्य का प्रकाश सबसे उपयुक्त होता है। नर्सरी (पौधशाला) के लिए हमेशा दोमट या बलुई चेमट मिट्टी, जिसमे जीवाश की मात्रा अधिक हो, और मिट्टी पानी अधिक भारण कर सके। मिट्टी का पीएच मान लगभग 6 से 7 के बीच होना चाहिए।

पौधशाला व पौध तैयार करने में सावधानियां

नर्सरी बेड को मौसम और फसल के अनुसार तैयार करना चाहिए। बरसात के मौसम में उठी हुई (धरातल से 15 सेमी. उच्ची) क्यारियां तैयार की जाती है, लेकिन सर्दी और गर्मी के मौसम में फ्लैट बेड तैयार करना चाहिए। पौधशाला की क्यारियों को तैयार करने से पहले मिट्टी की जुताई करके भुरभुरा कर लेना चाहिये और उसके बाद मिट्टी से पास, पुरानी जड़ों के टुकड़ों व पत्थर हटा कर भूमि को समतल किया जाना चाहिए। क्यारियों को पूर्व और पश्चिम दिशा में तैयार करना चाहिए और क्यारियों पर बीज की बुवाई के लिए उत्तर से दक्षिण दिशा की पंक्तियाँ बनानी चाहिए। नर्सरी बेड का साइज 3 मी×1मी×15 सेंमी है। लम्बाई आवश्यकतानुसार घटाई या बड़ाई जा सकती है, परन्तु चौड़ाई 1.20 मीटर से अधिक नहीं होना चाहिए। दो क्यारियों के बीच में 30-40 सेंटीमीटर के बीच अन्तराल रखें क्यारी बनाते समय प्रति 10 वर्ग मीटर में लगभग 20 से 25 कि.ग्राम सडी गोबर की खाद व ट्राइकोडर्मा 1:50 के अनुपात में मिलाएं। इसके साथ ही 200 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट तथा 15-20 ग्राम इंडोफिल एम 45 अथवा बाविस्टन या कैप्टान नामक फाजूंदनाशक और मिथाईल पैराथियॉन नामक कीटनाशक अच्छी तरह से क्यारी में मिलाएं। यदि मिट्टी भारी है तो प्रति वर्ग मीटर 2-3 किलो रेत मिलाएं ताकि बीज उभरने में बाधा न हो। मई-जून के महीनों में जब तापमान लगभग 45ए से. तक बढ़ जाता है। यह अवधि पौधशाला भूमि को सौर उर्जा से रोगमुक्त करने हेतु उपयुक्त है। इसके लिये पहले नर्सरी क्षेत्र की अच्छी तरह जुलाई कर लें व उसमें गोबर की खाद मिला कर भूमि की सिंचाई करें। यदि भूमि को पहली बार उपयोग किया जा रहा है तो इसे फफूंद रहित करने के लिये इसको फॉरमैल्डिहाइड नामक रसायन से उपचार करना आवश्यक है 25 मि.ली. फॉरमैल्डिहाइड को 1 लीटर पानी में मिलाकर घोल बनाएं तथा पौधशाला के लिए चुने गए स्थान पर अच्छी तरह छिडकाव करके 15 से 20 सेंटीमेटर की गहराई तक भिगो दें। दवाई डालने के बाद क्यारियों को प्लास्टिक की चादरों से इस तरह ढकना चाहिये, कि रसायन की गैस बाहर न निकल पाये, एक सप्ताह के बाद चादरों को हटा देना चाहिए और क्यारियों की 3-4 बार जुताई करके छोड़ दे जिससे रसायन का असर समान हो जाए। इसके 15 दिन बाद बुबाई के लिए तैयार करें। बीज बोते समय दवाई की महक नहीं होनी चाहिए, तभी बीज का जमाव अच्छा होता है बीज का बोजोपचार करने के लिए प्रति 100 ग्राम बीज को 2 ग्राम ट्राइकोडर्मा एसपीपी दवा से उपचारित करना चाहिए। इसके आलावा, अन्य विकल्प में 1 किलोग्राम बीज को 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम 50% WP दवा से कर सकते हैं। बीज उपचार के लिए बीजों को 50 डिग्री सेंटीग्रेट के गर्म पानी में 15 से 20 मिनट तक डुबा कर रख सकते हैं। उस को छाया में सुखा कर बीजाई कर सकते है। नर्सरी बेड पर 10 से 25 ग्राम टूइकोर्डमा एसपीपी पाउडर का प्रति 100 वर्ग के हिसाव से उपयोग करना चाहिए। बीज को बुवाई 5 से. मी. दूर पंक्तियों में 1 से.मी गहराई पर करें। तत्पश्चात बीज को मिट्टी या गोबर की खाद की पतली परत से ढक दें। बीजाई के तुरंत बाद क्यारियों को सूखी घास से ढक दें, जिससे मिट्टी में नमी बनी रहेगी व बीज अंकुरण शीघ्र होगा। सर्दी में कम तापमान के कारण बीज का जमाव देर से होता है, जल्दी और ज्यादा अंकुरण करने के लिये नर्सरी को पोलीथीन की सफेद पारदर्शी सीट से ढक दें। इस घास को बीज अंकुरण शुरु होते ही हटाना बहुत आवश्यक हेता है। बीज अंकुरण के बाद, यदि बहुत अधिक तापमान (> 30° C) है, तो क्यारियों को हरे हरे काले रंग के 50% या 60% शेडिंग नेट से कवर किया जाना चाहिए, जो जमीन से लगभग 60-90 सेंमी ऊपर होता है। पौध जब 10 से 15 सेंटीमीटर लम्बी होने या उसमें 4 से 6 पत्तियाँ निकल आयें तो खेत में लगाने के लिए तैयार होती है। टमाटर, बैगन, मिर्च व गोभी वर्गीय सब्जियों में यह अवस्था सामान्यतः 4 से 6 सप्ताह में आती है, जबकि प्याज की पौध 8 सप्ताह में तैयार होती है।

नन्दिनी इन्टरप्राइजेज खाद बीज एवं कीटनाशक

प्रो. रामदीन कुशवाह
84610-11860

हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती हैं

पता : चीनोर रोड, छीमक, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)

04/2023-24

सर्वाधिक लाभदायक कृषि प्रणालियां

दीपचन्द निषाद (शोध छात्र) सस्य विज्ञान विभाग, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय जौनपुर (उ.प्र.)

डॉ. सुप्रिया (सहायक प्राध्यापक) कृषि अर्थशास्त्र विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या (उ.प्र.)

अंकित तिवारी कृषि अर्थशास्त्र विभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौ. वि.वि. कानपुर (उ.प्र.)

लाभदायक कृषि प्रणालियां: कृषि का विविधीकरण किसानों के लिए आय बढ़ाने और जोखिम कम करने का महत्वपूर्ण साधन बन गया है। यह पशुपालन, मत्स्य पालन, मशरूम उत्पादन आदि के साथ समन्वित रूप से कार्य करती है। नीचे कुछ प्रमुख लाभदायक कृषि प्रणालियों का विस्तृत विवरण दिया जा रहा है, जिनके माध्यम से किसान अपनी आजीविका को सुदृढ़ कर सकते हैं। इन प्रणालियों में अनाज उत्पादन के साथ अन्य व्यवसायों का समन्वय किया जाता है जिससे किसानों को अतिरिक्त आय प्राप्त होती है। इस अध्ययन में किसानों को उनकी भूमि के आकार के आधार पर तीन वर्गों में विभाजित किया गया है: सीमांत (Marginal), लघु (Small), और मध्यम (Medium)।

1. अनाज + डेयरी (Cereals + Dairy)

यह प्रणाली किसानों को अनाज उत्पादन के साथ-साथ पशुपालन का अवसर प्रदान करती है। इसके अंतर्गत धान, गेहूँ आदि मुख्य फसलों के साथ गाय, भैंस जैसे दुग्ध उत्पादक पशुओं का पालन किया जाता है। इस प्रणाली में डेयरी व्यवसाय से प्राप्त अतिरिक्त आय ने किसानों की आर्थिक स्थिति में सकारात्मक योगदान दिया है। सीमांत किसानों हेतु भी यह प्रणाली लाभदायक साबित हो रही है।

विवरण:

सीमांत कृषक: सीमित संसाधनों के बावजूद इन किसानों की औसत वार्षिक आय 89,976.535 है।

लघु कृषक: थोड़ी बड़ी भूमि और पशुओं की संख्या होने के कारण इनकी औसत आय ?1,15,982.023 पाई गई।

मध्यम कृषक: बेहतर संसाधन प्रबंधन और पशुधन के अधिक उपयोग से इनकी औसत आय ?1,31,971.217 रही।

समग्र औसत: इस श्रेणी की कुल औसत आय रु. 94,468.17 रही।

आर्थिक लाभ: * डेयरी उत्पादों जैसे दूध, दही, मक्खन, और घी की बिक्री से नियमित आय। * पशुओं से प्राप्त गोबर का उपयोग जैविक खाद के रूप में किया जा सकता है जिससे रासायनिक उर्वरकों की लागत कम होती है। * पशुधन बीमा योजना और सरकारी सब्सिडी का लाभ।

चुनौतियाँ: * पशुओं के चारे और स्वास्थ्य देखभाल पर खर्च।* दुग्ध उत्पादों की उचित बाजार कीमत प्राप्त करने में कठिनाई।

समाधान: * स्वच्छ डेयरी प्रबंधन तकनीकों को अपनाना। * दुग्ध सहकारी समितियों से जुड़ाव।

2. अनाज + डेयरी + सब्जियाँ (Cereals + Dairy + Vegetables): यह प्रणाली सब्जी उत्पादन को शामिल करने के कारण अधिक लाभप्रद होती है। इस प्रणाली में सब्जियों की जल्दी परिपक्वता एवं बाजार मांग के कारण किसानों की आय में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। डेयरी एवं सब्जियों का समन्वय आर्थिक स्थिरता प्रदान करता है। यह प्रणाली अनाज उत्पादन, डेयरी व्यवसाय और सब्जी उत्पादन का सम्मिलित रूप है।

विवरण:

सीमांत कृषक: सब्जियों से त्वरित आय प्राप्त होने के कारण इनकी वार्षिक आय रु. 1,54,305.24 रही।

लघु कृषक: इनकी औसत आय ?1,96,349.32 पाई गई।

मध्यम कृषक: बेहतर उत्पादन तकनीक के कारण इनकी आय रु. 2,19,386.99 रही।

समग्र औसत: इस प्रणाली के अंतर्गत समग्र आय रु. 1,77,384.21 रही।

आर्थिक लाभ: * सब्जियों की त्वरित बिक्री से दैनिक आय का स्रोत। * डेयरी व्यवसाय से दूध व उसके उत्पादों की बिक्री। * फसलों एवं सब्जियों के अवशेष का उपयोग पशु चारे के रूप में किया जा सकता है।

चुनौतियाँ: * सब्जियों की खेती में रोग एवं कीट प्रबंधन की समस्या। * बाजार में सब्जियों के दाम में उतार-चढ़ाव।

समाधान: * उन्नत किस्मों की खेती एवं जैविक कीटनाशकों का उपयोग। * स्थानीय बाजार और मंडियों से जुड़ाव।

3. अनाज + मत्स्य पालन (Cereals + Fisheries): यह प्रणाली विशेष रूप से उन क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है जहाँ जल संसाधन उपलब्ध होते हैं। अनाज उत्पादन के साथ तालाबों में मछली पालन किया जाता है। मत्स्य पालन ने किसानों को अनाज उत्पादन के साथ अतिरिक्त लाभ दिया। यह प्रणाली जलाशयों के समीप स्थित क्षेत्रों के लिए अत्यधिक प्रभावी पाई गई।

विवरण:

सीमांत कृषक: इनकी वार्षिक आय ?1,31,103.29 पाई गई।

लघु कृषक: रु. 1,67,955.42 की औसत आय अर्जित करते हैं।

मध्यम कृषक: रु. 2,11,054.67 की आय प्राप्त करते हैं।

समग्र औसत: रु. 1,67,093.00 की औसत वार्षिक आय।

आर्थिक लाभ: * मछलियों की बिक्री से उच्च आय। * तालाब की गाद का उपयोग खेतों में जैविक खाद के रूप में किया जा सकता है। * जल स्रोतों का बेहतर उपयोग।

चुनौतियाँ: * मछलियों के रोग प्रबंधन की समस्या। * तालाब प्रबंधन की जटिलताएँ।

समाधान: * उन्नत मत्स्य पालन तकनीकों का उपयोग। * स्थानीय एवं राष्ट्रीय बाजारों तक पहुँच।

4. अनाज + डेयरी + मत्स्य पालन (Cereals + Dairy + Fisheries): यह प्रणाली विविध कृषि एवं पशुधन गतिविधियों का उत्कृष्ट उदाहरण है। इस प्रणाली में डेयरी और मत्स्य पालन का संयोजन अत्यधिक लाभदायक साबित हुआ। यह किसानों के लिए एक स्थिर आय स्रोत प्रदान करती है।

विवरण:

सीमांत कृषक: 1,57,525.19 की वार्षिक आय।

लघु कृषक: 2,12,725.82 की आय अर्जित करते हैं।

मध्यम कृषक: 2,67,926.42 की आय प्राप्त करते हैं।

समग्र औसत: इस श्रेणी की कुल औसत आय 2,19,220.01 रही।

आर्थिक लाभ: * विविध आय स्रोतों के कारण जोखिम कम। * मछली पालन और डेयरी व्यवसाय से निरंतर आय। * जैविक कृषि में तालाब की गाद एवं गोबर का उपयोग।

चुनौतियाँ: * प्रबंधन की जटिलताएँ। * मछलियों एवं पशुओं की देखभाल में अधिक श्रम की आवश्यकता।

समाधान: * वैज्ञानिक प्रबंधन तकनीकों को अपनाना। * सरकारी योजनाओं एवं अनुदानों का लाभ।

5. अनाज + पोल्ट्री (Cereals + Poultry): यह प्रणाली पोल्ट्री व्यवसाय को कृषि गतिविधियों के साथ जोड़ती है। इस प्रणाली में अनाज उत्पादन के साथ मुर्गी पालन किया जाता है। पोल्ट्री व्यवसाय ने सीमांत एवं लघु किसानों के लिए अतिरिक्त आय का साधन प्रदान किया। यह प्रणाली ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन में भी सहायक रही।

विवरण:

सीमांत कृषक: 1,26,200.39 की औसत वार्षिक आय।

लघु कृषक: 1,58,894.62 की आय।

मध्यम कृषक: 1,70,734.25 की आय अर्जित करते हैं।

समग्र औसत: 1,57,692.62 की आय रही।

आर्थिक लाभ: * अंडों एवं मुर्गियों की बिक्री से उच्च आय। * मुर्गियों की बीट का उपयोग जैविक खाद के रूप में। * पोल्ट्री से कम समय में अधिक लाभ।

चुनौतियाँ: * पोल्ट्री रोगों की समस्या। * बाजार मूल्य में उतार-चढ़ाव।

समाधान: * टीकाकरण एवं स्वच्छता प्रबंधन। * संगठित पोल्ट्री फार्मिंग।

6. अनाज + मशरूम (Cereals + Mushroom)

मशरूम उत्पादन तेजी से बढ़ता हुआ एक लाभकारी व्यवसाय है। मशरूम उत्पादन अनाज उत्पादन के साथ कम भूमि में अधिक आय प्राप्त करने की एक उत्कृष्ट प्रणाली है। मशरूम उत्पादन ने सीमांत किसानों को भी कम भूमि पर अधिक आय अर्जित करने का अवसर दिया। यह प्रणाली कृषि विविधीकरण का उत्कृष्ट उदाहरण है। विवरण:

सीमांत कृषक: 1,08,554.64 की वार्षिक आय।

लघु कृषक: 1,56,211.62 की औसत आय।

मध्यम कृषक: 2,00,099.47 की आय अर्जित करते हैं।

समग्र औसत: 1,50,078.81 की आय रही।

आर्थिक लाभ: * मशरूम उत्पादन से उच्च लाभ। * मशरूम उत्पादन के लिए कम स्थान की आवश्यकता। * फसल अवशेषों का उपयोग उत्पादन माध्यम के रूप में किया जा सकता है।

चुनौतियाँ: * मशरूम उत्पादन के लिए अनुकूल पर्यावरण की आवश्यकता।* बाजार तक पहुँच।

समाधान: * नियंत्रित वातावरण में उत्पादन तकनीक अपनाना। * प्रसंस्करण एवं विपणन में सुधार। इन लाभदायक कृषि प्रणालियों का समुचित प्रबंधन किसानों की आय में उल्लेखनीय वृद्धि कर सकता है। * मिश्रित कृषि प्रणाली किसानों के लिए अधिक सुरक्षित एवं लाभकारी विकल्प प्रदान करती है। * डेयरी, मत्स्य पालन, पोल्ट्री, और मशरूम उत्पादन जैसे व्यवसाय कृषि को एक स्थिर एवं सतत आर्थिक गतिविधि में परिवर्तित करने में सहायक सिद्ध हो रहे हैं। * इन प्रणालियों को बढ़ावा देकर न केवल किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाया जा सकता है, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को भी सशक्त किया जा सकता है। * इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अनाज + डेयरी + मत्स्य पालन और अनाज+डेयरी+सब्जियाँ जैसी मिश्रित कृषि प्रणालियाँ किसानों हेतु सबसे अधिक आय का स्रोत बन रही हैं। * इन कृषि प्रणालियों से किसानों की आजीविका बेहतर होती है और यह विभिन्न कृषि संसाधनों के समुचित उपयोग का उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। * डेयरी, मत्स्य पालन, और मशरूम जैसी गतिविधियाँ किसानों की आय में उल्लेखनीय वृद्धि करती हैं। * इन कृषि प्रणालियों को बढ़ावा देकर किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाया जा सकता है। * सीमांत एवं लघु किसानों के लिए सब्जी एवं मशरूम उत्पादन विशेष रूप से लाभकारी साबित हुए।

इस प्रकार, कृषि का विविधीकरण किसानों के जीवनस्तर को बेहतर बनाने एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सशक्त बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

✍ **सचिन कुमार मौर्य** (शोध छात्र) बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, बुंदेलखण्ड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

✍ **डॉ. मौसमी सैयद** (सहायक प्राध्यापक) बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, बुंदेलखण्ड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

✍ **डॉ. मनीष कुमार** (सहायक प्राध्यापक) बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

बीज प्राइमिंग प्रयोग से फसलों की उन्नत खेती

फसल के बीज का बीज प्राइमिंग: एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। बीज प्राइमिंग एक कृषि तकनीक है जिसमें बीजों को अंकुरित क्षमता तेज करने और गुणवत्ता बढ़ाने के लिए प्रयोग किया जाता है। जिसे बीजों को अंकुरण से पहले उपचारित करने के लिए उपयोग किया जाता है। इस प्रक्रिया में बीजों को कुछ समय तक पानी, पोषण तत्वों या रासायनिक पदार्थों से भिगोकर रखा जाता है ताकि वे अंकुरण के लिए तैयार हो सके यह बीजों के अंदर जीवन दायिनी प्रक्रियाओं को सक्रिय करने में मदद करता है।

बीज प्राइमिंग का उद्देश्य बीजों की सूजन और जल अवशोषण क्षमता को बढ़ाना है ताकि बीज अंकुरण के बाद जल्दी विकास करें और पौधों पर होने वाली बीमारियों के प्रति अधिक सहनशील हो सके।

बीज प्राइमिंग के प्रकार

बीज प्राइमिंग की विभिन्न विधियां हैं जिसका उद्देश्य बीजों की अकुरण दर को बढ़ाना और बीज स्वास्थ्य को बेहतर बनाना है।

1.हाइड्रोप्राइमिंग

यह सबसे सरल विधि है इस विधि में बीजों को 12 से 24 घंटे तक पानी में भिगोकर रखा जाता है। फिर बीज को सुखाया जाता है ताकि बीज अंकुरण के लिए तैयार हो सके। पानी बीजों के अंदर जल अवशोषण क्षमता को बढ़ाता है जिससे अकुरण प्रक्रिया तेज हो सके।

2.हॉट प्राइमिंग

इस विधि का उपयोग उन क्षेत्रों में किया जाता है जहाँ ठण्डी जलवायु के कारण अंकुरण धीमा होता है। इस विधि के बीजों को गर्म पानी में भिगोकर रखा जाता है। सामान्यतः पानी का तापमान 40 से 50 डिग्री सेल्सियस के बीच होता है बीजों को इस पानी के कुछ घंटे तक रखा जाता है और फिर बीज सूखने के लिए रखा जाता है गर्म पानी बीजों के अंदर के जैविक प्रक्रियाओं को तेज करता है।

3.रासायनिक प्राइमिंग

इस विधि में बीजों को रासायनिक पदार्थ या उर्वरकों से उपचारित किया जाता है यह रासायनिक पदार्थ बीजों को ताजगी रोग प्रतिरोधक क्षमता और अंकुरण क्षमता के सुधार करने में मदद करते हैं। यह विधि खासकर तब प्रभावी होता है जब बीजों में किसी प्रकार का रासायनिक अभाव होता है।

4.बायोप्राइमिंग

इस विधि में बीज प्राईमिंग के लिए लाभकारी सूक्ष्मजीवों का प्रयोग शामिल है बायो प्राइमिंग अंकुरण क्षमता व बीजों को एक सुरक्षात्मक माइक्रोबियल कोविंग भी प्रदान करता है जो रोग व कीटों के लिये पौधों की प्रतिरोधक क्षमता में सुधार किया जा सकता है।

5.हार्मोप्राइमिंग

इस विधि के बीजों को कुछ पादप हार्मोन से उपचारित करते हैं जैसे जिबरेलिन एसिड ;ळ।3द्ध इंडोल-3 एसिटिक ;प्।।द्ध आदि प्रयोग किया जाता है उतेजित करने व बीजों को अंकुरण दर तेज किया जा सकता है।

6.ऑस्मोप्राइमिंग

इस विधि में बीजों के शर्करा, नमक या अन्य ऑस्मोटिक पदार्थ की घोल में भिगोया जाता है। यह प्रक्रिया बीजों की जलवायु सहनशीलता को बढ़ाती है

बीच प्राइमिंग के लाभ

बीज प्राइमिंग के कई महत्वपूर्ण लाभ है जो फसल उत्पादन में सुधार और कृषि उत्पादन में सहायक होते हैं।

- अंकुरण दर में बृद्धि।
- बीजों की जीवनशक्ति में सुधार।
- पर्यावरणीय तनाव के प्रति सहनशील।
- उत्पादकता में सुधार।
- कम बीजों का उपयोग।
- बीजों को बेहतर संरक्षण।
- रोगों के प्रति प्रतिरोध।

बीज प्राइमिंग के नुकसान

- यदि बीज प्राइमिंग की प्रक्रिया सही से ना की जाए तो बीजों में सड़न हो सकती है।
- कुछ बीजों के लिए बीज प्राइमिंग प्रक्रिया अधिक लाभकारी नहीं हो सकती।

चुनौतियाँ-

बीज प्राइमिंग एक प्रभावी तकनीक है लेकिन इसके साथ कुछ चुनौतियां भी है जैसे- ▪ अधिक जल अवशोषण। ▪ बीजों का सड़ना। ▪ प्राकृतिक परिस्थितियों में भिन्नता। ▪ वाणिज्यिक लागत।

प्राइमिंग विधियों का गलत चयन

इन चुनौतियों का सामना करने के लिए सही प्रशिक्षण, उपकरण और प्रौद्योगिकी का उपयोग जरूरी है।

बीच प्राइमिंग का कृषि में महत्व

बीज प्राइमिंग कृषि में एक अत्यंत लाभकारी तकनीक है जो बीजों को अंकुरण दर को बढ़ाती है पर्यावरण तनाव के प्रति सहनशीलता में सुधार करती है और फसल उत्पादन में वृद्धि करती है बीज प्राइमिंग करने बीजों की गुणवत्ता और जीवनशक्ति को भी बढ़ाया जा सकता है जिससे किसानों को अधिक उपज कम लागत और बेहतर आर्थिक लाभ प्राप्त करता है।

01/2023-24

✍शिखा मौर्या पी.एच.डी. (शोध छात्रा), मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन विभाग, सामुदायिक महाविद्यालय, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

✍डॉ. मुक्ता गर्ग (सह-प्राध्यापक), मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन विभाग, सामुदायिक महाविद्यालय, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

✍डॉ. अदिति दत्त (सहायक अध्यापिका), मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन विभाग, सामुदायिक महाविद्यालय, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

बाल संरक्षण एवं बाल अधिकार

किसी भी देश के लिए बच्चे भविष्य की पूंजी होते हैं। यह ऐसी संपत्ति है, जिन्हें पोषित करने के साथ-साथ संरक्षण की आवश्यकता होती है। यूनिसेफ के अनुसार, भारत में लगभग 29 मिलियन अनाथ बच्चे हैं, जो कुल बाल जनसंख्या का लगभग 4% है, लेकिन 5 लाख से भी कम बच्चे अनाथालयों में हैं। यदि सही मायने में कोई भी देश अपने देश की तरक्की करना चाहता है तो उसे बाल संरक्षण एवं उनके अधिकार की दिशा में ध्यान देने की आवश्यकता है।

भारत दुनिया के सबसे बड़े देशों में से एक है और इसकी जनसंख्या लगातार बढ़ रही है। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में बच्चों (0-18 वर्ष) की संख्या 472 मिलियन है जो देश की कुल जनसंख्या का 39 प्रतिशत हैं। संयुक्त राष्ट्र बाल कोष (यूनिसेफ) की 'स्टेट ऑफ द वर्ल्ड्स चिल्ड्रन 2024' रिपोर्ट के अनुसार, अगले 25 वर्षों में बच्चों की वैश्विक जनसंख्या लगभग 2.3 बिलियन तक स्थिर हो जाने का अनुमान है, जिसमें भारत का हिस्सा सबसे बड़ा, 350 मिलियन होने का अनुमान है। यूरोपीय देशों जैसे गाजा , हैती , सूडान , सीरिया , यूक्रेन और यमन में बच्चों की स्थिति बेहद ही चिंताजनक है। यूनिसेफ के अनुसार, 2023 से लेकर अब तक इसराइल- हमास युद्ध में गाजा में 17000 से अधिक बच्चे मारे जा चुके हैं जो की बेहद ही शर्मनाक है। और 473 मिलियन बच्चे ऐसे देश में रहते हैं जहां अक्सर हिंसक गतिविधियां होती रहती हैं। सुरक्षा की तलाश में अपने घरों से भागने के लिए मजबूर होते हैं या विस्थापित होते हैं। कुछ अनाथ हो जाते हैं या माता-पिता और देखभाल करने वालों से अलग हो जाते हैं, जिससे बाल संरक्षण का विषय एक गंभीर विषय बनकर उभरा है । यूरोपीय देशों के साथ-साथ भारत के लिए भी यह बहुत ही अहम हो जाता है।

बाल संरक्षण (जिसे बाल कल्याण भी कहा जाता है), जिसमें हिंसा, शोषण, दुर्व्यवहार, परित्याग और उपेक्षा से बच्चों की सुरक्षा की जाती है। बाल संरक्षण संभावित नुकसान के संकेतों की पहचान करना, दुर्व्यवहार के आरोपों या संदेहों का जवाब देना, बच्चों की सुरक्षा के लिए सहायता, सेवाएँ प्रदान करना और उन्हें नुकसान पहुँचाने वालों को जवाबदेह ठहराना शामिल है। बाल संरक्षण का प्राथमिक लक्ष्य यह सुनिश्चित करना है कि सभी बच्चे सुरक्षित रहें और उन्हें कोई नुकसान या खतरा न हो। शोध से पता चलता है कि बाल संरक्षण सेवाएँ समग्र तरीके से प्रदान की जानी चाहिए। इसका मतलब यह है कि सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक सभी पहलुओं पर ध्यान देते हुए बच्चों को संरक्षण प्रदान करना। **कुछ अत्यंत खतरनाक परिस्थितियां हैं जिनसे बच्चों को बचाया जाना चाहिए जो निम्नवत हैं-**

1. बाल श्रम: बाल श्रम का अर्थ है, पैसा कमाने के उद्देश्य से बच्चों को ऐसे कामों में संलग्न करना जो उन्हें उनकी बाल्यावस्था से वंचित करता हो, उन्हें विद्यालय जाने से रोकता हो तथा बच्चे के शारीरिक, मानसिक और सामाजिक विकास के साथ- साथ समग्र विकास को प्रभावित करता हो।

2. बाल विवाह: बाल विवाह से तात्पर्य, किसी व्यक्ति के वयस्क होने से पहले ही उसका विवाह करना है। बाल विवाह में छोटे बालक-बालिकाओं को कम आयु में ही उनके माता-पिता, परिवार और दोस्तों से अलग कर दिया जाता है, जब उन्हें देख- रेख और स्नेह की सबसे अधिक जरूरत होती है। बाल विवाह से उनका संपूर्ण विकास प्रभावित होता है जो उनको पूरे जिंदगी के लिए खतरनाक साबित होता है।

3. बाल यौन उत्पीड़न: बाल यौन उत्पीड़न में किसी बड़े व्यक्ति अथवा अधिक शक्तिशाली व्यक्ति द्वारा यौन संबंध बनाने के लिए किसी बच्चे का शारीरिक और मानसिक उत्पीड़न करना शामिल है। इसका अपराधी सामान्यतः कोई वयस्क ही होता है परंतु कई बार यह बच्चे से बड़ा अथवा उससे अधिक शक्तिशाली कोई अन्य बच्चा भी हो सकता है।

4.शारीरिक दंड: शारीरिक दंड में बच्चों पर वयस्कों द्वारा उनकी पिटाई किया जाना और उसके साथ हिंसक व्यवहार करना शामिल हैं। कई बार यह भ्रम फैलाया जाता है समाज के द्वारा कि सभी बच्चों को माता-पिता या घर के अन्य सदस्यों द्वारा प्यार किया जाता है जो कि पूरी तरीके से सत्य नही है। कुछ बच्चों को घर पर अथवा विद्यालय में मारा-पीटा जाता है जिसके फलस्वरूप बच्चों का शारीरिक एवं मानसिक उत्पीड़न होता है।

5.तस्करी: बच्चों का अवैध व्यापार, यानी वह बच्चा जो 18 वर्ष से कम आयु का है, जिसे देश के भीतर अथवा बाहर शोषण का प्रयोजन के लिए रोजगार पर नियुक्त किया गया, ले जाया गया, स्थानांतरित किया गया, रखा गया अथवा प्राप्त किया गया है। बच्चों के अवैध व्यापार से भारत में अनैतिक व्यापार निवारण अधिनियम 1956 में पारित किया गया था जिसका उद्देश्य महिलाओं और बच्चों के अवैध व्यापार को नियंत्रित करना है।

भारत में लगभग 29 मिलियन अनाथ बच्चे हैं, जो कुल बाल जनसंख्या का लगभग 4% है, लेकिन 5 लाख से भी कम बच्चे अनाथालयों में हैं (यूनिसेफ)। इसका आशय यह है कि भारत में गोद लेने की प्रक्रिया बहुत ही जटिल है, जिसपर महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा पुनः विचार और कार्य करने की आवश्यकता है। भारत में गोद लेने की दर में पिछले कुछ वर्षों में कमी आई है, हालांकि वर्ष 2024-25 भारत के लिए ऐतिहासिक रहा। गोद लेने की संख्या में काफी वृद्धि हुई है, जिसमें रिकॉर्ड 4,515 बच्चों को गोद लिया गया, जो 12 वर्षों में के सबसे सर्वाधिक है। इनमें से 4,155 घरेलू गोद लेने की संख्या थी, जो देश में कानूनी रूप से गोद लेने की बढ़ती जागरूकता को दर्शाता है।

केन्द्रीय दत्तक ग्रहण संसाधन प्राधिकरण (Central Adoption Resource Authority, CARA) भारतीय बच्चों को गोद लेने के लिए भारत में नोडल प्राधिकरण है। यह भारत सरकार का एक वैधानिक निकाय और महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के अंतर्गत प्राधिकरण है। CARA द्वारा चलाए गए अभियान से 8,598 नए बच्चों को गोद लेने की श्रेणी में शामिल किया गया है। जिससे यह सुनिश्चित होता है कि ज़रूरतमंद बच्चों को प्यार एवं सुरक्षा करने वाले परिवार मिलें। इसके अतिरिक्त गोद लेने की प्रक्रिया को और अधिक सुलभ बनाने के लिए राज्य सरकारों के समन्वय से 245 नई गोद लेने वाली एजेंसियां स्थापित की गई हैं।

दत्तक ग्रहण जागरूकता माह: दत्तक ग्रहण जागरूकता माह प्रतिवर्ष नवंबर में मनाया जाता है। यह केंद्रीय दत्तक ग्रहण संसाधन प्राधिकरण द्वारा कानूनी रूप से दत्तक ग्रहण प्रक्रिया के बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए की गई एक पहल है। महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा आयोजित यह महीना पूरे भारत में कानूनी दत्तक ग्रहण के महत्व को बढ़ावा देता है।

भारत में बाल संरक्षण अधिनियम: भारत में बाल संरक्षण से संबंधित कई महत्वपूर्ण अधिनियम हैं, इनमें से कुछ प्रमुख अधिनियम निम्नलिखित हैं-

1.किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2015 (Juvenile Justice Care and Protection of Children Act): यह अधिनियम उन बच्चों के लिए कानूनी ढांचा प्रदान करता है जिन्हें देखभाल और सुरक्षा की आवश्यकता है और साथ ही कानून का उल्लंघन करने वाले बच्चों के लिए भी। यह अधिनियम किशोर न्याय बोर्ड (JJB) और बाल कल्याण समितियों (CWC) की स्थापना का प्रावधान करता है।

2.बाल विवाह प्रतिषेध अधिनियम, 2006 (Prohibition of Child Marriage Act): बाल विवाह को यह कानून प्रतिबंधित करता है और ऐसे विवाहों को शून्य करता है। यह कानून बाल विवाह करने, कराने या उसमें सहायता करने वालों पर दंड लगाता है और लड़कों के लिए 21 वर्ष और लड़कियों के लिए 18 वर्ष की न्यूनतम आयु निर्धारित करता है।

3.यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम, 2012 (Protection of Children from Sexual Offences Act) पॉक्सो अधिनियम: यह अधिनियम बच्चों को यौन उत्पीड़न, यौन शोषण और पोर्नोग्राफी जैसे यौन अपराधों से बचाने के लिए बनाया गया है। यह 18 वर्ष से कम आयु के सभी व्यक्तियों को बच्चा मानता है और उनके साथ किसी भी प्रकार का यौन दुर्व्यवहार अपराध है। पॉक्सो अधिनियम ऐसे अपराधों के लिए कठोर दंड का प्रावधान करता है और पीड़ितों की पहचान की गोपनीयता बनाए रखने पर जोर देता है।

4.बालक अधिकार संरक्षण आयोग अधिनियम, 2005 (Commission for Protection of Child Rights Act): यह अधिनियम राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग और राज्य बाल अधिकार संरक्षण की स्थापना का प्रावधान करता है। ये आयोग बच्चों के अधिकारों के उल्लंघन की जांच करते हैं, बाल संरक्षण नीतियों की निगरानी करते हैं और बच्चों के हितों की रक्षा हेतु सिफारिशें करते हैं।

संदर्भ: डेटा संग्रह (Unicef.org, ncpcr.gov.in)

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

जामुन की खेती, किस्में एवं कीट प्रबंधन

✍राधा (शोध छात्रा) फल विज्ञान विभाग,आचार्य नरेन्द्रदेव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

✍डॉ. अतुल यादव (सहायक प्राध्यापक) फल विज्ञान विभाग,आचार्य नरेंद्रदेव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

जामुन एक महत्वपूर्ण स्वदेशी लघु फल है जिसका वाणिज्यिक महत्व है। इसे भारत के विभिन्न भागों में ब्लैक प्लम, इंडियन ब्लैक चेरी, राम जामुन आदि के नाम से भी जाना जाता है। यह पेड़ लंबा और सुंदर, सदाबहार होता है, जिसे आमतौर पर सड़कों और रास्तों पर छाया और हवा से बचाव हेतु उगाया जाता है। जामुन का मूल निवास स्थान भारत या ईस्ट इंडीज है। यह थाईलैंड, फिलीपींस, मेडागास्कर और कुछ अन्य देशों में भी पाया जाता है। जामुन को फ्लोरिडा, कैलिफोर्निया, अल्जीरिया, इज़राइल आदि सहित कई अन्य उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में सफलतापूर्वक पेश किया गया है। भारत में जामुन के पेड़ उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में बिखरे हुए पाए जाते हैं। यह हिमालय की निचली श्रृंखला में 1,300 मीटर की ऊंचाई तक और कुमाऊं की पहाड़ियों में 1,600 मी. तक भी पाया जाता है। यह उत्तर में सिंधु-गंगा के मैदानों से लेकर दक्षिण में तमिलनाडु तक भारत के बड़े हिस्सों में व्यापक रूप से उगाया जाता है। भारत में इसके कुल क्षेत्रफल के बारे में डेटा उपलब्ध नहीं है।

मिट्टी: जामुन का पेड़ कई तरह की मिट्टी में उगाया जा सकता है। हालाँकि, उच्च उपज क्षमता और अच्छे पौधे के विकास हेतु गहरी दोमट और अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी की आवश्यकता होती है। ऐसी मिट्टी में पर्याप्त नमी भी बनी रहती है जो इष्टतम विकास और अच्छे फलने के लिए फायदेमंद होती है। जामुन लवणीय और जलभराव वाली परिस्थितियों में भी अच्छी तरह से उग सकता है। हालाँकि, बहुत भारी या हल्की रेतीली मिट्टी पर जामुन उगाना किफायती नहीं है।

जलवायु: जामुन उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय जलवायु में उगना पसंद करता है। यह हिमालय की निचली श्रेणियों में 1300 मीटर की ऊँचाई तक भी उगता हुआ पाया जाता है। जामुन को उगने और फल लगने के समय शुष्क मौसम की आवश्यकता होती है। उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में, जल्दी बारिश फलों के पकने और उनके आकार, रंग और स्वाद के उचित विकास के लिए फायदेमंद मानी जाती है।

किस्में

राजा जामुन- जामुन की इस प्रजाति को भारत में अधिक पसंद किया जाता है. इस किस्म के फल आकर में बड़े, आयताकार और गहरे बैंगनी रंग के होते हैं। इसके फलों में पाई जाने वाली गुठली का आकार छोटा होते हैं। इसके फल पकने के बाद मीठे और रसदार बन जाते हैं।

सी.आई.एस.एच. जे : 45 - इस किस्म का विकास सेंट्रल फॉर सब-ट्रॉपिकल हॉर्टिकल्चर ,लखनऊ, उत्तर प्रदेश द्वारा किया गया है.इस किस्म के फल के अंदर बीज नहीं होते. इस किस्म के फल सामान्य मोटाई वाले अंडाकार दिखाई देते हैं.जिनका रंग पकने के बाद काला और गहरा नीला दिखाई देते है. इस किस्म के फल रसदार और स्वाद में मीठे होते हैं. इस किस्म के पौधे गुजरात और उत्तर प्रदेश में अधिक उगाये जाते हैं।

सी.आई.एस.एच. जे : 37- इस किस्म के फल गहरे काले रंग के होते हैं.जो बारिश के मौसम में पककर तैयार हो जाते हैं. इसके फलों में गुठली का आकार छोटा होता है. इसका गुदा मीठा और रसदार होता है।

काथा - इस किस्म के फल आकार में छोटे होते हैं. जिनका रंग गहरा जामुनी होता है. इस किस्म के फलों में गुदे की मात्रा कम पाई जाती है. जो स्वाद में खट्टा होता है. इसके फलों का आकार बेर की तरह गोल होता है।

गोमा प्रियंका -इस किस्म का विकास केन्द्रीय बागवानी प्रयोग केन्द्र गोधरा, गुजरात के द्वारा किया गया है. इस किस्म के फल स्वाद में मीठे होते है. जो खाने के बाद कसेला स्वाद देते है. इसके फलों में गुदे की मात्रा ज्यादा पाई जाती है.इस किस्म के फल बारिश के मौसम में पककर तैयार हो जाते हैं।

भादो- इस किस्म के फल सामान्य आकार के होते हैं जिनका रंग गहरा बेंगानी होता है। इस किस्म के पौधे पछेती पैदावार हेतु जाने जाते हैं। जिन पर फल बारिश के मौसम के बाद अगस्त महीने में पककर तैयार होते हैं। इस किस्म के फलों का स्वाद खटाई हेतु हुए हल्का मीठा होता है। उपरोक्त प्रजातियों के अलावा और भी कई किस्में हैं जिनकी अलग अलग प्रदेशों में उगाकर अच्छी पैदावार ली जाती है. जिनमें नरेंद्र 6, कोंकण भादोली, बादाम, जत्थी और राजेन्द्र 1 जैसी कई किस्में शामिल हैं। बीजों में कोई निष्क्रियता नहीं होती। ताजा बीज बोए जा सकते हैं। लगभग 10 से 15 दिनों में अंकुरण होता है। अगले वसंत (फरवरी से मार्च) या मानसून यानी अगस्त से सितंबर में रूटस्टॉक के रूप में उपयोग के लिए पौधे रोपने के लिए तैयार हो जाते हैं। एक साल पुराने अंकुरों पर कलियाँ लगाई जाती हैं, जिनकी मोटाई 10 से 14 मिमी होती है। कम वर्षा वाले क्षेत्रों में कलियाँ लगाने का सबसे अच्छा समय जुलाई से अगस्त है। जिन क्षेत्रों में बारिश आसानी से शुरू होती है और भारी होती है, वहाँ मई-जून की शुरुआत में कलियाँ लगाने का काम किया जाता है। कलियाँ लगाने की शील्ड, पैच और फ़ोर्कर्ट विधियाँ बहुत सफल साबित हुई हैं।

उर्वरक अनुप्रयोग: जामुन के पेड़ों को आम तौर पर खाद नहीं दी जाती। ऐसा इसलिए नहीं है कि उन्हें खाद की ज़रूरत नहीं होती या वे खाद के प्रति प्रतिक्रिया नहीं करते, बल्कि इसलिए कि वे काफी हद तक उपेक्षा को झेल सकते हैं। प्री-बिटिंग अवधि के दौरान लगभग 19 किलोग्राम फ़ाइनयार्ड खाद की वार्षिक खुराक और प्रति पेड़ 75 किलोग्राम फल देने वाले पेड़ों पर विचार किया जाता है। आमतौर पर, अंकुरित जामुन के पेड़ 8 से 10 साल की उम्र में फल देना शुरू करते हैं, जबकि ग्राफ्टेड या कली वाले पेड़ 6 से 7 साल में फल देना शुरू करते हैं। बहुत उपजाऊ मिट्टी पर, पेड़ों में अधिक वनस्पति विकास करने की प्रवृत्ति होती है जिसके परिणामस्वरूप फल देने में देरी होती है। जब पेड़ों में ऐसी प्रवृत्ति दिखाई दे, तो उन्हें कोई खाद और उर्वरक नहीं देना चाहिए और सिंचाई कम से कम करनी चाहिए और सितंबर-अक्टूबर और फिर फरवरी-मार्च में रोक देनी चाहिए। यह फल की कली बनने, फूल आने और फल लगने में मदद करता है। कभी-कभी यह प्रभावी साबित नहीं हो सकता है और यहां तक कि अधिक कठोर उपचार जैसे रिंगिंग और रूट प्रूनिंग का सहारा लेना पड़ सकता है। इसलिए, एक फल उत्पादक को जामुन के पेड़ों को खाद और उर्वरक देने में सतर्क रहना चाहिए और इसलिए, पेड़ों की वृद्धि और फलने के अनुसार खुराक को समायोजित करना चाहिए।

आठवीं सिंचाई: शुरुआती अवस्था में जामुन के पेड़ को बार-बार सिंचाई की आवश्यकता होती है, लेकिन पेड़ के स्थापित हो जाने के बाद, सिंचाई के बीच के अंतराल को बहुत कम किया जा सकता है। युवा पेड़ों को साल में 8 से 10 सिंचाई की आवश्यकता होती है। परिपक्व पेड़ों को केवल आधी संख्या की आवश्यकता होती है, जिसे मई और जून के दौरान लगाया जाना चाहिए जब फल पक रहे हों। शरद ऋतु और सर्दियों के महीनों के दौरान, जब मिट्टी सूखी हो, तो कभी-कभार सिंचाई की जा सकती है। यह पेड़ों को सर्दियों में पाले के बुरे प्रभावों से भी बचाएगा।

कीट-पतंगे: कीटों में सफेद मक्खी और पत्ते खाने वाले इल्लियां पेड़ को बहुत नुकसान पहुंचाती हैं।

1.सफ़ेद मक्खी (डायल्यूरोड्सयूजेनिया)-यह भारत के सभी भागों में जामुन के पेड़ को नुकसान पहुँचाती है। प्रभावित फलों की सतह पर कीड़े दिखाई देते हैं। सफ़ेद मक्खी को निम्न तरीकों से नियंत्रित किया जा सकता है। a. पेड़ के आस-पास स्वच्छता बनाए रखें। b. सभी प्रभावित फलों को तोड़कर नष्ट कर दें। c. पेड़ के तने के आस-पास की मिट्टी खोद दें ताकि प्रभावित फलों में मौजूद कीड़े और मिट्टी में सुप्त अवस्था में रहने वाले प्यूपा नष्ट हो जाएँ।

2. पत्ती खाने वाली इल्ली (केरिया सबटिलिस): यह इल्ली केवल कोयंबटूर में पाई जाती है। यह कीट पत्तियों को नुकसान पहुंचाता है और पेड़ को भी नुकसान पहुंचा सकता है। रोगोर 30 ई.सी. या मैलाथियान ज्ञ 0.1 प्रतिशत का छिड़काव करके इसे नियंत्रित किया जा सकता है।

3. अन्य कीट: उपरोक्त कीटों के अलावा जामुन की फसल को गिलहरियों और तोते-कौओं जैसे पक्षियों से भी गंभीर नुकसान होता है। इन्हें ढोल बजाकर या पत्थर फेंककर भगाना पड़ता है। रोगों में फफूंद जनित रोग एन्थ्रेक्नोज उल्लेखनीय है।

1. **एन्थ्रेक्नोज (ग्लोमेरेला सिंगुलता):** यह फफूंद पत्तियों पर धब्बे और फलों में सड़न पैदा करता है। प्रभावित पत्तियों पर छोटे-छोटे बिखरे हुए धब्बे दिखाई देते हैं, जो हल्के भूरे या लाल भूरे रंग के होते हैं। प्रभावित फलों पर पानी से भरे छोटे-छोटे गोल और दबे हुए घाव दिखाई देते हैं। अंततः फल सड़ जाते हैं और सिकुड़ जाते हैं। 0.2% डाइथेन जेड-78 या 4:4:50 सान्द्रता वाले बोर्डो मिश्रण का छिड़काव करने से रोग पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

पुष्पन और फलन: फूल पत्तियों की धुरी में शाखाओं पर लगते हैं। उत्तर भारतीय परिस्थितियों में, मार्च के पहले सप्ताह में पुष्पन शुरू होता है और अप्रैल के अंत तक जारी रहता है। मौसम की शुरुआत में पराग उर्वरता अधिक होती है। कलंक की अधिकतम ग्रहणशीलता पुष्पन के एक दिन बाद होती है। जामुन एक क्रॉस-परागण है और इसका परागण मधुमक्खियां, घरेलू मक्खियां और हवा द्वारा किया जाता है। हाथ से परागण करके अधिकतम फल प्राप्त किए जा सकते हैं, जब यह फूल आने के एक दिन बाद किया जाता है। इसके बाद, फल लगने में तीव्र गिरावट देखी जाती है। फूल खिलने के 3 से 4 सप्ताह के भीतर फूल और फल भारी मात्रा में गिरते हैं। बाद में प्राकृतिक रूप से फल गिरने की समस्या को GA3 60 पीपीएम के दो छिड़काव से कम किया जा सकता है। एक पूर्ण फूल खिलने पर और दूसरा फल लगने के 15 दिन बाद।

जामुन की वृद्धि और फल विकास के पैटर्न को तीन चरणों में विभाजित किया जा सकता है: पहला चरण फल लगने के 15-52 दिनों के बाद होता है जिसमें फल की धीमी वृद्धि होती है, दूसरा चरण फल लगने के 52 से 58 दिनों के बाद होता है जिसमें फल की तीव्र वृद्धि होती है और तीसरा और अंतिम चरण फल लगने के 58 से 60 दिनों के बाद होता है जिसमें फल की धीमी वृद्धि होती है और फल के वजन में बहुत कम वृद्धि होती है।

कटाई और उपज: जामुन के पौधे रोपण के 8 से 10 साल बाद फल देना शुरू करते हैं, जबकि ग्राफ्टेड पौधे 6 से 7 साल बाद फल देते हैं। हालाँकि, व्यावसायिक फल रोपण के 8 से 10 साल बाद शुरू होते हैं और तब तक जारी रहते हैं जब तक कि पेड़ 50 से 60 साल का न हो जाए। फल जून-जुलाई के महीने में पकते हैं। पूर्ण आकार में पके फल की मुख्य विशेषता गहरे बैंगनी या काले रंग की होती है। फल के पकने पर उसे तुरंत तोड़ लेना चाहिए, क्योंकि पके होने पर यह पेड़ पर नहीं रह सकता। पके हुए फलों को कंधे पर बैग लटकाकर पेड़ पर चढ़कर एक-एक करके हाथ से तोड़ा जाता है। फलों को किसी भी संभावित नुकसान से बचाने के लिए सावधानी बरतनी चाहिए। एक पूर्ण विकसित अंकुर वृक्ष से फलों की औसत उपज लगभग 80 से 100 किलोग्राम प्रति वर्ष होती है, तथा एक ग्राफ्टेड वृक्ष से फलों की उपज 60 से 70 किलोग्राम प्रति वर्ष होती है।

✍ कुलदीप सिंह (पीएचडी रिसर्च स्कॉलर), एग्रोनॉमी विभाग, सैम हिगिनबॉटम यूनिवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चर, टेक्नोलॉजी एंड साइंसेज, प्रयागराज, (उ.प्र.)

उत्तर भारतीय मैदानों में गेहूँ के फूलने और दाना भरने की अवस्था पर बढ़ते तापमान का प्रभाव

परिचय: भारत-गंगा के मैदान (Indo-Gangetic Plains - IGP) दुनिया के सबसे उपजाऊ और कृषि उत्पादक क्षेत्रों में से एक हैं, जो दक्षिण एशिया के लिए अनाज का कटोरा माने जाते हैं। गेहूं, यहां की एक प्रमुख फसल, खाद्य सुरक्षा के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है और लाखों लोगों के लिए भोजन का स्रोत है। हालांकि, जलवायु परिवर्तन, विशेष रूप से बढ़ता तापमान, गेहूं के उत्पादन के लिए एक गंभीर खतरा बन गया है। यह लेख बताता है कि कैसे बढ़ता तापमान गेहूं की दो महत्वपूर्ण अवस्थाओं–फूलने और दाना भरने–को प्रभावित कर रहा है और इसके ढ्ढनक्रमें फसल उत्पादन और खाद्य सुरक्षा पर क्या प्रभाव पड़ रहे हैं।

उत्तर भारतीय के मैदानों में गेहूं का महत्व: भारत-गंगा के मैदानों में गेहूं एक रबी फसल है, जिसे आमतौर पर नवंबर में बोया जाता है और मार्च-अप्रैल में काटा जाता है। यह क्षेत्र भारत के कुल गेहूं उत्पादन का 40त्र से अधिक योगदान देता है, जो इसे देश की खाद्य आपूर्ति का आधार बनाता है। हालांकि, गेहूं तापमान परिवर्तन के प्रति बहुत संवेदनशील है, खासकर इसके प्रजनन और दाना भरने की अवस्थाओं में। इष्टतम तापमान से थोड़ा सा भी विचलन उत्पादन में भारी कमी का कारण बन सकता है।

भारत-गंगा के मैदानों में बढ़ता तापमान: पिछले कुछ दशकों में, भारत-गंगा के मैदानों में औसत तापमान में लगातार वृद्धि हुई है, और गेहूं की बढ़ती अवधि के दौरान अधिक बार और तीव्र गर्मी की लहरें देखी गई हैं। **अध्ययनों से पता चलता है कि:**

- पिछले 50 वर्षों में गेहूं की बढ़ती अवधि के दौरान औसत तापमान में 1-2°C की वृद्धि हुई है।
- 35°C से अधिक तापमान वाली गर्मी की लहरें अब साल में पहले आने लगी हैं, जो अक्सर गेहूं के फूलने और दाना भरने की महत्वपूर्ण अवस्थाओं के साथ मेल खाती हैं।

गेहूं के फूलने पर प्रभाव

1. तेजी से विकास:

- बढ़ता तापमान गेहूं के विकास की दर को तेज कर देता है, जिससे फूलने की अवस्था जल्दी आ जाती है। हालांकि यह लाभदायक लग सकता है, लेकिन यह अक्सर इष्टतम पर्यावरणीय परिस्थितियों के साथ मेल नहीं खाता।
- जल्दी फूलने से टर्मिनल हीट स्ट्रेस (अंतिम गर्मी का तनाव) का खतरा बढ़ जाता है, जो दाने के निर्माण को गंभीर रूप से प्रभावित कर सकता है।

2. परागण क्षमता में कमी:

- फूलने की अवस्था के दौरान उच्च तापमान परागण क्षमता को कम कर सकता है, जिससे खराब निषेचन और कम दाने बनते हैं।
- अध्ययनों से पता चला है कि फूलने के दौरान 30एष्ट से अधिक तापमान गेहूं की उपज को 20त्र तक कम कर सकता है।

3. बढ़ती बंध्यता:

फूलने की अवस्था के दौरान गर्मी का तनाव स्पाइकलेट बंध्यता (spikelet sterility) का कारण बन सकता है, जिसमें फूल दाने नहीं बना पाते, जिससे उपज और कम हो जाती है।

4. दाना भरने की अवस्था पर प्रभाव

4.1. दाना भरने की अवधि में कमी: उच्च तापमान दाना भरने की अवधि को छोटा कर देता है, जिससे दानों को स्टार्च और अन्य पोषक तत्व जमा करने का समय कम मिलता है। इसके परिणामस्वरूप दाने छोटे, हल्के और कम गुणवत्ता वाले होते हैं।

4.2. गर्मी से प्रेरित दाना समाप्ति: दाना भरने की अवस्था के दौरान 35°C से अधिक तापमान दाना समाप्ति (kernel abortion) का कारण बन सकता है, जहां विकासशील दाने समय से पहले ही विकसित होना बंद कर देते हैं। यह घटना पारंपरिक गेहूं की किस्मों में विशेष रूप से देखी जाती है, जो गर्मी के प्रति कम सहनशील होती हैं।

4.3. स्टार्च संचय में कमी: गर्मी का तनाव स्टार्च संश्लेषण में शामिल एंजाइमों की गतिविधि को प्रभावित करता है, जिससे दानों में स्टार्च की मात्रा कम हो जाती है। इससे न केवल उपज कम होती है, बल्कि गेहूं की पोषण गुणवत्ता भी प्रभावित होती है।

क्षेत्रीय प्रभाव

भारत-गंगा के मैदानों में 40 करोड़ से अधिक लोग रहते हैं, जिनमें से अधिकांश गेहूं को अपने आहार का मुख्य स्रोत मानते हैं। बढ़ते तापमान के कारण गेहूं उत्पादन में कमी के गंभीर परिणाम हो सकते हैं:

खाद्य सुरक्षा: उपज में कमी से खाद्य कीमतों में वृद्धि और कमी हो सकती है, जिससे भूख और कुपोषण की समस्या बढ़ सकती है।

आर्थिक नुकसान: भारत-गंगा के मैदानों के किसान, जिनमें से अधिकांश छोटे किसान हैं, को आय में भारी कमी का सामना करना पड़ सकता है।

पलायन: कृषि उत्पादकता में गिरावट से ग्रामीण आबादी को रोजगार की तलाश में शहरी क्षेत्रों की ओर पलायन करने के लिए मजबूर होना पड़ सकता है।

अनुकूलन रणनीतियां: बढ़ते तापमान के प्रभावों को कम करने के लिए कई अनुकूलन रणनीतियाँ अपनाई जा सकती हैं:

1. गर्मी सहनशील किस्मों का विकास: ऐसी गेहूं की किस्मों का विकास और उपयोग करना जो फूलने और दाना भरने की अवस्था में उच्च तापमान को सहन कर सकें।

2. बुआई की तिथि में समायोजन: महत्वपूर्ण विकास अवस्थाओं के दौरान गर्मी के तनाव से बचने के लिए बुआई की तिथि को बदलना।

3. सिंचाई प्रथाओं में सुधार: गर्मी की लहरों के दौरान फसलों को पर्याप्त पानी उपलब्ध कराना।

4. कृषि-मौसम सलाह सेवाएं: किसानों को समय पर मौसम पूर्वानुमान और फसल प्रबंधन सलाह प्रदान करना।

निष्कर्ष

उत्तर भारतीय मैदानों में बढ़ता तापमान गेहूं उत्पादन के लिए एक गंभीर चुनौती बन गया है, खासकर फूलने और दाना भरने की अवस्थाओं में। इस क्षेत्र में उपज में भारी कमी का खतरा है, जो खाद्य सुरक्षा और आजीविका को खतरे में डाल सकता है। इस समस्या से निपटने के लिए जलवायु-सहनशील कृषि पद्धतियों, उन्नत प्रजनन तकनीकों और नीतिगत हस्तक्षेपों को मिलाकर एक बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। भारत-गंगा के मैदानों में गेहूं उत्पादन को सुरक्षित करके, हम लाखों लोगों के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित कर सकते हैं और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति लचीलापन बना सकते हैं।

संदर्भ

1. IPCC (2021). Climate Change 2021: The Physical Science Basis.
2. Lobell, D. B., et al. (2012). Climate Trends and Global Crop Production Since 1980.
3. FAO (2020). The State of Food Security and Nutrition in the World.

08/2023-24

वीरेंद्र कुमार, अनिल कुमार (शोध छात्र)
प्रवेश कुमर और विपिन (शोध छात्र)
अनिल कुमार सब्जी विज्ञान विभाग,
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी
विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

नसदार तोरई की वैज्ञानिक खेती

नसदार तोरई कद्दूवर्गीय सब्जियों में अत्यन्त ही महत्पूर्ण स्वास्थ वर्धक एवं पौष्टिक गुणों से भरपूर सब्जी है। इसका अंग्रेजी नाम रिज गार्ड तथा वानस्पतिक नाम लूफा अक्यूटेन्गुला है। इसकी खेती देश के लगभग सभी राज्यों में सुगमतापूर्वक की जाती है। इसके कोमल, मुलायम फल सब्जी के लिए उपयुक्त होते हैं। इसकी कोमल व मुलायम पत्तियों को भी सब्जी के रूप में उपयोग किया जाता है। इसके बीज में 18.3-24.3 प्रतिशत तेल व 18-25 प्रतिशत प्रोटीन पायी जाती है। इसके फलों में अधिक मात्रा में पानी होने के कारण इसकी तासीर ठण्डी होती है।

जलवायु एंव मृदाः नसदार तोरई की खेती के लिए गर्म एवं आर्द्र जलवायु की आवश्यकता होती है। इसकी खेती ग्रीष्म (जायद) व वर्षा (खरीफ) दोनों ऋतुओं में सफलतापूर्वक की जाती है। इसकी खेती के लिए 32-38 डिग्री सेन्टीग्रेट तापमान सर्वोत्तम होता है। तोरई की खेती उचित जल निकास वाली जीवांशयुक्त सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है। अच्छी पैदावार के लिए बलुई दोमट या दोमट मृदा अधिक उपयुक्त होती है। 6-7 पी. एच. मान वाली मृदा इसकी खेती के लिए आदर्श होती है।

उन्नत किस्में

सतपुतिया : यह उत्तर प्रदेश की प्रसिद्ध किस्म है। इसमें उभयलिंगी पुष्प आते हैं। इस किस्म में फल एकल या गुच्छों में आते हैं। इसका स्वाद काफी अच्छा एवं सुगन्धित होता है। फल का आकार गोल, थोड़ा लम्बा या अण्डाकार होता है। इसकी खेती बिहार के अलावा उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों बस्ती, गोरखपुर व कुशीनगर के तराई क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जाती है। सतपुतिया इन क्षेत्रों की एक महत्वपूर्ण सब्जी फसल है। भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी द्वारा हाल ही में एक नई किस्म काशी खुशी को विकसित गया है।

पूसा नसदार : इस किस्म को भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली द्वारा विकसित किया गया है। इसमें बुवाई से 60 दिनों में फूल आने शुरू हो जाते हैं। फल हल्का हरा व उस पर नसें उभरी हुई होती है। फल में पूर्ण विकसित गूदा, गुदे का रंग सफेद से हरा और सुगन्धित होता है। फल 12 -20 सेमी. लम्बे होते हैं। इसकी उपज क्षमता 150-160 कुन्तल प्रति हेक्टेयर होती है। यह किस्म गर्मी व वर्षा दोना ऋतुओं के लिए उपयुक्त है।

स्वर्ण मंजरीः इस किस्म को आई सी. ए.आर.आई.सी.ई.आर. (एच.ए.आर.पी.). रांची द्वारा विकसित किया गया है तथा इसे केन्द्रीय किस्म अनुमोदन समिति द्वारा सन् 2006 में खेती के लिए अनुमोदित किया गया है। इस किस्म के फल मध्यम आकार के हरे व धारीयुक्त होते हैं। यह किस्म चूर्णिल आशिता रोग के प्रति सहनशील है। फलों की तुड़ाई बुवाई के 65-70 दिनों बाद की जा सकती है। इसकी उत्पादन क्षमता 180-200 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है।

कल्याणपुर धारीदार : इस किस्म को चन्द्रशेखर आजाद कृषि विश्वविद्यालय कानपुर से विकसित किया गया है। यह एक अगेती किस्म है। फल हल्के हरे स्पष्ट धारियों वाले गुदेदार होते है। लतायें कम फैलने वाली तथा उन पर मादा फूलों की संख्या अधिक होती है। इस किस्म की औसत उपज 100-125 कुन्तल प्रति हेक्टेयर होती है।

पन्ना तोरई-1 (पीआरजी- 1) : इस किस्म को गोविन्द बल्लभ पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर द्वारा विकसित किया गया है तथा इसे केन्द्रीय किस्में अनुमोदन समिति द्वारा सन् 2001 में खेती के लिए अनुमोदित किया गया है इस किस्म के फल 15-20 रोगी लम्बे, गुम्बद आकार के होते है। बुवाई के 65 दिनों बाद फल तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते हैं। इस किस्म की उत्पादन क्षमता 100-120 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है।

हरिथमा (एल. ए.-1) : इस किस्म को केरल कृषि विश्वविद्यालय, केरल द्वारा सन् 2000 में विकसित किया गया है। इसके फल लगभग 46.5 सेमी. लम्बे, जिनका घेरा 20 सेमी. व फल भार 650 ग्राम होता है। फल का रंग हल्का हरा व आधार के पास हल्का घुमावदार होता है। इस किस्म की औसत उपज 132 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है तथा फल बुवाई के 95 दिनों बाद तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते हैं।

फुले सुजाता : इस किस्म का विकास महात्मा फूले कृषि विश्वविद्यालय, राहुरी, महाराष्ट द्वारा सन् 2003 में किया गया है। इसके फल हरे रंग के लगभग 33-34 सेमी. लम्बे होते है जिनका औसत भार 118 ग्राम होता है। बुवाई के 60-65 दिनों बाद फल तुड़ाई योग्य हो जाते है। इस किस्म की औसत उपज 188 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है। खेत की अवस्था में यह मृदुरोमिल आसिता (डाउनी मिल्ड्यू) के प्रति सहनशील है।

पंजाब सदाबहारः इस किस्म को पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना द्वारा विकसित किया गया हैं। फल पतले, लम्बे, धारीदार, मुलायम तथा थोड़े मुड़े हुए होते हैं। इसकी बुवाई मई से जुलाई तक की जा सकती है। इस किस्म की उत्पादन क्षमता 100-120 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है।

सतपुतिया : यह बिहार की स्थानीय किस्म है। इसमें उभयलिंगी पुष्प आते हैं। इस किस्म में फल एकल या गुच्छों में आते हैं। इसका स्वाद काफी अच्छा एवं सुगन्धित होता है। फल का आकार गोल, थोड़ा लम्बा या अण्डाकार होता है। इसकी खेती बिहार के अलावा उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों बस्ती, गोरखपुर व कुशीनगर के तराई क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जाती है। सतपुतिया इन क्षेत्रों की एक महत्वपूर्ण सब्जी फसल है। भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी द्वारा हाल ही में एक नई किस्म काशी खुशी को विकसित गया है।

काशी खुशीः यह सतपुतिया की अधिक उत्पादन देने वाली किस्म है। फल हल्के हरे होते हैं तथा इस पर 10 गहरी हरी लम्बत धारी पायी जाती है। प्रति पौध लगभग 140 फल लगते है जो कि 5-6 के गुच्छों में आते हैं। 5.24-6.77 कि.ग्रा. प्रति पौध उपज होती है जिसे कि 8-10 तुड़ाई में प्राप्त किया जा सकता है।

खाद एवं उर्वरकः अच्छी पैदावार के लिए 20-25 टन सड़ी गोबर की खाद खेत की तैयारी के समय खेत में मिला देते हैं। इसके अलावा 30-35 कि.ग्रा. नत्रजन, 25-30 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 25-30 कि.ग्रा. पोटाश की प्रति हेक्टेयर आवश्यकता होती है। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय खेत में डालते हैं। नत्रजन की शेष आधी मात्रा बुवाई के 30-40 दिन बाद टाप ड्रेसिंग के रूप में जड़ों के पास देना चाहिए। बुवाई का समय ग्रीष्म कालीन फसल की बुवाई फरवरी-मार्च तथा वर्षाकालीन फसल की बुवाई जून-जुलाई में करनी चाहिए। एक हेक्टेयर क्षेत्रफल के लिए 5 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है।

बुवाई की विधिः बुवाई के लिए नाली (चैनल) विधि सबसे उत्तम है। इस विधि में खेत की तैयारी के बाद सबसे पहले लगभग 2.5-3.0 मी. की दूरी पर 45 सेंटीमीटर चौड़ी और 30-40 सेंटीमीटर गहरी नालियां बनाकर तैयार कर लेते हैं। इन नालियों के दोनों किनारों पर 30-80 सेमी. की दूरी पर बीज की बुवाई करते हैं। एक जगह पर कम से कम कम 2 बीज लगाएं, क्योंकि बीज अंकुरण के बाद एक पौधा निकाल देते हैं।

सिंचाईः नसदार तोरई की वर्षाकालीन फसल के लिए सिंचाई की आवश्यकता नही होती है। वर्षा न होने की स्थिति में यदि खेत में नमी की कमी हो तो सिंचाई कर देनी चाहिए। कालीन फसल की पैदावार सिंचाई पर ही निर्भर करती है। गर्मियों में 5-6 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए। पौधों को सहारा देना सामान्यतया ग्रीष्मकालीन फसल में पौधों को चढ़ाने की आवश्यकता नहीं होती है लेकिन वर्षा कालीन फसल में पौधों को बढ़ने के साथ ही ट्रेसिस या पण्डाल बनाकर चढ़ा देना चाहिए इससे गुणवत्तायुक्त अति होती है।

खरपतवार नियंत्रणः खेत को खरपतवार मुक्त रखने के लिए अन्तः सस्य कि जैसे निराई, गुड़ाई इत्यादि समय- समय पर करते रहना चाहिए।

पलवार का प्रयोगः बुवाई के बाद खेत में पलवार (गल्च) का प्रयोग करना लाभप्रद होता है। इससे मृदा तापमान बढ़ने व नमी संरक्षित होने के कारण बीजों का जमान अच्छा होता है तथा खेत में खरपतवार नहीं उग पाते जिसके फलस्वरूप पैदावार पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। तुड़ाई एवं भण्डारण फलों की तुड़ाई हमेशा मुलायम अवस्था में करनी चाहिए देर से करने पर उसमें सख्त / कड़े रेशे बन जाते हैं। फलों की तुड़ाई 6-7 दिनों के अन्तराल पर करनी चाहिए। पूरी फसल अवधि में लगभग 8 तुड़ाईयों की जा सकती है। फलों को तुड़ाई उपरान्त ताजा रखने के लिए ठण्डे छायादार स्थानों पर रखना चाहिए। फलों को ताजा बनाये रखने के लिए बीच-बीच में उन पर पानी का छिड़काव कर सकते हैं।

फसल के फलों की तुड़ाई भंडारणः तोरई फसल के फलों की तुड़ाई मुलायम अवस्था में कर देना चाहिए, अगर इसकी तुड़ाई में देरी होती है, तो फलों में कड़े रेशे बन जाते हैं। बता दें कि फलों की तुड़ाई 6-7 दिनों के अन्तराल पर करनी चाहिए। इस तरह पूरी फसल में फलों की तुड़ाई लगभग 8 बार होती है। ध्यान दें कि फलों को ताजा बनाए रखने के लिए ठण्डे छायादार स्थान का चुनाव करें। इसके अलावा बीच-बीच में उन पर पानी भी छिड़कते रहें।

पैदावारः इसकी अच्छी उपज उन्नत किस्म और फसल की देखभाल पर निर्भर होती है, लेकिन अगर वैज्ञानिक तकनीक से खेती की जाए, तो प्रति हेक्टेयर से लगभग 200-400 क्विंटल उपज मिल सकती है।

वेस्ट डिकम्पोस्टर : एक तकनीकी पहल

दुर्गेश्वर सिंह डिपार्टमेंट ऑफ़ प्लांट पैथोलॉजी दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उ.प्र.)

डॉ. खुशबू दुबे (असिस्टेंट प्रोफेसर) डिपार्टमेंट ऑफ़ प्लांट पैथोलॉजी दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उ.प्र.)

डॉ. संजय कुमार (सह-प्राध्यापक), गुरु काशी विश्वविद्यालय, बठिंडा, (पंजाब)

अंकुर सिंह (परास्नातक छात्र) डिपार्टमेंट ऑफ़ प्लांट पैथोलॉजी दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर

धनंजय (परास्नातक छात्र) डिपार्टमेंट ऑफ़ प्लांट पैथोलॉजी दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

सार: वेस्ट डिकम्पोस्टर एक ऐसा उपकरण है जो जैविक अपशिष्टों को खाद में बदलने में मदद करता है। यह न केवल अपशिष्ट प्रबंधन में सहायक है, बल्कि यह कृषि, बागवानी, और पर्यावरण संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस लेख में हम देखेंगे कि वेस्ट डिकम्पोस्टर के माध्यम से तैयार खाद का हमारे जीवन में क्या और कैसे उपयोग है।

परिचय: वेस्ट डिकम्पोस्टर का मुख्य उद्देश्य जैविक अपशिष्टों को पुनर्चक्रित करना है। इसमें फल और सब्जियों के छिलके, बचे हुए भोजन, सूखे पत्ते, घास, और अन्य जैविक सामग्री को डालकर खाद तैयार की जाती है। यह प्रक्रिया सरल होती है और इसे घर पर या खेतों में आसानी से किया जा सकता है।

खाद के रूप में उपयोग

1. कृषि में उपयोग

फसल उत्पादन में वृद्धि: जैविक खाद मिट्टी के पोषक तत्वों को बढ़ाती है, जिससे फसलों की उत्पादकता में सुधार होता है। रासायनिक उर्वरकों की तुलना में जैविक खाद का प्रभाव लंबे समय तक बना रहता है। जैविक खाद का उपयोग करने से किसान फसल की गुणवत्ता में सुधार कर सकते हैं, जिससे उनका उत्पादन बढ़ता है।

मिट्टी की संरचना में सुधार: जैविक खाद मिट्टी की संरचना को सुधारती है, जिससे जल धारण क्षमता बढ़ती है। यह मिट्टी में एरोबिक सूक्ष्मजीवों की गतिविधि को बढ़ाती है, जिससे मिट्टी की सेहत में सुधार होता है। इससे मिट्टी का पीएच स्तर संतुलित रहता है और पोषक तत्वों का अवशोषण बढ़ता है।

रोग प्रतिरोधक क्षमता: जैविक खाद का उपयोग करने से फसलों की रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि होती है। यह मिट्टी में प्राकृतिक संतुलन बनाए रखती है और पौधों को स्वस्थ बनाती है, जिससे कीटों और बीमारियों से सुरक्षा मिलती है।

2. बागवानी में उपयोग

पौधों के लिए पोषण: बागवानी में, जैविक खाद पौधों को आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करती है। यह विशेष रूप से फूलों, फलों, और सब्जियों की गुणवत्ता को सुधारने में मदद करती है। जैविक खाद में नाइट्रोजन, फास्फोरस, और पोटाश जैसे महत्वपूर्ण तत्व होते हैं जो पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक हैं।

मृदा स्वास्थ्य: जैविक खाद का उपयोग मिट्टी की सेहत को सुधारने के लिए किया जाता है। यह मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की गतिविधि को बढ़ाती है, जो पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्वों

को उपलब्ध कराते हैं। स्वस्थ मिट्टी पौधों की वृद्धि में सहायक होती है और फसल उत्पादन को बढ़ाती है।

जल प्रबंधन: जैविक खाद जल धारण क्षमता को बढ़ाती है, जिससे पौधों को जल की आवश्यकता कम होती है। यह सूखा सहिष्णुता में भी मदद करती है। बागवानों के लिए यह विशेष रूप से फायदेमंद है, क्योंकि वे सीमित जल संसाधनों का प्रभावी उपयोग कर सकते हैं।

3. पर्यावरण संरक्षण

अपशिष्ट प्रबंधन: वेस्ट डिकम्पोस्टर का उपयोग जैविक अपशिष्टों को पुनर्चक्रित करने में मदद करता है, जिससे लैंडफिल में कचरे की मात्रा कम होती है। यह प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करता है और पर्यावरण को स्वस्थ रखता है। जैविक अपशिष्टों का प्रबंधन करके हम प्राकृतिक संसाधनों की बर्बादी को कम कर सकते हैं।

कार्बन फुटप्रिंट में कमी: जैविक खाद का उपयोग करने से रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता कम होती है, जिससे कार्बन उत्सर्जन में कमी आती है। यह जलवायु परिवर्तन के खिलाफ एक महत्वपूर्ण कदम है। जैविक खाद के उपयोग से हम अपने कार्बन फुटप्रिंट को कम कर सकते हैं।

जैव विविधता: जैविक खाद का उपयोग करने से मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की विविधता बढ़ती है, जो पारिस्थितिकी तंत्र की सेहत को सुधारती है। यह विभिन्न पौधों की प्रजातियों के विकास को भी बढ़ावा देती है, जिससे जैव विविधता में वृद्धि होती है।

4. स्थानीय समुदायों में विकास

कृषि आय में वृद्धि: किसान जैविक खाद का उपयोग कर रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता को कम कर सकते हैं, जिससे उनकी उत्पादन लागत कम होती है और आय में वृद्धि होती है। जैविक कृषि में निवेश करने से किसानों को लंबे समय में बेहतर परिणाम मिलते हैं।

शहरी कृषि: शहरी क्षेत्रों में, वेस्ट डिकम्पोस्टर का उपयोग करके लोग छोटे स्थानों में भी खाद का निर्माण कर सकते हैं। इससे शहरी कृषि को बढ़ावा मिलता है और स्थानीय खाद्य उत्पादन में वृद्धि होती है। यह शहरी निवासियों के लिए ताजगी से भरे खाद्य पदार्थों की उपलब्धता सुनिश्चित करता है।

शिक्षा और जागरूकता: वेस्ट डिकम्पोस्टर का उपयोग करने से लोगों में जैविक अपशिष्ट प्रबंधन और पर्यावरण के प्रति जागरूकता बढ़ती है। यह युवा पीढ़ी को स्थायी जीवन शैली के महत्व के बारे में शिक्षित करता है, जिससे वे पर्यावरण संरक्षण की दिशा में कदम बढ़ा सकें।

खाद बनाने की प्रक्रिया

1. **सामग्री का संग्रहण:-** सभी जैविक अपशिष्टों को एकत्रित करें। इसमें फल और सब्जियों के छिलके, बचे हुए खाद्य पदार्थ, सूखे पत्ते आदि शामिल होते हैं। यह सुनिश्चित करें कि अपशिष्ट रासायनिक सामग्री जैसे प्लास्टिक, कागज, या अन्य औद्योगिक अपशिष्टों से मुक्त हो।

2. **मिश्रण:** अपशिष्टों को छोटे टुकड़ों में काटें और गीले (जैसे खाद्य अपशिष्ट) और सूखे (जैसे सूखे पत्ते) अपशिष्टों का अनुपात 2:1 रखें। यह संतुलन विघटन प्रक्रिया को कुशल बनाता है और जैविक अपशिष्टों के विघटन में तेजी लाता है।

3. **डिकम्पोस्टर में डालना:** सभी सामग्री को डिकम्पोस्टर में डालें। इसे परतों में डालें–पहले गीले अपशिष्ट की परत, फिर सूखे अपशिष्ट की परत। यह ऑक्सीजन के प्रवाह को बढ़ाता है और विघटन की प्रक्रिया को तेज करता है।

4. **पलटना और निगरानी:** प्रत्येक 2-3 सप्ताह में सामग्री को पलटें। इससे ऑक्सीजन का प्रवाह बढ़ता है और प्रक्रिया तेज होती है। तापमान को नियंत्रित रखना भी आवश्यक है; यह 50-70 डिग्री सेल्सियस के बीच होना चाहिए।

5. **जल और नमी का संतुलन:** यदि मिश्रण बहुत सूखा हो जाता है, तो थोड़ा पानी डालें। ध्यान रखें कि अत्यधिक गीले मिश्रण से दुर्गंध आ सकती है। आदर्श रूप से, सामग्री को नमी में रखना चाहिए, ताकि विघटन प्रक्रिया सही से हो सके।

6. **परिपक्वता की जाँच:** लगभग 2-3 महीने बाद, खाद तैयार हो जाती है। इसकी भूरी, भुरभुरी और सुगंधित बनावट होती है। परिपक्वता की जाँच के लिए, सामग्री का रंग और बनावट देखिए। यदि इसमें कोई बड़े टुकड़े नहीं हैं और यह समरूप है, तो यह उपयोग के लिए तैयार है।

7. **खाद का उपयोग:** तैयार खाद का उपयोग मिट्टी में मिलाने, पौधों के चारों ओर डालने या बागवानी में उर्वरक के रूप में करें।

चुनौतियाँ और समाधान

1. **समय की आवश्यकता:** कंपोस्टिंग प्रक्रिया में समय लगता है। इसे एक नियमित कार्य के रूप में अपनाना होगा।

समाधान: अपने डिकम्पोस्टर की स्थिति को नियमित रूप से चेक करें और पलटने का काम करें।

2. **स्थान की कमी:** शहरी क्षेत्रों में जगह की कमी हो सकती है।

समाधान: छोटे डिकम्पोस्टर का उपयोग करें या शहरी कृषि के लिए विशेष डिज़ाइन किए गए सिस्टम अपनाएँ।

3. **प्रबंधन:** यदि सामग्री का सही प्रबंधन नहीं किया गया, तो दुर्गंध आ सकती है।

समाधान: गीले और सूखे अपशिष्टों का संतुलन बनाए रखें और नियमित रूप से पलटें।

निष्कर्ष: वेस्ट डिकम्पोस्टर का उपयोग हमारे जीवन में जैविक खाद के रूप में अत्यधिक फायदेमंद है। यह न केवल कृषि और बागवानी में मदद करता है, बल्कि पर्यावरण संरक्षण और स्थायी विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है। जैविक खाद का उपयोग करके हम न केवल अपनी फसलें बढ़ा सकते हैं, बल्कि पृथ्वी को भी एक स्वस्थ स्थान बना सकते हैं। इसलिए, हमें वेस्ट डिकम्पोस्टर का उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए, ताकि हम एक स्वस्थ और हरित भविष्य की दिशा में आगे बढ़ सकें।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

भविष्य में ऑर्गेनिक खेती को बढ़ावा देना क्यों है जरूरी

इल्मा इस्लाम (शोध छात्रा) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

अरुन झा (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

डॉ.महीपत सिंह यादव (सहायक अध्यापक) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

भारत में जैविक खेती के तहत कुल क्षेत्रफल लगभग 4.7 मिलियन हेक्टेयर है जो दुनिया में दूसरा सबसे बड़ा देश है भारत में मध्य प्रदेश 0.76 मिलियन हेक्टेयर के साथ सबसे बड़ा जैविक खेती क्षेत्र वाला राज्य है जो भारत के कुल ऑर्गेनिक क्षेत्रफल का 27 प्रतिशत से अधिक है इसके अतिरिक्त राजस्थान , महाराष्ट्र में भी ऑर्गेनिक खेती को अपनाया जाता है रासायनिक खाद के अत्यधिक उपयोग से पर्यावरण को कई प्रकार से नुकसान होता है, जैसे कि जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, मृदा अपरदन और जैव विविधता का नुकसान. रासायनिक खाद मिट्टी की उर्वरता को खराब करते हैं और पौधों के लिए हानिकारक होते हैं, जिससे मिट्टी का स्वास्थ्य और खाद्य सुरक्षा पर बुरा असर पड़ता है.

भारत में जैविक खेती की आवश्यकता के निम्नलिखित कारण हैं –

* जैविक खाद्य उद्योग तेजी से बढ़ रहा है और उच्च लाभप्रदता सुनिश्चित कर रहा है।

* बढ़ती जनसंख्या और संसाधनों की घटती आपूर्ति को देखते हुए खाद्य सुरक्षा पर ध्यान देने की आवश्यकता है, यही कारण है कि उत्पादन बढ़ाने की आवश्यकता है, लेकिन व्यवहार्य और टिकाऊ तरीके से।

* स्वच्छ और हरित वातावरण बनाए रखना भी उतना ही महत्वपूर्ण है, इसलिए पर्यावरणीय स्थिरता को बनाए रखने की आवश्यकता है जिसे जैविक खेती के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है।

* स्वास्थ्य में सुधार की आवश्यकता है क्योंकि इसके सेवन से कैंसर, बांझपन जैसी कई बीमारियां हो सकती हैं, जो तब होती हैं जब विषाक्त अवशेष शरीर में रह जाते हैं, इसलिए मनुष्यों और पशुओं की सुरक्षा सर्वोच्च प्राथमिकता है।

* पारंपरिक कृषि पद्धतियों से उत्पन्न जोखिमों के कारण पर्यावरण और आजीविका के बीच संतुलन बनाना अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है।

कुछ जैविक खादे एवं जैविक कीटनाशक

बीजामृत

* 100 किलोग्राम बीज के लिए

यह एक जैविक वीज उपचार है जिसका उपयोग ऑर्गेनिक खेती में किया जाता है

सामग्री

पानी 20 लीटर , देशी गाय का गोबर 5 किलोग्राम , देसी गाय का मूत्र 5 लीटर , चूना 25 ग्राम , पीपल या बरगद के पेड़ के नीचे की मिट्टी लगभग 100 ग्राम

निर्माण एवं प्रयोग विधि

उपरोक्त सामग्री को अच्छी तरह टंकी में डालकर घोल को 15-15 मिनट सुबह शाम चलाएं प्लास्टिक टंकी को बोरी से ढककर छांव में रख दें इस घोल को 24 घंटे रखने के बाद बीजों को उपचार कर सकते हैं

जीवामृत

यह एक जैविक खाद है जीवामृत के लगातार प्रयोग से भूमि में केचुआ और अन्य लाभदायक सूक्ष्म जीव जैसे शैवाल कवक प्रोटोजोआ एवं बैक्टीरिया इत्यादि में वृद्धि होती है जो पौधों को आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करते हैं

सामग्री

एक 220 लीटर का प्लास्टिक ड्रम , पानी 200 लीटर ,देशी गाय का गोबर 10 किलोग्राम , गोमूत्र 10 लीटर , गुड 2 किलोग्राम , बेसन 2 किलोग्राम , पुराने पेड़ के नीचे की मिट्टी

निर्माण एवं प्रयोग विधि

उपरोक्त सामग्रियों को अच्छी तरह प्लास्टिक ड्रम में डालकर घोल बना ले घोल को घड़ी की सुई की दशा में 15- 15 मिनट तक डंडी से घूमाये इस प्रकार यह घोल 48 घंटे में तैयार हो जाएगा जिसे 7 दिन के अंदर फसल में छिड़काव हेतु उपयोग में लाया जा सकता है

घनजीवामृत

* यह एक जैविक खाद है और पौधों की वृद्धि और विकास को बढ़ावा देने में मदद करता है

* यह मिट्टी की उर्वरता बढ़ता है पौधों की रूप प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है और बीजों के अंकुरण में सुधार करता है

नीमास्त्र

* यह एक जैविक कीटनाशक है जिसका उपयोग फसलों में रस चूसने वाले कीटों और कुछ अन्य कीटों के नियंत्रण के लिए किया जाता है

* इसे नीम के पत्तों एवं फलों 5 किलोग्राम , गोमूत्र 5 लीटर ,गोबर 1 किलोग्राम और 100 लीटर पानी में बनाया जाता है

* नीमास्त्र कीट नियंत्रण रोग नियंत्रण भूमि की संरचना में सुधार करता है

ब्रह्मास्त्र

इसका उपयोग फसलों के बड़े आकार के छेदक की पतंग और इल्लियों के मैनेजमेंट के लिए किया जाता है इसे बनाने के लिए नीम की तीन किलोग्राम पत्तियां , 2 किलोग्राम करंज , सीताफल एवं धतूरे की बारीक पत्तियां और 10 लीटर देशी गाय के गोमूत्र के मिश्रण को मिलाकर लगभग 20 से 25 मिनट तक उबाले फिर मिश्रण को 48 घंटे के लिए ठंडा करके सामग्री को सूती कपड़े से छान ले

प्रयोग

1 हेक्टेयर क्षेत्र में छिड़काव के लिए 5 से 6 लीटर ब्रह्मास्त्र को 250 ली. पानी में घोलकर तना छेदक , कीट पतंग और इल्लियों को काबू करने के लिए उपयोग करें

* ऑर्गेनिक खेती करने के मुख्य कदम
* मिट्टी की जांच और सुधार करें
* जैविक बीज का चयन करें
* प्राकृतिक खाद का उपयोग करें
* जैविक कीटनाशक और रोग नाशक
* फसल चक्र अपनाए और मिश्रित खेती करें
* जैविक प्रमाण की प्रक्रिया अपनाएं
* ऑर्गेनिक खेती शुरू करने में आने वाली समस्याएं
* शुरू में उत्पादन घट सकता है
* बाजार में उचित मूल्य का ना मिल पाना
* प्रमाणीकरण में बाधा
* जानकारी और प्रशिक्षण की कमी
* ज्यादा मेहनत और समय
* ज्यादा जोखिम
* शुरुआती लागत
* सरकारी सहयोग और सुविधाओं की कमी

खीरा की वैज्ञानिक खेती

धन्य कुमार (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

आरती (शोध छात्रा) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

डॉ. अनुराग दुबे (सहायक प्राध्यापक) बीज प्रौद्योगिकी विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

खीरा की उत्पत्ति मूल्यता भारत से ही हुई है तथा लता वाली सब्जियों में इसका महत्वपूर्ण स्थान है इसके फलों का उपयोग मुख्य रूप से सलाद के लिए किया जाता है इसके फलों के 100 ग्राम खाने से 96.3% जल एवं 2.7% कार्बोहाइड्रेट 0.4% प्रोटीन 0.% बस तथा 0.4% खनिज पदार्थ पाया जाता है इसके अलावा विटामिन बी भी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

जलवायु इसकी खेती हेतु सर्वाधिक तापमान 40 डिग्री सेल्सियस तथा न्यूनतम तापमान 20 डिग्री सेल्सियस होना चाहिए उच्च बढ़ोतरी एवं फल फूल के लिए 25 से 30 डिग्री सेल्सियस अच्छा होता है अधिक वर्षा आद्रता तथा बदली से कीट एवं रोगों के प्रसार में वृद्धि होती है

भूमि

खीरा की खेती के लिए बलुई दोमट या दोमट भूमि जिसमें जल निकास का उचित प्रबंध हो । सर्वोत्तम पाई गई है भूमि में कार्बन की मात्रा तथा पीएच मान 6.5 होना चाहिए।

उन्नत किस्म

स्वर्ण अगेती: यह एक अदिति किस्म है बुवाई के 40 से 42 दिनों बाद प्रथम तुड़ाई की जाती है इस प्रजाति की बुवाई फरवरी तथा जून के महीने में की जाती है सामान्य दशा में एक हेक्टेयर क्षेत्रफल से 200 से 250 कुंतल उपज प्राप्त होती है।

स्वर्ण पूर्णिमा: यह मध्यम अवधि में तैयार होने वाली फसल है फलों की तोड़ाई बबाई के 45 से 47 दिन के बाद शुरू हो जाती है सामान्य दशा में एक हेक्टेयर क्षेत्रफल में 200 से 225 क्विंटल उपज प्राप्त होतीहै

पंतशंकर खीर 1: इस शंकर प्रजाति की बुवाई के

लगभग 50 दिन बाद फल तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते हैं फल मध्यम आकार के 20 सेंटीमीटर लंबे तथा हरे रंग के होते हैं सामान्य दशाओं में एक हेक्टेयर क्षेत्रफल से 300 से 350 कुंतल उपज प्राप्त होती है

खाद्य एवं उर्वरक

खीरा की खेती के लिए 800 किलोग्राम नाइट्रोजन 60 किलोग्राम फास्फोरस तथा 60 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर देना चाहिए। फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी तथा नाइट्रोजन की आधी मात्रा बुवाई के समय देते हैं। शेष नत्रजन की मात्रा दो बराबर भागों में बताकर बुवाई के 20 से 40 दिन बाद गुड़ाई के साथ देकर मिट्टी चढ़ा देना चाहिए

बुवाई का समय

मुख्य फसल के रूप में मैदानी क्षेत्र में बुवाई फरवरी एवं जून के प्रथम सप्ताह में करते हैं जबकि उत्तर भारत में पर्वतीय भागों में इसकी बुवाई अप्रैल मई में की जाती है । गर्मी की फसल को जल्दी लेने के लिए पॉलिथीन की थैलियां में जनवरी में पौधे तैयार कर फरवरी में रोपण करते हैं।

बीज की मात्रा

1 हेक्टेयर क्षेत्र की बुवाई के लिए 2 से 2.5 किलोग्राम बीच की आवश्यकता पड़ती है बीज की बुवाई करने से पहले फफूंदी नाशक दवा जैसे क्रिप्टन या थीरम (2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) से अच्छी तरह शोधित करना चाहिए

सिंचाई

बुवाई के समय खेत में नमी पर्याप्त मात्रा में होनी चाहिए अन्यथा बीजों का अंकुरण एवं वृद्धि अच्छी प्रकार से नहीं होती है बरसात वाली फसल के लिए सिंचाई की विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती है औसतन गर्मी की फसल को पांचवें दिन एवं जाड़े की फसल को 10 से 15 दोनों पर पानी देना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण एवं निराई गुड़ाई

वर्षा कालीन फसल में खरपतवार की समस्या अधिक होती है जमाव से लेकर प्रथम 25 दिनों तक खरपतवार फसल को ज्यादा नुकसान पहुंचाते हैं। अतः खेत से समय-समय पर खरपतवार निकालते रहना चाहिए खरपतवार निकालने के बाद खेत की गुड़ाई करके जड़ों के पास मिट्टी चढ़ाना चाहिए जिससे पौधों का विकास तेजी से होता है।

कीट एवं नियंत्रण

खीरे का पतंगा

यह किट पत्तियों के क्लोरोफिल युक्त भाग को कहते हैं तथा कभी-कभी फूल एवं फल को भी खा लेते हैं इसकी रोकथाम के लिए आवश्यकता अनुसार कीटनाशक जैसे क्लोरोट्रेनिंगलिपरोज 18.5 एससी 0.25 /मिली/लीटर का प्रयोग करते हैं।

सफेद मक्खी

स्पीड के शिशु एवं प्रौढ़ पौधे की पत्तियों से रस चूसते हैं और विष्णु रोक फैलाते हैं इसकी रोकथाम के लिए इमेडक्लोरोपिस कीटनाशक का 17.5 एसएल / 0.5 मिली/लीटर का प्रयोग करते हैं

प्रमुख रोग एवं नियंत्रण

चूर्ढी फफूंदी

यह विशेष रूप से खरीफ फसल पर लगता है यह पत्तियों और तानों की सतह पर सफेद या ढूंढ ले दूसरा धब्बे बन जाते हैं इसकी रोकथाम के लिए रोग ग्रस्त पौधे को खेत से इकठ्ठा करके जला देना चाहिए । अथवा 0.05% ट्राइकोडर्मा फफूनी नाशक दवा को 1 लीटर पानी में घोल बनाकर 7 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए

खीरा मैजिक वायरस

पत्तियों में मोल्डिंग सिकुड़न शुरू हो जाती है पौधे विक्रेत तथा छोटा रह जाते हैं विष्णु वॉक किट के नियंत्रण के लिए डिमिथाइरॉएड का 0.05 प्रतिशत रासायनिक दवा का छिड़काव 10 दिनों के अंतराल पर करते हैं

तुड़ाई एवं उपज

फल को कोमल एवं मुलायम अवस्था में तोड़ना चाहिए फलों की तुड़ाई खीरा की औसतन उपज 150 से 250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होती है

उर्वरकों के उपयोग की महत्वता एवं सावधानियां

आशुतोष (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

अरुन झा (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

अंकित शर्मा (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

डॉ. महीपत सिंह यादव (सहायक अध्यापक) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

उर्वरक: उर्वरक खेती में पौधों को आवश्यक पोमाक तत्व प्रदान करने का एक महत्वपूर्ण साधन है और यह पौधों की अच्छी वृद्धि अधिक उत्पादन एवं मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने में मदद करते हैं इनका उपयोग हमेशा फसल और मिट्टी के प्रकार को ध्यान में रखते हुए ही करना चाहिए अन्यथा इनका नियमित उपयोग मृदा की उर्वरा शक्ति व फसल को नुकसान पहुंचा सकता है।

उर्वरक का महत्व

* पौधों को पामे क तत्व प्रदान करना जब हम किसी खेत में साल भर तीन से चार फसल लेते हैं तो उसकी मृदा में पोमाक तत्वों की कमी हो जाती है और नई फसल को लगाने पर पौधे पूर्ण रूप से विकसित नहीं हो पाए उर्वरक इन पोमाक तत्वों को मृदा में पूर्ण करता है जिससे पौधों की पूर्ण रूप में विकास होता है यह मुख्यतः नाइट्रोजन फास्फोरस व पोटाश के लिए उपयोग किए जाते हैं।

* उपज में वृद्धि और उर्वरक के सही इस्तेमाल से फसल की उपज में वृद्धि होती है जिससे किसान कि आय बढ़ती है।

* मृदा की उर्वरता बनाए रखना और मृदा में होने वाले पोमाक तत्व की कमी को पहचान कर उसमें सही उर्वरक के उपयोग से मृदा की उर्वरता को बढ़ाया जा सकता है।

* फसल गुणवत्ता में सुधार और संतुलित व आवश्यक पोमाक तत्व मिलने पर लगाई गई फसल में (फल,सद्ब्जी और अनाज) का आकार रंग स्वाद एवं पोमाक तत्व में सुधार होता है।

* बढ़ती जनसंख्या के लिए खा4 सुरक्षा और अधिक उपज के लिए उर्वरकों का उपयोग जरूरी है ताकि बढ़ती जनसंख्या की खा4 आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके।

भारत में उगाई जाने वाली फसलों में उर्वरक का प्रयोग

* धान और धान की फसल में हमें यूरिया, डीएपी ,एमओपी ,गोबर खाद ,हरी खाद का प्रयोग सही मात्रा में करना चाहिए अत्यधिक यूरिया के उपयोग से पौधे बढ़ते हैं। परंतु इनमें दाने काम बनते हैं इसके अत्यधिक प्रयोग से बचना चाहिए।

* गेहूं में हमें यूरिया, डीएपी, एमओपी एवं जिंक सल्फेट का प्रयोग करना चाहिए इसमें हमें अधिक नाइट्रोजन देने से बचना चाहिए अधिक नाइट्रोजन से रोग लगा सकते हैं।

* गन्ना में यूरिया, फॉस्फोरस और पोटाश को संतुलित मात्रा में देना चाहिए एवं गन्ने में अधिक यूरिया का उपयोग करने से मिट्टी की उर्वरता घटती है।

* तिलहन फसलों में एसएसपी ,सल्फर ,यूरिया एवं एमओपी का उपयोग करना चाहिए एवं बिना सल्फर की उर्वरक का कम उपयोग करना चाहिए।

* दलहनी फसलों में जैव उर्वरक (राइजोबियम कल्चर), एसएसपी का प्रयोग करना चाहिए। यूरिया का प्रयोग संतुलित करना चाहिए क्योंकि यह फसले स्वयं नाइट्रोजन बनाती हैं।

* सब्जियों की फसलों में एनपीके (संतुलित मात्रा) में जिंक, बोरॉन ,फास्फेट एवं कंपोस्ट खाद का प्रयोग करना चाहिए रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता से मिट्टी सद्ब्जियों के लिए खराब हो जाती है।

* मोटे अनाज की फसलें और अनाज की फसलों में यूरिया,डीएपी, पोटाश तथा सूक्ष्म उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए अधिक नाइट्रोजन व समान उर्वरक के प्रयोग से बचना चाहिए।

भारत के उपयोग में सावधानियां

1. अत्यधिक यूरिया का प्रयोग और उसके अत्यधिक प्रयोग से मिट्टी अम्लीय हो जाती है एवं सूक्ष्म जीव नमट होने लगते हैं।
2. बिना मिट्टी जांच के उर्वरक का प्रयोग और बिना जांच के हमें मिट्टी में उर्वरकों के प्रयोग नहीं करना चाहिए
3. फसल में एक ही प्रकार के उर्वरक का प्रयोग और हर फसल में एक ही प्रकार के उर्वरक का प्रयोग करने से बचना चाहिए क्योंकि सभी फसलों की जरूरत अलगदृअलग होती है एवं उनको अलगदृअलग तत्वों की आवश्यकता पड़ती है।
4. केवल रासायनिक उर्वरकों परनिर्भरता और अधिक रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से जैविक गुणवत्ता खत्म हो जाती है तथा इनका विनाशकारी प्रभाव मृदा के ऊपर पड़ता है।

संतुलित उर्वरक का प्रयोग और संतुलित उर्वरक ऐसा उर्वरक होता है जिसमें नाइट्रोजन फास्फोरस एवं पोटाश तीनों प्रमुख पोमाक तत्व संतुलित मात्रा में उपस्थित होते हैं। इसका प्रयोग फसल को पूर्ण पोमाण देने के लिए किया जाता है।

सूक्ष्म उर्वरकों का प्रयोग और हमें फसलों में आवश्यकता अनुसार सूक्ष्म उर्वरकों का भी प्रयोग करना चाहिए जिससे की मृदा में हुई सूक्ष्म उर्वरकों पोमाक तत्व प्रदान किया जा सके। कमी को पूरा किया जा सके एवं फसलों को संपूर्ण सूक्ष्म उर्वरक ह्यसूक्ष्म उर्वरक सूक्ष्म रूप से आवश्यक तत्वों वाले उर्वरक होते हैं जो पौधों की छोटी मात्रा में आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करते हैं यह पोमाक तत्व पौधों की वृद्धि उपज और गुणवत्ता के लिए अत्यंत आवश्यक होते हैं

प्रमुख सूक्ष्म पोमाक तत्व

1. जिंक और एंजाइम क्रियों और वृद्धि हार्मोन में सहायक
2. लोहा और क्लोरोफिल निर्माण के लिए आवश्यक और प्रकाश संश्लेमाण में सहायक
4. कॉपर और बीज और फल विकास में सहायक
5. फूल फल बनाने में सहायक
6. मोलीद्ब्डेनम और नाइट्रोजन स्थिरीकरण में आवश्यक
7. क्लोरीन और पानी और पोषक तत्वों के संतुलन में मददगार

सूक्ष्म उर्वरक के उदाहरण

* जिंक सल्फेट * फेरस सल्फेट
* मैंगनीज सल्फेट * कॉपर सल्फेट
* बोरेक्स, सोल्यूबोर * सोडियम मॉलीद्ब्डेट
* पोटैशियम क्लोराइड

सूक्ष्म उर्वरकों का प्रयोग

1. मिट्टी में मिलाकर बुवाई से पहले खेत में मिलाया जाता है
2. फोलियर स्प्रे से पत्तियां पर छिड़काव किया जाता है
3. फर्टिगेशन के द्वारा सिंचाई के साथ दिया जाता है
4. बीज उपचार करके बीजों पर कोटिंग करके ऐसे लगाया जाता है

सूक्ष्म उर्वरक के उपयोग के फायदे

1. पौधों के उत्पादकता और गुणवत्ता में वृद्धि होती है
2. हो सकता तो की कमी से होने वाले रोगों से बचाव होता है
3. फलों और सब्जियों का रंग स्वाद और पोमाण भंडारण क्षमता बेहतर होती है
4. अनाज फसलों में रोग लगने से बचते हैं

सुझाव

1. हर दो-तीन साल में मिट्टी की जांच करानी चाहिए
2. जैविक उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए
3. फसल चक्र अपनाना चाहिए ताकि मिट्टी की उर्वरता बची रहे
4. संतुलित और वर्ग देने चाहिए तथा सूक्ष्म पोमाक तत्वों को भी देना चाहिए

करेला की उन्नत फलोत्पादन तकनीक

अनिता सैनी (शोध छात्रा) उद्यान विज्ञान विभाग, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

दीपक कुमार सैनी (फार्म मैनेजर)
कृषि महाविद्यालय, कोटपूतली

करेला कुष्माण्ड कुल की सब्जी फसल है। इसका ग्रीष्मकालीन सब्जियों में विशेष स्थान है। अपने पोष्क्रि एवं औषधीय गुणों के कारण यह बहुत लोकप्रिय है। अनेक रोग जैसे मधुमेह (डायबिटिज) आदि के उपचार के लिए यह एक औषधी की तरह उपयोग किया जाता हैं। करेले के फलों में प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन ए, सी तथा अनेक प्रकार के खनिज लवण भरपूर मात्रा में पाये जाते हैं। करेला की खेती मुनाफे वाली होती है क्योंकि इसके अच्छे भावों के साथ हमेशा बाजार मांग भी रहती है।

जलवायु एवं भूमि- गर्म एवं आर्द्र जलवायु में करेल की उपज सर्वोत्तम होती है। करेला अन्य कददूवर्गीय फसलों की अपेक्षा शीत सहन कर लेता है, लेकिन अधिक पाला सहन नहीं कर सकता है। अधिक वर्षा से भी इसकी उपज कम हो जाती है। करेला की खेती के लिए उत्तर एवं मध्य भारत की जलवायु अनुकूल मानी जाती है। करेला की फसल रेतीली दोमट से चिकनी मिट्टी में उगाई जा सकती है परन्तु काली दोमट मिट्टी नमी बनायें रखने योग्य मृदा वाली भूमि उत्तम मानी जाती है तथा भूमि में जल निकास की उचित व्यवस्था भी होनी चाहिए।

खेत की तैयारी- सर्वप्रथम खेत की 2 बार मिट्टी पलटने वाले हल (डिस्क प्लाऊ या हैरो) से जुताई करनी चाहिए इसके उपरान्त देशी हल (कल्टीवेटर) से 2-3 जुताई से मिट्टी को भुरभुरी करपाटा लगाकर समतल कर देना चाहिए। गोबर की सड़ी हुई खाद जुताई से पहले बिखेरनी चाहिए जो जुताई के दौरान खेत में अच्छी तरह मिल जावें। आवश्यकतानुसार उर्वरक अन्तिम जुताई से पहले भुमि में मिलाना चाहिए।

उन्नत किस्में

हिसार सलेक्शन- करेला की यह किस्म गर्मी एवं वर्षा दोनों त्रऋतुओं में अच्छा उत्पादन देती है। इसकी उपज लगभग 100 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक मिल जाती हैं।

कोयम्बूटर लौंग- यह दक्षिण भारत की किस्म है, इस किस्म के पौधे काफी फैलाव लिये होते हैं। इसके फल गहरे हरे रंग के आकर्षक फल होते हैं। इसको गर्मी व बरसात दोनों मौसम में उगाया जा सकता है तथा औसत उपज 150 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक प्राप्त हो सकती है।

कल्याणपुर बारहमासी- चन्द्र शेखर आजाद कृषि विश्वविद्यालय द्वारा विकसित इस किस्म को भी गर्मी एवं बरसात दोनों ऋतुओं में उगाया जा सकता है। इसके फल गहरे रंग के एवं आकर्षक होते हैं तथा उपज 150-160 क्विंटल तक प्राप्त हो जाती है।

पूसा विशेष- यह किस्म बीज बुवाई के 55 दिन बाद फल देना प्रारम्भ कर देती है तथा इसके फल मध्यम, लम्बे, मोटे व हरे रंग के होते हैं। इसके फल का औसत वजन 100 ग्राम तक होता हैं।

अर्का हरित- यह किस्म गर्मी एवं वर्षा दोनों ऋतुओं में अच्छा उत्पादन देती है। इसके फलों के अन्दर बीज बहत कम होते हैं। उपरोक्त किस्मों के अतिरिक्त ग्रीन लौंग, पूसा दो मौसमी, प्रिया, पंत करेला संकर, अमन श्री, कावेरी, कल्याणपुर सोना आदि देश में प्रचलित करेला की उन्नत किस्में हैं।

बीज एवं बुवाई- करेला का एक हैक्टेयर के लिए 4-5 किलो ग्राम बीज पर्याप्त होता है। गर्मी के लिए फरवरी-मार्च में तथा बरसात के मौसम के लिए जून- जुलाई में करेले की बुवाई करते हैं। पॉलीहाउस में खेती के लिए सालभर कभी भी बुवाई कर सकते हैं। करेले की बुवाई सीधी खेत में या नर्सरी में भी पौध तैयार कर की जा सकती है। पौध प्रो-ट्रे में कोकोपिट व वर्मी कुलाइट भरकर प्रत्येक खण्ड (रूप) में एक-एक बीज डालें। 12-15 दिन में पौध तैयार होने पर खेत में या पॉलीहाउस में प्रतिरोपित कर सकते हैं। खेत में सीधी बुवाई के लिए बीजों को 10-12 घंटे तक पानी में भिगोकर रखें। बुवाई के 1 घण्टे पहले कार्बनडेजिम कवकनाशी 2 ग्राम प्रति किलो बीज दर से उपचारित करें। बीज को 2-2.5 सेन्टीमीटर गहराई व 0.5ग्1.25 मीटर की दूरी पर बुवाई करें।

खाद एवं उर्वरक- करेले की बुवाई से 10-12 दिन पूर्व 20-25 टन प्रति हैक्टेयर गोबर की खाद खेत में डालें। इसके अतिरिक्त अन्तिम जुताई से पहले 50 किलोग्राम नाइट्रोजन, 50 किलोग्राम फास्फोरस व 50 किलोग्राम पोटाश प्रति हैक्टेयर खेत में मिलावें। बुवाई से 25 दिन बाद 50 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति हैक्टेयर खड़ी फसल में टोप ड्रेसिंग के रूप में दे।

सिंचाई- पहली सिंचाई बीज बुवाई के तुरन्त बाद करनी चाहिए। गर्मी में पानी 6-7 दिन बाद देना चाहिए तथा बरसात में आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहना चाहिए। ध्यान रहें खेत में ज्यादा पानी भी नही भरा रहना चाहिए इसके लिए जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

निराई-गुड़ाई-खरपतवार पौधे मुख्य फसल से प्रतिस्पर्धा कर फसल को काफी नुकसान पहुँचाते हैं। बुवाई के 20-25 दिन बाद खुरपी से निराई कर खरपतवारों को निकाल देवें इसके बाद 20 दिन के अन्तराल पर यह क्रिया पुनः दोहरावें।

तुड़ाई- करेला के फल बुवाई के 50-60 दिन बाद तुड़ाई लायक हो जाते हैं। सब्जी के लिए फलों को साधारणतः उस समय तोड़ा जाता है जब बीज कच्चे हो। यह अवस्था फल के आकार एवं रंग से मालूम की जा सकती है। तुड़ाई हाथ या सिकेटियर से फल तन्तु सहित करनी चाहिए। ध्यान रहें फल तोड़ते समय बेल को नुकसान नहीं होना चाहिए। फलों को गत्ते के बॉक्स (कोरूगेटेड बॉक्स) या प्लास्टिक की क्रेट में कागज लगाकर भरें।

फसल सुरक्षा

कीट- फल मक्खी- ये कीट फल में छिद्र कर गूदे में अण्डे देते हैं तथा फल को तेजी से खाते हैं, जिनकी गुणवत्ता खाने योग्य नहीं रहती है। फल मक्खी से प्रभावित काणे फलों को तोड़कर भूमि में गहरा गाड़ कर नष्ट कर देवें। डायमेथोएट 30 ई. सी. 1 मिली लीटर का प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 10-15 दिन बाद छिड़काव को दोहरावें।

लाल भंग (रेड बीटल)- यह कीट पौधे की प्रारम्भिक अवस्था पर आक्रमण करता है। यह कीट पत्तियों का भक्षण कर पौधे की वृद्धि रोक देता है। इसकी सूण्डी खतरनाक होती है, जो कि पौधे की जड़ों को काटकर फसल को काफी नुकसान पहुँचाती हैं। रोकथाम हेतु क्यूनालफॉस 2 मिलीलीटर या एसिफेट 0.5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें।

माइट्स- ये कीट पत्तियों की निचली सतह पर रहकर इस चूसती है। इससे पत्तियों पर प्रारम्भ में सफेद धब्बे बनते हैं जो बाद में भूरे रंग के हो जाते हैं। परिणामस्वरूप पौधों में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया बुरी तरह प्रभावित होती हैं। रोकथाम हेतु कीट का प्रकोप होने पर डाइकोफाल । मिली लीटर प्रति लीटर पानी की दर से गर्मी में छिड़काव करें तथा आवश्यकतानुसार 10 दिन बाद छिड़काव पुनः दोहरावें।

रोग-

एन्थेक्नोज- इस रोग से प्रभावित पौधे की पत्तियों पर काले धब्बे बन जाते है, जिससे प्रकाश संश्लेषण क्रिया प्रभावित होती है। फलस्वरूप पौधे का विकास नहीं हो पाता हैं। रोकथाम हेतु मेन्कोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें।

छाछ्या (पाउड्री मिल्ड्यू)- यह रोग ईरीसाइफी सिकोरेसिएम नामक कवक द्वारा होता है। रोग से प्रभावित करेला की बेल व पत्तियों पर सफेद गोलाकार जाल फैल जाते हैं तथा बाद में कत्थई रंग के हो जाते हैं व पत्तियां पीली होकर सूख जाती है। रोकथाम हेतु डाइनोकार्प एल सी । मिली लीटर या हेक्साकोनाजोल 5 ई.सी 0.5 मिली प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर करें।

डाउनी मिल्ड्यू- फलो पर फीके कोणीय पीले भूरे धब्बे बनते हैं जो बाद में काले हो जाते हैं ओर पौधा मुरझा जाता है। रोकथाम हेतु जुलाई के अन्त में मेंकोजेब (0.25 प्रतिशत) व उसके बाद एक छिड़काव मेटेलेक्सिल मेन्कोजेब कवकनाशी मिश्रण (0.25 प्रतिशत) का करें।

उपज- करेला की उपज किस्मों एवं पोषक तत्व प्रबंधन पर निर्भर है। इसकी उपज 100-150 किंटल प्रति हैक्टेयर तक प्राप्त हो जाती है।

बहुपयोगी औषधीय पादप: गिलोय

✍ **राजबाला मीणा** (कृषि पर्यवेक्षक)

✍ **कविता मीणा** भाकृअनुप- अखिल भारतीय समन्वित बाजरा अनुसंधान परियोजना, कृषि विश्वविद्यालय जोधपुर (राजस्थान)

गिलोय, का वैज्ञानिक नाम टीनोस्पोरा कोर्डीफोलिया है, जो मेनिस्पमेंसी परिवार का सदस्य है। यह एक बहुवर्षीय झाड़ीदार लता है। यह समुद्रतल से 1200 मीटर से 3000 मीटर की ऊंचाई तक भारत के उष्णकटिबंधीय व उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में पायी जाती है। यह लता कई वर्षों तक बढती रहती है। इसकी बेल वृक्षों के सहारे से बढती है, जिस वृक्ष को यह अपना आधार बनाती है उस वृक्ष के गुण भी इसमें समाहित रहते है। इस प्रकार से नीम के पेड़ पर चढी गिलोय को सर्वोत्तम औषधी माना जाता है। इसके पत्ते प्रायः पान के पत्तो के समान होते है। गिलोय के पत्तो का व्यास 2 से 4 इंच तक होता है। इसके फूल छोटे-छोटे गुच्छों में लगते है, जो गर्मी के मौसम में आते है। गिलोय के फल मटर के समान अंडाकार तथा गुच्छों मे लगते हैं और पकने पर फल लाल रंग के हो जाते हैं।

औषधीय रूप में संपूर्ण गिलोय की लता महत्वपूर्ण है। इसकी ताजा छाल हरे रंग तथा गुच्छेदार होती है। इसकी बाहरी छाल हल्के भूरे रंग की होती है, जिसे हटा देने पर भीतर का हरित भाग दिखाई देता है। इसका व्यास लगभग एक इंच तक होता है। इसका स्वाद तीखा होता है, पर गंध कोई विशेष नहीं होती है। गिलोय के अमृत तुल्य गुणों के कारण इसको अमृता भी कहा जाता है। गिलोय में गिलोइन नामक कड़वा ग्लूकोसाइड, ग्लिस्टेराल, ब्रेर्बेरिन, गिलोइनिन नामक एल्कोलाइड पाए जाते हैं। इसमें अनेक प्रकार के वसा, अम्ल एवं उड़नशिल तेल पाए जाते है। इसमें काफी मात्रा में लाभदायक तत्व पाए जाते है जैसे- टिनोस्पोरिन, टिनोस्परिक एसिड, सिरिनजेन, शिलोइन इत्यादि। इसकी पत्तियों में कैल्शियम, प्रोटिन, फॉस्फोरस और तने में स्टार्च पाया जाता है। सोडियम सेलिसिलेट होने के कारण अधिक मात्रा में इसमें दर्द निवारक गुण पाये जाते है।

गिलोय के औषधीय गुण

- गिलोय बुखार को दूर करने की सबसे अच्छी औषधी मानी जाती है। यह सभी प्रकार के बुखार जैसे- टाइफाइड, मलेरिया, मंद ज्वर, तथा पुराने बुखार के लिए अति उत्तम औषधी है।
- यह शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढाने में सहायक होती है।
- गिलोय इंसुलिन की उत्पति को बढ़ाकर ग्लूकोज का पाचन करती है। तथा रोगों के सक्रमणों को रोकने का कार्य करती है।
- इसका रस कडवा तथा तीखा होता है, जो पाचन शक्ति को तेज करने वाला तथा पीलिया को खत्म करने वाला होता है। यह तेज बुखार, उल्टी, खांसी, बवासीर, टी.बी., जलन, पेशाब, करने में कष्ट तथा जोड़ों का दर्द आदि रोगों को दूर करने में सहायक होता है।

- यह तीखा होने के कारण पेट के कीडों को मारने का कार्य करता है।
- इसमें काफी मात्रा में लाभदायक तत्व पाए जाते हैं। जैसे- टिनोस्पोरिन, टिनोस्परिक एसिड, सिरिनजेन, शिलोइन, बरबेरियन आदि। यह स्वाइन फ्लू की रोकथाम में लाभदायक है।
- कुष्ठ, एलर्जी ओर सभी प्रकार के त्वचा विकारों में लाभदायक होती है।
- इसमें सोडियम सेलिसिलेट होने के कारण अधिक मात्रा में दर्द निवारक गुण पाए जाते है।
- क्षय रोग उत्पन्न करने वाले "माइक्रोबैक्टीरियम ट्यूबरकुलोसिस" जीवाणु की वृद्धि को यह सफलतापूर्वक रोकता है। एस्केनिशिया कोलाइ नामक रोगाणु जो मूत्रवाही नलिका एवं आंत को ही नहीं सारे शरीर को प्रभावित करता है, यह उसे जड़ से नष्ट कर देता है।
- गिलोय पीलिया, यकृत तंतुमयता और अन्य जिगर से संबंधित विकारों में बहुत अधिक प्रभावी है।
- गिलोय तथा शतवारी का क्वाथ पीने से श्वेत प्रदर में फायता होता है। गिलोय को आंवले के रस के साथ ग्रहण करने से नेत्र रोगों में आरा मिलता है।
- इसकी बेल को हल्के से छीलने पर नीचे हरा, मांसल भाग होता है। इसका काढा बनाकर पीने से यह शरीर के त्रिदोषों को नष्ट कर देता है। त्रिदोषों का अर्थ हमारा शरीर कफ, वात और पित्त द्वारा संचालित होता है। पित्त का संतुलन बिगडने पर पर पीलिया, पेट के रोग जैसी कई परेशिनियां सामने आती हैं। कफ का संतुलन बिगडने पर सीने में जकड़न, बुखार आदि दिक्कतें आती हैं। वात अगर असंतुलित हो जाये तो गैस, जोडों में दर्द, शरीर का टूटना, असमय बुढापा जैसी परेशानियां आती हैं, गिलोय का काढा इन सब विकारों में लाभदायक होता है।
- इसको सोंठ के साथ खाने से गठिया रोग ठीक हो जाता है।

गिलोय की खेती

इसकी खेती के लिए रेतीली, दोमट, बलुई दोमट, हल्की चिकनी मृदा उपयुक्त होती है। गिलिय की खेती इसके बीज एवं कलम दोनों से की जाती है। कलम से इसकी खेती ज्यादा सफलतापूर्वक की जाती है। गिलोय एक लता है, इसलिए इसकी वृद्धि अधिक होती है तथा इसको सहारे की आवश्यकता होती है। गिलोय के लिए नीम व आम सहारा हेतु सर्वोत्तम वृक्ष है। गिलोय की नर्सरी तैयार कि जाती है और एक वर्ष के बाद नर्सरी में तैयार पौधों का रोपण किया जाना उचित रहता है। गिलोय का तना सर्वोत्तम औषधीय रूप् में उपयोग में आते हैं। इसके तने को उत्पादन लगभग 8-10 क्विंटल प्रति हैक्टर होता है। ताजे गिलोय में गिलोय अर्क प्राप्त होता है। 10 कि.ग्रा. गिलोय के तने से एक से दो कि.ग्रा. तक के गिलोय अर्क प्राप्त होता है। गिलोय अर्क में ग्लूकोसाइन एवं गिलोइन मुख्य तत्व पाए जाते हैं।

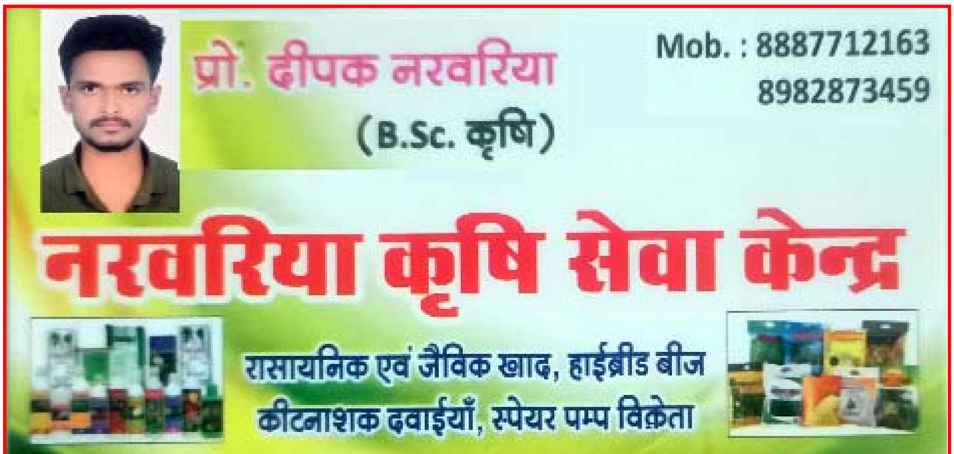

01/2023-24

पर्यावरण संरक्षण में युवाओं की भूमिका

यशपाल यादव (शोध छात्र) फार्म मशीनरी एवं पावर इंजीनियरिंग विभाग, कॉलेज ऑफ टेक्नोलॉजी एंड इंजीनियरिंग, एमपीयूएटी, उदयपुर (राजस्थान)

मीनू शोध छात्रा, संसाधन प्रबंधन और उपभोक्ता विज्ञान विभाग, इंद्रा चक्रवर्ती सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, (हरियाणा)

प्रस्तावना: पर्यावरण जीवन का मूल आधार है। मानव सभ्यता के विकास के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप वायु, जल, और भूमि प्रदूषण, वैश्विक तापमान में वृद्धि, जैव विविधता का विनाश जैसी समस्याएँ सामने आई हैं। पर्यावरण संकट का समाधान केवल सरकारों या अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं के प्रयासों से संभव नहीं है; इसमें प्रत्येक नागरिक की सक्रिय भागीदारी आवश्यक है। विशेष रूप से युवाओं की, जो समाज के परिवर्तनकारी तत्व माने जाते हैं।

युवा पीढ़ी न केवल विचारों में नवीनता लाती है, बल्कि उनमें सामाजिक अभियानों को जनांदोलन में बदलने की भी क्षमता होती है।

पर्यावरणीय संकट: एक गंभीर परिप्रेक्ष्य

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP) की रिपोर्ट (2022) के अनुसार:

* हर वर्ष लगभग 70 लाख लोग वायु प्रदूषण के कारण असमय मृत्यु का शिकार होते हैं।

* 2050 तक समुद्रों में मछलियों से अधिक प्लास्टिक होने का खतरा है।

* पृथ्वी का औसत तापमान 1.1°C पहले ही बढ़ चुका है, और यदि वैश्विक उत्सर्जन में कमी नहीं आई तो यह 2100 तक 3°C तक बढ़ सकता है।

इन भयावह आँकड़ों से स्पष्ट है कि अगर तुरंत कार्रवाई नहीं की गई, तो अगली पीढ़ियाँ एक ऐसे ग्रह पर जीवित रहने को मजबूर होंगी जहाँ स्वच्छ वायु, शुद्ध जल और उपजाऊ भूमि विलासिता बन जाएगी।

युवाओं की भूमिका: बहुआयामी दृष्टिकोण

1. शैक्षणिक जागरूकता और अनुसंधान

आज के युवा उच्च शिक्षा संस्थानों में पर्यावरण विज्ञान, सतत विकास, हरित प्रौद्योगिकी जैसे विषयों पर अनुसंधान कर रहे हैं। छात्र परियोजनाएँ जैसे – * जल संरक्षण तकनीकें * जैविक अपशिष्ट प्रबंधन * नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत – पर आधारित हैं, जो स्थानीय स्तर पर समस्याओं का अभिनव समाधान प्रस्तुत करती हैं।

उदाहरण: भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान के छात्रों ने 'प्लास्टिक खाने वाले बैक्टीरिया' पर शोध कर पर्यावरणीय प्रदूषण को कम करने की दिशा में पहल की है।

2. सामाजिक अभियानों में नेतृत्व

युवा 'Fridays for Future', 'Climate Strike' जैसे आंदोलनों का नेतृत्व कर रहे हैं। भारत में भी 'Youth for Climate India' जैसी संस्थाएँ युवाओं को नीति निर्माण प्रक्रियाओं से जोड़ रही हैं। गाँवों और शहरी बस्तियों में चल रहे स्वच्छता अभियानों, वृक्षारोपण कार्यक्रमों, और जल संरक्षण परियोजनाओं में युवा वॉलंटियर अग्रणी भूमिका निभा रहे हैं।

3. हरित नवाचार

युवाओं द्वारा विकसित स्टार्टअप्स टिकाऊ विकास को बढ़ावा दे रहे हैं। उदाहरण के तौर पर:

* सौर ऊर्जा से चलने वाले चार्जिंग स्टेशन
* बायोडिग्रेडेबल पैकेजिंग समाधान
* अपशिष्ट से ऊर्जा बनाने वाले संयंत्र

यह नवाचार पर्यावरण संरक्षण के साथ आर्थिक विकास के नए रास्ते भी खोल रहे हैं।

4. नीतिगत हस्तक्षेप

और वैश्विक भागीदारी

भारतीय युवा संयुक्त राष्ट्र जैसे अंतरराष्ट्रीय मंचों पर प्रतिनिधित्व कर रहे हैं, जैसे कि 'Youth Climate Summit' और %N Youth Assembly%। इसके अलावा, युवा %जलवायु परिवर्तन शिक्षा% को स्कूली पाठ्यक्रमों में शामिल कराने हेतु लॉबिंग कर रहे हैं।

भारत सरकार द्वारा युवाओं हेतु पर्यावरणीय पहल

* नेहरू युवा केंद्र संगठन के माध्यम से लाखों युवाओं को पर्यावरणीय अभियानों से जोड़ा गया है।

* ईको-क्लब प्रोग्राम स्कूल स्तर पर पर्यावरणीय चेतना को बढ़ावा दे रहा है।

* स्वच्छ भारत मिशन और राष्ट्रीय हरित कोर जैसी योजनाएँ युवाओं की सक्रिय भागीदारी पर आधारित हैं।

चुनौतियाँ

यद्यपि युवा उत्साही हैं, फिर भी कुछ चुनौतियाँ हैं:

* पर्यावरणीय शिक्षा का अभाव

* आर्थिक अस्थिरता के कारण पर्यावरणीय गतिविधियों में कम भागीदारी

* तात्कालिक लाभ के चलते दीर्घकालिक पर्यावरणीय प्रभावों की उपेक्षा

इन चुनौतियों के समाधान हेतु:

* प्रारंभिक शिक्षा से ही पर्यावरण संरक्षण को जीवन शैली का हिस्सा बनाना चाहिए।

* युवाओं के लिए ग्रीन इनोवेशन फंड जैसे वित्तीय सहायता तंत्र विकसित किए जाने चाहिए।

निष्कर्ष: युवा शक्ति, यदि सही दिशा में प्रेरित की जाए, तो पृथ्वी के भविष्य को सुरक्षित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। युवाओं में नवाचार की शक्ति है, नेतृत्व करने का उत्साह है और दुनिया को बदलने का जुनून है। आवश्यकता केवल इस शक्ति को संगठित करने और सतत विकास के लक्ष्यों के साथ जोड़ने की है। पर्यावरण संरक्षण अब कोई विकल्प नहीं, बल्कि एक सामाजिक और नैतिक जिम्मेदारी बन चुका है।

"युवाओं का संकल्प ही धरती माँ का संरक्षण है।"

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

गोपीचंद सिंह एवं कल्पना चौधरी
कृषि विज्ञान केन्द्र, अठियासन, नागौर, कृषि विश्वविद्यालय जोधपुर (राजस्थान)

अंजीर की फसल: आधुनिक उत्पादन तकनीक एवं प्रबंधन

बदलते मौसम, घटते जलस्त्रोत और बढ़ती लागत के इस दौर में ऐसी फसलों की जरूरत है जो कम संसाधनों में भी मुनाफा दे सकें। ऐसे में अंजीर की खेती किसानों के लिए एक सुनहरा अवसर बनकर सामने आई है। अंजीर *(फाइकस कैरिका)* एक पोषक तत्वों से भरपूर, स्वादिष्ट और औषधीय गुणों से युक्त फल है, जिसे ताजे और सूखे दोनों रूपों में उपयोग किया जाता है। यह न केवल स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभकारी है, बल्कि इसका बाजार मूल्य भी अच्छा होता है। अंजीर में विटामिन बी कॉम्प्लेक्स, पोटैशियम, फॉस्फोरस, कैल्शियम, सोडियम और अन्य खनिज तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। यह फल कब्ज, सर्दी-जुकाम, दमा, मधुमेह और अपच जैसे रोगों में लाभकारी माना जाता है। अंजीर की खेती शुष्क और अर्धशुष्क क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है और यह कम पानी में भी अच्छी उपज देने में सक्षम है। भारत में महाराष्ट्र, गुजरात, उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु जैसे राज्यों में इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा रही है।

जलवायु: अंजीर की सफल खेती के लिए उपयुक्त जलवायु का होना अत्यंत आवश्यक है। यह फसल मुख्यतः उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय जलवायु में अच्छी तरह विकसित होती है। अंजीर को गर्म और शुष्क जलवायु में आसानी से उगाया जा सकता है, जबकि फलों के बेहतर विकास के लिए शुष्क वातावरण अधिक लाभकारी सिद्ध होता है। पौधों की स्वस्थ वृद्धि और उच्च उत्पादन के लिए 15°C से 35°C के बीच का तापमान सबसे उपयुक्त माना जाता है। यही नहीं, अंजीर की खेती कम वर्षा वाले क्षेत्रों में भी सफलतापूर्वक की जा सकती है, जिससे यह जल-संवेदनशील इलाकों के लिए भी एक लाभकारी विकल्प बन जाता है।

भूमि: अंजीर की खेती लगभग सभी प्रकार की भूमियों की जा सकती है लेकिन अच्छे जल निकास वाली कार्बन पदार्थ युक्त दोमट मिट्टी इसकी खेती के लिए उपयुक्त होती है तथा मिट्टी का पीएच मान 6.5 से 7.5 के बीच होना चाहिए।

उन्नत किस्में: अंजीर की खेती से बेहतर उत्पादन प्राप्त करने के लिए अधिक उपज देने वाली और उच्च गुणवत्ता वाली किस्मों का चयन अत्यंत आवश्यक है। उपयुक्त किस्मों का चुनाव न केवल पैदावार बढ़ाता है, बल्कि फलों की गुणवत्ता भी सुनिश्चित करता है। नीचे अंजीर की कुछ प्रमुख उन्नत किस्मों का विवरण दिया गया है:

1.पूना- यह किस्म विशेष रूप से महाराष्ट्र के पुणे जिले में लोकप्रिय है। इसके फल गहरे बैंगनी रंग के और मध्यम आकार के होते हैं। स्वाद में यह अत्यंत मीठा और रसदार होता है, जिससे यह स्थानीय बाजारों में काफी मांग में रहती है।

2.मिशन -मिशन एक पुरानी, लेकिन आज भी लोकप्रिय किस्म है। इसके फल गहरे बैंगनी से लेकर काले रंग के होते हैं। इसका स्वाद तीखा-मीठा होता है और यह किस्म ताजे उपयोग के साथ-साथ सुखाने के लिए भी उपयुक्त मानी जाती है।

3. इसिकिया -इस किस्म के फल बाहर से हरे और अंदर से लाल रंग के होते हैं। इसे विशेष रूप से ठंडी जलवायु वाले क्षेत्रों में उगाया जाता है। इसका स्वाद भी काफी अच्छा होता है और यह ताजे उपभोग के लिए आदर्श मानी जाती है।

4. सिल्वा-सिल्वा किस्म अत्यधिक उपज देने वाली है। इसके फल मध्यम आकार के होते हैं और स्वाद में बहुत ही मधुर होते हैं। आमतौर पर इसे ताजे फल के रूप में उपयोग किया जाता है।

5. ब्राउन टर्की-इस किस्म के फल गहरे भूरे रंग के होते हैं और हल्के मीठे स्वाद वाले होते हैं। यह किस्म ताजे फल के रूप में और सूखाकर दोनों रूपों में उपयोग के लिए उपयुक्त है।

6. ब्लैक मर्सेलस- यह किस्म गहरे काले रंग की होती है। इसके फल मुलायम, रसदार और अत्यंत मीठे होते हैं। यह किस्म विशेष रूप से सुखाने के लिए उत्तम मानी जाती है।

7. कोनाड्रिया- कोनाड्रिया किस्म के फल हल्के हरे या पीले रंग के होते हैं। इसका स्वाद मीठा और बेहतरीन होता है। यह किस्म ताजे फल के रूप में तथा सुखाकर उपयोग दोनों के लिए उपयुक्त है।

खेत की तैयारी: अंजीर की खेती के लिए मिट्टी की गहरी जुताई करके मिट्टी को भुरभुरी करें और पहली फसलों के अवशेष को हैरो से जुताइयाँ करके मिट्टी में मिला दें। इसके बाद दो से तीन जुताइयाँ कल्टीवेटर से करके सड़ी गोबर की खाद 20 से 25 टन प्रति हेक्टर की दर से मिट्टी में मिलाने के बाद पाटा लगाकर खेत को समतल बना ले। मई और जून के महीने में पौधे से पौधे की दूरी 6 मीटर तथा 1×1×1 मीटर आकार के गड्ढे खोदकर 15 दिनों तक खुला छोड़ दें इसके बाद आधी मिट्टी और आधी गोबर की खाद से गड्ढे को भर दें।

खाद तथा उर्वरक: अंजीर की फसल का अच्छा उत्पादन लेने के लिए संतुलित मात्रा मे खाद तथा उर्वरको का प्रयोग करें। यदि संभव हो तो जिस खेत मे अंजीर का बगीचा लगा रहे है उस खेत की मिट्टी की जांच करा लें जिससे पता चल जाए की जमीन मे किन -किन पोषक तत्वों की कमी है उसी के आधार पर खाद तथा उर्वरको का प्रयोग करे वैसे 1 वर्ष के पौधे के लिए 15 किलोग्राम गोबर की खाद 80 ग्राम यूरिया 60 ग्राम डीएपी 60 ग्राम पोटाश 50 ग्राम जिंक सलफेट की आवश्यकता होती है प्रत्येक पौधे के लिए हर वर्ष मात्रा को बढ़ाएं।

पौधारोपण: अंजीर के पौधे लगाने के लिए पहले से तैयार गड्ढो में जुलाई. अगस्त महीने में पौधों की रोपाई की जाती है। रोपाई करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि पौधों की जड़े मिट्टी के संपर्क में अच्छी तरह से आ जाएं और पौधा खड़ा हो। अंजीर के पौधे विश्वसनीय नर्सरी से ही।

सिंचाई: पौधों की रोपाई के तुरंत बाद हल्की सिंचाई करें। अंजीर की खेती हेतु अधिक सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। अंजीर के लिए बूंद -बूंद सिंचाई सिस्टम उपयुक्त रहता है। शुष्क क्षेत्र में गर्मी के मौसम में अधिक पानी देने की आवश्यकता होती है तथा जाड़े के मौसम में 15 से 20 दिनों के अंतराल पर पौधों को सिंचाई की जरूरत पड़ती है बारिश के मौसम में आवश्यकता अनुसार सिंचाई करें।

खरपतवार नियंत्रण : अंजीर के पौधों की अच्छी वृद्धि एवं विकास हेतु समय-समय पर खरपतवार नियंत्रण करना अति आवश्यक है। खरपतवार नियंत्रित करने के लिए जैविक तरीके द्वारा भी हम खरपतवार नियंत्रित किया जा सकता है इसके लिए मल्चिंग की आवश्यकता होती है जिससे मिट्टी में नमी भी बनी रहेगी और खरपतवार भी बहुत ही कम निकलते हैं। अगर समय पर खरपतवार नियंत्रण नहीं किया तो पौधों की वृद्धि एवं उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। हाथ से खरपतवारों को नियंत्रण करने हेतु प्रतिवर्ष दो-तीन निराई-गुड़ाई करना अति आवश्यक है।

पौधों की देखभाल: अंजीर के पौधों से अधिक उपज प्राप्त करने के लिए उनकी नियमित देखभाल और समय पर छंटाई करना अत्यंत आवश्यक होता है। पौधा लगाने के लगभग एक वर्ष बाद पहली बार छंटाई करनी चाहिए। इस प्रक्रिया के दौरान पौधे की मुख्य तने से लगभग 1 मीटर की ऊँचाई तक किसी भी नई शाखा को विकसित न होने दें। इससे पौधा मजबूत, संतुलित और घना बनता है, साथ ही नई फलदार शाखाओं के निकलने की संभावना भी बढ़ जाती है। अंजीर के पौधों की छंटाई प्रत्येक वर्ष गर्मियों के मौसम में की जानी चाहिए। इससे पौधे की वृद्धि में तेजी आती है और फल उत्पादन की क्षमता में भी उल्लेखनीय सुधार होता है। सही तरीके से की गई छंटाई न केवल पौधे को एक उचित आकार देती है, बल्कि फलों की गुणवत्ता और मात्रा दोनों को बेहतर बनाती है।

फलों की तुड़ाई और समय : अंजीर की फसल, रोपाई के दो-तीन साल बाद फल देना शुरू कर देती है। फलों की तुड़ाई तब की जाती है जब फल पूरी तरह से पक जाते हैं और मुलायम हो जाते हैं तुड़ाई का समय फरवरी से जून के बीच होता है। एक पौधे से लगभग 15 से 20 किलोग्राम फल प्राप्त कर सकते हैं

अंजीर फसल में लगने वाले कीट एवं रोग: फसल की अच्छी वृद्धि विकास एवं उपज प्राप्त करने हेतु कीट एवं रोगो का नियंत्रण करना अति आवश्यक है अन्यथा फसल पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा और उत्पादन कम हो जायेगा। अंजीर फसल में लगने वाले रोग व कीट निम्न प्रकार-

अंजीर के प्रमुख कीट

1. अंजीर फल मक्खी (Fig Fruit Fly: Carpomyia vesuviana)

लक्षण: कीट अंजीर के फलों में अंडे देता है, जिससे फल सड़ने लगते हैं, गिरने लगते हैं और खाने योग्य नहीं रहते।

नियंत्रण:

* प्रभावित फलों को तुरंत तोड़कर नष्ट करें। * फलों की तुड़ाई समय पर करें। * थायोमेथोक्साम कीटनाशक का छिड़काव करें। * नीम आधारित कीटनाशक (Neem oil 2-3%) या एन.एस.के.ई. (Neem Seed Kernel Extract) 5% का छिड़काव करें। * फल मक्खियों को आकर्षित करने वाले ट्रैप (जैसे मिथाइल यूजेनॉल ट्रैप) का उपयोग करें।

2. अंजीर तना छेदक (Fig Stem Borer: Batocera rufomaculata)

लक्षण: तने या शाखाओं में छेद दिखाई देते हैं, जिसमें से गोंद या बुरादे जैसा पदार्थ निकलता है। पौधा कमजोर होकर सूखने लगता है।

नियंत्रण: * प्रभावित शाखाओं को काटकर जला दें। * तनों में क्लोरोपायरीफॉस दवा का इंजेक्शन दें। * छेद में नीम तेल या पेट्रोलियम जेली के साथ नीम पत्तियों का रस डालें और फिर मिट्टी से बंद कर दें।

अंजीर के प्रमुख रोग एवं उनके नियंत्रण

1. एन्थ्रेक्नोज (Anthracnose & Colletotrichum spp.)

लक्षण: पत्तियों और फलों पर भूरे या काले धब्बे बनते हैं, जो बढ़ते-बढ़ते सड़न पैदा करते हैं।

नियंत्रण: * प्रभावित पत्तियों और फलों को तोड़कर जला दें। * कवकनाशी जैसे कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (Copper oxychloride 0-3%) का छिड़काव करें। * अधिक नमी से बचाव करें और पौधों के बीच उचित दूरी रखें।

रस्ट रोग (Rust)

लक्षण: पत्तियों के निचले हिस्से पर पीले-भूरे रंग के धब्बे बनते हैं जो बाद में पूरे पौधे को प्रभावित कर सकते हैं।

नियंत्रण: * सल्फर आधारित फफूंदनाशकों का छिड़काव करें और संक्रमित पत्तियां हटा दें।

मोजेक वायरस (डवेंपब टपतने)

लक्षण: पत्तियों पर असमान पीले और हरे रंग के पैच दिखाई देते हैं, जिससे पौधे की वृद्धि प्रभावित होती है।

नियंत्रण: संक्रमित पौधों को नष्ट कर दें। एफिड्स जैसे वायरस वाहक कीटों का नियंत्रण करें।

करौंदा का प्रसंस्करण और पोषक महत्व

राजबाला मीणा, सुप्रिया, सुशील कुमार
भाकृअनुप- अखिल भारतीय समन्वित बाजरा अनुसंधान परियोजना, कृषि विश्वविद्यालय जोधपुर-342304 (राजस्थान)

करौंदा (कैरिसा कैरन्डास) के वृक्ष झाड़ीदार व फूल सफेद होते हैं इसके फल सख्त, हरे से बैंगनी-लाल चिकने और चमकदार होते हैं। पकने पर रंग गहरा-बैंगनी या काला हो जाता है। अपरिपक्व फल बहुत खट्टे होते हैं लेकिन जब पके हों तब खट्टे मीठे होते हैं। करौंदे वर्षा ऋतु में तो आसानी से प्राप्त हो जाते हैं लेकिन अन्य दो ऋतुओं (सर्दी व गर्मी) में नहीं मिल पाते हैं। ऐसे में इनको परिरक्षित या मूल्य संवर्धित कर इनका जायका एवं पोषक लाभ लिया जा सकता है। फलों को कैंडीज, जेली, स्क्वैश और चटनी जैसे उत्पाद बनाने में इस्तेमाल किया जा सकता है।

करौंदा फल आयरन से भरपूर होता है इसके अलावा विटामिन ए, सी और बी कॉम्प्लेक्स, फाइबर, कार्बोहाइड्रेट एवं खनिज जैसे कैल्शियम, फॉस्फोरस, पोटेशियम, सोडियम व सल्फर का उत्कृष्ट स्रोत है। फल में आमतौर पर 83.67 प्रतिशत नमी, 2.3 प्रतिशत प्रोटीन, 1.77 प्रतिशत वसा, 4.7 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट और अच्छी मात्रा में पेक्टिन होता है।

मधुमेह उपचार में उपयोगी

करौंदा फल के मेथनॉलिक अर्क के प्रभाव में पाया गया कि यह गुर्दे में एंटीऑक्सीडेंट गतिविधि को बढ़ाता है। इससे रक्त और मूत्र में ऑक्सीडेटिव तनाव तथा नेफ्रटॉक्सिसिटी (गुर्दे की क्षति) के बायोमार्कर कम होते हैं।

दर्द निवारक

करौंदा में एनाल्जेसिक गुण होते हैं। दर्द से राहत में करौंदा, कैरिसा स्पिनारम की जंगली प्रजातियों के अर्क की खुराक-विशिष्ट खपत, संधिषोथ और गठिया से जुड़े पुराने जोड़ों के दर्द को समाप्त करने में मदद कर सकती है। करौंदा के अर्क का सेवन मांसपेशियों में दर्द और इसके कारण होने वाले बुखार से राहत दिलाने में मदद कर सकता है। पत्ति का अर्क दौरे के लक्षणों को कम करने में मदद कर सकता है।

जिगर की सेहत के लिए

करौंदा के अर्क के सेवन से हेपेटोप्रोटेक्टिव प्रभाव हो सकते हैं। इसका अर्थ है कि यह लीवर की क्षति को रोक सकता है और इस महत्वपूर्ण अंग को स्वस्थ रख सकता हैं। यह अर्क यूरिक एसिड, ग्लूटाथियोन, सुपरऑक्साइड डिस्म्यूटेज, कैटेलेज और प्रोटीन के स्तर को इस तरह बढ़ा सकता है कि लीवर का वजन अच्छी तरह से बना रहे और लीवर की बीमारी का खतरा काफी कम हो।

कब्ज और दस्त का उपचार: आधुनिक चिकित्सा और अनुसंधान करौंदे के औषधीय महत्व को साबित करते हैं। इसमें अल्कलॉइड, फ्लेवोनोइड्स, सैपोनिन, ग्लाइकोसाइड्स, ट्राइटरपीनोइड्स, फेनोलिक यौगिकों और टैनिन जैसे फाइटोन्यूट्रिएंट्स की उपस्थिति को सिद्ध करते हैं। करौंदा पाचन में सुधर करने में मदद कर सकता है। इसके कृमिनाशक और रोगाणुरोधी गुणों के कारण आंतों के कीडे के खिलाफ दवा के रूप में भी इस्तेमाल किया जा सकता है।

स्वस्थ त्वचा के लिए

करौंदा के सूखे फल खाने से त्वचा की सूजन कम हो सकती है। इससे त्वचा पर चकत्ते और संक्रमण को रोका जा सकता है। इससे पता चलता है कि सूखे या जूस वाले करौंदा के सेवन से त्वचा से जुड़े फंगल संक्रमण और बैक्टीरिया के संक्रमण से बचा जा सकता है।

मिर्गी में उपयोगी

करौंदा जड के कच्चे अर्क में फअल्कालॉइड, लेवोनोइड्स, सैपोनिन की थोड़ी मात्रा और बड़ी मात्रा में कार्डिएक ग्लाइकोसाइड्स, ट्राइटरपेनोइड्स, फेनोलिक यौगिक और टैनिनय् होते हैं। ये सभी पौधे के यौगिक हैं। और उनमें से कई को अलग-अलग एंटीऑक्सीडेंट या रोगाणुरोधी गुणों के लिए जाना जाता है।

प्रसंस्करित उत्पाद

करौंदा कैंडी: करौंदा के कटे हुए या पूरे कच्चे फल को 500 पीपीएम पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइट में गर्म पानी के उपचार के साथ ब्लांच किया जाता है। इसके बाद स्लाइस या फलों को विभिन्न सांद्रता में चीनी और गुड़युक्त साइट्रिक एसिड के साथ 60, 65, 70 ब्रिक्स के सिरप में डुबोया जाता है। चीनी और गुड़ के घोल को शुरू में 60 डिग्री ब्रिक्स की सांद्रता में तैयार किया जाता है। 24 घंटे तक डूबने के बाद, सिरप को सुखा दिया जाता है।

करौंदा जैम: ताजा और बिना क्षतिग्रस्त करौंदों को अच्छी तरह से धोकर आधा काट लें। बीज निकाल कर फलों को पानी में डाल दिया जाता है। फलों को नरम होने तक पानी में उबाला जाता है। (चीनी 1150 ग्राम चीनी/किलो करौंदा पल्प) को मिलाया जाता है और तब तक हिलाना जारी रखा जाता है जब तक कि ड्रॉप टेस्ट, टीएसएस (68 से 70%) और शीट टेस्ट द्वारा अंतिम बिंदु का निर्धारण नहीं किया जाता। जैम बनाने के लिए नर्म फलों को छलनी से निकाला जा सकता है ताकि चिकना गूदा प्राप्त हो और फिर उसमें चीनी मिला दी जाती है। ठंडा होने पर कांच की बोतल में भरकर रख लें।

करौंदा अचार: फलों को अलग-अलग हल्के से कुचलकर दरार बना कर अचार के मानक मसाले मिलाकर करौंदा का अचार बनाया जाता है।

करौंदा चटनी: मसालों ;हरी मिर्च 25 ग्राम, गुड़ 40 ग्राम, लहसुन की कलियां 2 ग्राम, जीरा 6 ग्राम, धनिया 20 ग्राम, नमक 15 ग्राम, कड़ी पत्ता 2 ग्राम) को एक इलेक्ट्रिक मिक्सी में पीसकर बारीक पीस लें और कच्चे करौंदा फल (100 ग्राम) मिलाएं तथा महीन पीस कर चटनी बनायें।

करौंदा पाउडर: करौंदा के फलों को 5 मिनट के लिए 85 डिग्री सेल्सियस पर ब्लांचिंग किया जाता है और उसके बाद 15 मिनट के लिए 0.5% के एमएस के साथ सल्पफाइटेशन किया जाता है ताकि इसका रंग बेहतर हो सके। इसके बाद फलों को दरदरा पीसकर कैबिनेट ड्रॉयर में 60×10 सें. या धूप में सुखाया जाता है। फिर सूखे उत्पादों को पैक करके ठंडी और सूखी जगह पर रखा जाता है।

करौंदा पेय: विभिन्न प्रकार के पेय जैसे कि सर्व करने के लिए तैयार ;आरटीएसद्ध पेय, शरबत, स्क्वैश, करौंदा के रस और गूदे से तैयार किए जा सकते हैं। इसके अलावा, करौंदा के रस को अलग-अलग अनुपात में अमरूद, पपीता और अनन्नास के रस के साथ मिश्रित किया जा सकता है।

ओस्मो-एयर ड्रॉय करौंदा: यह कच्चे करौंदा को ब्लांच करके और 70 डिग्री ब्रिक्स के घोल में डुबोकर तैयार किया जाता है।

डिब्बाबंद करौंदा: करौंदा के फल को चाशनी के साथ डिब्बाबंद किया जा सकता है।

करौंदा आईसक्रीम: पके फलों से प्राप्त गूदे को आइसक्रीम में प्राकृतिक स्वाद देने वाले एजेंट के रूप में उपयोग कर 20% करौंदा पल्प वाली आईसक्रीम बनाई जाती है।

करौंदा फलेवर मिल्क: करौंदा जूस और चीनी मिश्रित दूध से फ्लेवर्ड दूध बनाया जाता है।

प्राकृतिक कलरेंट: पके करौंदा फलों से एक प्राकृतिक 'फूड कलरेंट कम न्यूट्रास्युटिकल्स सप्लीमेंट' तैयार किया गया है और इसे 'लालिमा' नाम दिया गया है।

आयशा बी (शोध छात्रा)
डॉ. कविता दुआ सह-प्राध्यापक (संसाधन प्रबंधन एवं उपभोक्ता विज्ञान, विभाग) इंद्रा चक्रवर्ती सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय हिसार, (हरियाणा)

जीरो वेस्ट होम: भारतीय परिवारों के लिए एक नया कदम

तेजी से बढ़ती जनसंख्या और उपभोक्तावाद के इस दौर में कचरे की समस्या विकराल होती जा रही है। प्लास्टिक, ई-कचरा, भोजन की बर्बादी, पॉलिथीन का अधिकता में उपयोग और अन्य घरेलू अपशिष्ट न केवल पर्यावरण को नुकसान पहुँचा रहे हैं, बल्कि हमारे स्वास्थ्य और आर्थिक संसाधनों पर भी दबाव बढ़ा रहे हैं।

इस कचरे का निस्तारण तथा निवारण हमारे और सरकार के लियें एक बड़ी चुनौती बन गया है। ऐसे में "जीरो वेस्ट होम" यानी "शून्य अपशिष्ट गृह" की अवधारणा भारतीय परिवारों के लिए एक सकारात्मक और आवश्यक कदम बन गई है।

जीरो वेस्ट होम का अर्थ एवं इसकी आवश्यकता

जीरो वेस्ट होम का सीधा सा अर्थ है, ऐसा घर जहाँ से निकलने वाला कचरा न्यूनतम हो या बिल्कुल न हो। इसका उद्देश्य है पुनः उपयोग (Reuse), पुनर्चक्रण (Recycle), मरम्मत (Repair) और आवश्यकता अनुसार ही वस्तुओं का उपभोग करना। इस विचारधारा के तहत हम अपनी आदतों में छोटे-छोटे परिवर्तन लाकर बड़े पैमाने पर पर्यावरण संरक्षण में योगदान दे सकते हैं। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो हमें समूहिक तौर पर अपने जीवन मे अपनानी पड़ेगी जिससे हम पर्यावरण को बचाने में अपना सहयोग दे सकें। भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में जहां हर दिन लाखों टन कचरा निकलता है, वहां जीरो वेस्ट मॉडल को अपनाना अत्यंत आवश्यक हो गया है। शहरी क्षेत्रों में प्लास्टिक और ई-कचरे की भरमार तथा ग्रामीण क्षेत्रों में जैविक अपशिष्टों का अनियंत्रित प्रबंधन एक गंभीर समस्या बन चुकी है। यदि हम सब मिलकर कचरा कम करने के उपाय अपनाएँ, तो देश की पर्यावरणीय स्थिति में उल्लेखनीय सुधार हो सकता है।

जीरो वेस्ट होम बनाने के सरल उपाय

थैले और कंटेनर साथ रखें: बाजार जाते समय कपड़े या जूट के थैले और अपने कंटेनर साथ ले जाएँ, ताकि प्लास्टिक पैकिंग से बचा जा सके। खाने-पीने कि वस्तुएं प्लास्टिक बैग में ना रखें, ये हमारे स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो सकता है।

खाद निर्माण (Composting): घर के जैविक कचरे से खाद बनाना सीखें। सब्जियों के छिलके, फलों के छिलके, बासी भोजन आदि से समृद्ध खाद तैयार की जा सकती है। और यदि घर में जगह है तो किचन गार्डिनंग जैसे उपाय अपनाकर ऑर्गैनिक खेती भी कर सकते हैं जिससे हानिकारक केमिकल मुक्त हरी पत्तेदार सब्जियां उगा सकते हैं जो सतत विकास कि तरफ एक प्रभावशाली कदम होगा।

पुनः उपयोग (Reuse) एवं पुनर्चक्रण (Recycle): पुराने कपड़े, बोतलें, डिब्बे आदि घरेलू वस्तुओं को फेंकने की बजाय फिर से उपयोग करें या रीसायकल करें जिससे अनावश्यक कचरा कम से कम उत्पन्न हो और हम पर्यावरण संरक्षण में अपना योगदान दे सकें।

स्थायी उत्पादों का चयन करें: डिस्पोजेबल वस्तुओं के बजाय टिकाऊ और पुनः उपयोगी वस्तुओं को प्राथमिकता दें, जैसे स्टील के स्ट्रॉ, बांस के ब्रश आदि। डिस्पोजेबल वस्तुएं उपयोग करने के लियें तो लाभदायक हैं परंतु सबसे ज्यादा कचरा इन्ही से उत्पन्न होता है जो पर्यावरण के लियें हानिकारक है।

समझदारी से खरीदारी करें: आजकल हम बिना जरूरत के और बिना सोचे समझे डिजिटल शॉपिंग करने लगे हैं जिनसे आने वाले बैग और रैपिंग पेपर आदि का प्रबंधन करना एक बड़ी चुनौती बन चुकी है। इसका सबसे सरल उपाय यह है कि जरूरत से ज्यादा चीजें न खरीदें और जो खरीदें वो अच्छी गुणवत्ता की हों ताकि उनका उपयोग लंबे समय तक किया जा सके।

जीरो वेस्ट होम के लाभ

पर्यावरण पर बोझ कम होता है साथ ही घरेलू खर्च में बचत होती है। स्वास्थ्य पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ता है, क्योंकि प्लास्टिक और रसायनों का उपयोग घट जाता है। इस प्रकार हम अपने बच्चों और अगली पीढ़ी में पर्यावरणीय जिम्मेदारी की भावना को विकसित करने मे अहम भूमिका निभा सकते हैं। "जीरो वेस्ट होम" केवल एक पर्यावरणीय अभियान नहीं है, बल्कि यह एक जीवन शैली है, जो हमें सिखाती है कि हम प्रकृति के साथ तालमेल बैठाकर कैसे जी सकते हैं। यदि हम आज से ही छोटे-छोटे प्रयासों से शुरुआत करें, तो भविष्य में एक स्वच्छ, स्वस्थ और समृद्ध भारत का सपना साकार किया जा सकता है। बदलाव की शुरुआत घर से होती है और यही जीरो वेस्ट होम की असली ताकत है।

कुंज एजेंसीज

अपने भाई चप्पा सेठ की दुकान
हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती है
प्रो. कार्तिक गुप्ता 9589545404
प्रो. हार्दिक गुप्ता 9644689094
भितरवार रोड, डबरा, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
10/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

गेहूँ की उन्नत खेती

✍ डॉ. सोनिका (सहायक प्रोफेसर) आनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, कृषि महाविद्यालय, "कौल"

गेहूँ भारतीय कृषि में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है और यह देश के प्रमुख खाद्य पदार्थों में से एक है। गेंहू की उन्नत खेती से न केवल किसानों की आय बढ़ सकती है, बल्कि इससे खाद्य सुरक्षा में भी योगदान होता है। उन्नत खेती से गेहूँ की उत्पादन क्षमता में वृद्धि होती है जिससे खाद्य आपूर्ति श्रृंखला में सुधार और किसानों के जीवन स्तर में सुधार संभव हो पाता है। आइए, जानते हैं गेहूँ की उन्नत खेती के कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं के बारे में।

1. उन्नत गेंहू की किस्में

गेंहू की उन्नत किस्मों का चुनाव खेती की सफलता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इन किस्मों को वैज्ञानिकों ने ऐसी विशेषताओं के साथ विकसित किया है जो बेहतर उपज, रोग प्रतिरोधक क्षमता और जलवायु के प्रति अनुकूलता प्रदान करती हैं। प्रमुख उन्नत किस्मों में HD 2967, PBW 725, K 9006, HD 3086, और Lok-1, WH 1270 शामिल हैं। इन किस्मों से किसानों को बेहतर उपज की उम्मीद होती है।

2. भूमि और जलवायु की अनुकूलता

गेंहू की खेती के लिए उपजाऊ और हल्की बलुई मिट्टी सबसे उपयुक्त होती है। इसके लिए अच्छी जलनिकासी वाली भूमि चाहिए। गेंहू की खेती का आदर्श मौसम सर्दियों का होता है, क्योंकि गेंहू ठंडी जलवायु में अच्छा फलता-फूलता है। तापमान का अधिकतम सीमा 15-20 डिग्री सेल्सियस और न्यूनतम सीमा 10-12 डिग्री सेल्सियस होती है।

3. बीज और बुआई का समय

गेंहू की बुआई अक्टूबर से दिसंबर के बीच की जाती है, इस समय तापमान आदर्श होता है। बीज की गुणवत्ता का ध्यान रखना भी आवश्यक है। किसान को शुद्ध और प्रमाणित बीज का उपयोग करना चाहिए ताकि बीज में किसी प्रकार का रोग या कीट न हो। बीजों को 100 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से बोया जाता है।

4. खाद और उर्वरक का प्रयोग

गेंहू की अच्छी वृद्धि के लिए उचित खाद और उर्वरक का इस्तेमाल करना जरूरी है। किसान को

नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश जैसे उर्वरकों का संतुलित मात्रा में उपयोग करना चाहिए। इसके अलावा, जैविक खाद जैसे गोबर की खाद, कम्पोस्ट, आदि का भी प्रयोग लाभकारी होता है।

5. सिंचाई प्रबंधन

गेंहू को अधिक पानी की आवश्यकता नहीं होती है, लेकिन फसल के विभिन्न चरणों में सिंचाई का ध्यान रखना आवश्यक है। गेंहू के लिए 4-5 सिंचाई पर्याप्त होती है। पहली सिंचाई बुआई के 15-20 दिन बाद, दूसरी फूल आने के समय और तीसरी सिंचाई दाने बनने के समय करनी चाहिए।

6. रोग और कीट नियंत्रण

गेंहू की खेती में कुछ प्रमुख रोग और कीट होते हैं जैसे पत्ती की धब्बा रोग, भूरे रंग का गेंहू रोग और गेहूं का तना बोरर। इनसे बचने के लिए किसानों को फसल की नियमित निगरानी करनी चाहिए और आवश्यकतानुसार रासायनिक या जैविक कीटनाशकों का उपयोग करना चाहिए।

7. कटाई और बाद की देखभाल

गेंहू की फसल लगभग 120-150 दिनों में तैयार

हो जाती है। कटाई का समय तब होता है जब पौधों का रंग पीला हो जाए और दाने पूरी तरह से कठोर हो जाएं। कटाई के बाद गेंहू को अच्छे से सुखाना चाहिए, ताकि उसमें नमी की मात्रा कम हो और दाने खराब न हों।

8. निष्कर्ष

गेंहू की उन्नत खेती एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण से की जाने वाली प्रक्रिया है, जिसमें सही किस्मों का चुनाव, उचित जलवायु, सिंचाई और उर्वरकों का उपयोग महत्वपूर्ण होता है। उन्नत खेती के तरीकों को अपनाकर किसान अपनी उपज में वृद्धि कर सकते हैं और इस प्रकार अपनी आर्थिक स्थिति को मजबूत बना सकते हैं। गेंहू की खेती में निरंतर सुधार और प्रौद्योगिकी के उपयोग से उत्पादन बढ़ाने की संभावना है, जिससे न केवल किसानों का लाभ होगा बल्कि देश की खाद्य सुरक्षा में भी योगदान मिलेगा।

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

वैज्ञानिक बछड़ा प्रबंधन

✍ भूपेन्द्र, कनकराज एमजी, दिव्यांशु शर्मा, सौरव बर्मन पशुधन उत्पादन एवं प्रबंधन अनुभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद-राष्ट्रीय डेरी अनुसन्धान संस्थान, करनाल (हरियाणा)

यदि बछड़ों को माँ से अलग पालते हैं तो एक दिन के बछड़ों को तुरंत ब्याने के बाड़े से हटाया जाता है। डेयरी बछड़ा प्रबंधन (मां से अलग किये हुए बछड़े)

- 3 दिन खीस पिलाने के बाद दूध पिलाना चाहिए। दूध पिलाने से पहले दूध को उबालकर शरीर के तापमान (39°C) तक ठंडा किया जाना चाहिए।
- दिन में दो बार पिलाएं, जो शरीर के तापमान तक गर्म होना चाहिए। कमजोर बछड़ों के लिए दिन में तीन बार पिलाया करें। तरल दूध पिलाने की सीमा इसके शरीर के वजन का 10% है और अधिकतम 5-6 लीटर प्रतिदिन है और 6 से 10 सप्ताह तक तरल दूध पिलाना जारी रखें। अधिक दूध पीने से 'बछड़ा रोग' (calf scour) होता है।

बछड़े को बाल्टी में दूध पिलाने हेतु प्रशिक्षण

- बछड़ों को बाल्टी से दूध पीने के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए ताकि प्रबंधन आसान हो। आमतौर पर संकर नस्ल के बछड़े बाल्टी या निपल से दूध पीना जल्दी सीख जाते हैं। लेकिन भैंस के बछड़ों को प्रशिक्षित करना थोड़ा मुश्किल है। उबले और ठंडे दूध की निर्धारित मात्रा को दूध की बाल्टी में डाला जाना चाहिए और इसे बछड़े के पास ले जाना चाहिए।
- सफाई के बाद परिचारक को सबसे पहले अपनी दो अंगुलियों (तर्जनी और मध्यमा) को दूध में डुबाना चाहिए और बछड़े के मुंह के पास रखना चाहिए। दूध का स्वाद चखने के बाद बछड़ा उंगलियां चूसना शुरू कर देगा।धीरे-धीरे उंगलियों को दूध में डुबाना चाहिए। जब बछड़ा एक या दो कौर दूध पी ले तो उंगलियां हटा दें।जब भी बछड़ा दूध पीना बंद कर दे और अपना सिर उठा ले तो यह प्रक्रिया दोहराई जा सकती है।
- इस विधि में बछड़ों को जन्म के समय दूध छुड़ाया जाता है और उन्हें निपल या बाल्टी से दूध पीने के लिए प्रशिक्षित किया जाता है।

दूध के प्रतिस्थापनकर्ता

- दूध के प्रतिस्थापन या दूध के विकल्प में मूल रूप से मलाई रहित दूध पाउडर शामिल होता है। कुछ खनिजों और विटामिनों के साथ ग्लूकोज, सोयाबीन का आटा और अनाज के आटे का एक छोटा सा हिस्सा भी मिलाया जा सकता है।
- प्रतिस्थापक (किलो) और पानी (लीटर) का इष्टतम अनुपात 1:8 है। अच्छे दूध प्रतिस्थापन मिश्रण में 50 भाग स्प्रे सूखा स्किम्ड दूध पाउडर, 10 भाग सूखा मट्ठा और 40 भाग गैर-दूध स्रोत शामिल होना चाहिए।

टैगिंग

- जन्म के बाद बछड़े की पहचान के लिए टेग लगाना चाहिए। अनावश्यक दर्द से बचने के लिए कानों में टैग ठीक से लगाना महत्वपूर्ण है, रक्तस्राव को रोकने के लिए इन नसों को छेदने से बचें। टैग को कान के मध्य एक तिहाई भाग में डालें। नवजात बछड़े को जन्म के 5 दिनों के भीतर टैग किया जाना चाहिए।

बछड़ा स्टार्टर

- बछड़ों को खिलाया जाने वाला सांद्र मिश्रण हैं। बछड़े जीवन के दूसरे सप्ताह से थोड़ी मात्रा में सूखा स्टार्टर खाना शुरू कर देते हैं। उन्हें स्टार्टर मिश्रण खाने के लिए प्रशिक्षित करने के लिए, निम्नलिखित प्रक्रिया उपयोगी हो सकती है। बछड़ा स्टार्टर अत्यधिक स्वादिष्ट होना चाहिए। यह उच्च ऊर्जा (75% टीडीएन) होना चाहिए और इसमें 14-16 प्रतिशत सुपाच्य क्रूड प्रोटीन होना चाहिए। बछड़ा स्टार्टर बछड़े को इच्छानुसार खिलाया जाना चाहिए।

सींग निकालना/ डिसबडिंग

- जब बछड़े लगभग 10 से 15 दिन के हो जाएं तो उनके सींगों को हटा दिया जाए। अधिक उम्र के जानवरों के सींग निकालने की प्रक्रिया दर्दनाक होती है और इससे अत्यधिक रक्तस्राव होता है ।
- **बछड़ों का सींग निकालने की कई विधियाँ हैं। सबसे आम हैं:-** गर्म लोहे की विधि
- इस उद्देश्य के लिए विशेष रूप से डिज़ाइन किए गए इलेक्ट्रिक डीहॉर्नर का उपयोग किया जाता है। यह रक्तहीन विधि है और इसका प्रयोग किसी भी मौसम में किया जा सकता है।
- बिजली से गर्म की गई छड़ में एक स्वचालित नियंत्रण होता है जो तापमान को लगभग 1000 ° F पर बनाए रखता है, इसे सींग की कली पर 10 सेकंड के लिए लगाना सींग के ऊतकों को नष्ट करने के लिए पर्याप्त है।
- सींग अंकुर के जल जाने के पश्चात उस स्थान को एंटी-सेप्टिक घोल से साफ़ किया जाना चाहिए तथा एंटीसेप्टिक स्प्रे किया जाना चाहिए जिससे की संक्रमण को रोका जा सके

अन्य प्रबंधन प्रथाएं

- एक महीने बाद अच्छी गुणवत्ता वाला हरा चारा और घास दें। रुमेन के शुरुआती विकास को प्रोत्साहित करने के लिए बछड़े को उम्र के पहले सप्ताह तक अच्छी गुणवत्ता वाली घास (फलियांदार घास) प्रदान की जानी चाहिए
- स्वच्छ पेयजल हर समय उपलब्ध कराया जाना चाहिए
- पेन का फर्श पर्याप्त ढलान वाला होना चाहिए और पेन को हमेशा सूखा रखना चाहिए।
- एस्कारियासिस के लिए बछड़ों को पहले सप्ताह में ही कृमि मुक्त किया जाना चाहिए। उनके शरीर के वजन के आधार पर 7वें दिन और 21वें दिन के बाद बछड़ों को कृमिनाशक दवा देनी चाहिए
- विकास दर में सुधार के लिए एंटीबायोटिक्स और फ़ीड एडिटिव्स को दूध में मिलाया जाना चाहिए।
- बछड़ों को संक्रामक रोगो से बचाने हेतु निर्धारित समय पर टीकाकरण करवाना चाहिए।
- 8-9 सप्ताह की आयु में नर को बाधियाकरण कर देनी चाहिए।
- 6 महीने के बाद नर और मादा बछड़ों को अलग-अलग रखा जाना चाहिए।

महेन्द्र पाठक
9752647699
9131842599
सहज किशान सेवा केन्द्र
हमारे यहाँ धान, सोयाबीन, उड़द, गेहूँ एवं कीटनाशक दवायें उचित रेट पर मिलते हैं।
भितरवार रोड, आई.सी.आई.सी.आई. बैंक के सामने, छावड़ा डॉ. के पास, डबरा (ग्वालियर)
02/203-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

औषधीय और पोषक गुणों से भरपूर विभिन्न बहुमूल्य मशरूम

✍ **आदित्य, नीरज** कृषि और पर्यावरण विज्ञान विभाग, राष्ट्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी उद्यमशीलता एवं प्रबंधन संस्थान (निफ्टेम-के), भारत का राष्ट्रीय महत्व का संस्थान, सोनीपत, (हरियाणा)

✍ **भाटिया** पादप रोग विज्ञान विभाग, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि वि.वि., हिसार, हरियाणा

मशरूम को खुम्ब, खुम्बी या कुकुरमुत्ता भी कहते हैं जो बरसात के दिनों में गले-सड़े कार्बनिक पदार्थ पर अनायास ही दिखने लगता है। यह एक मृतोपजीवी है जो हरितपर्ण के अभाव के कारण अपना भोजन स्वयं संश्लेषित नहींह्व कर सकता है। इसका शरीर थैलीनुमा होता है जिसको जड़, तना और पत्ती में नहीं बाँटा जा सकता है। मशरूम वैज्ञानिक रूप से पादपवर्गीय हरितपर्णरहित अर्थात क्लोरोफिलरहित फफूँद श्रेणी का वह पौधा जो स्वयं भोजन नहीं बना सकता जिस कारण पोषण तत्वों की आवश्यकता पूर्ति के लिए ये कई प्रकार के कार्बनिक पदार्थों पर प्राकृतिक रूप में उगते दिखायी देते हैं। खुम्ब की सरंचना मशरूम प्रदत्त बीजाणुओं से धागे के समान कवक जाल से होती है।

मशरूम एक पौष्टिक, स्वादिष्ट, स्वास्थ्यवर्धक एवं औषधीय गुणों से भरपूर रोगरोधक सुपाच्य खाद्य पदार्थ है। इसमें प्रोटीन, खनिज-लवण, विटामिन जैसे पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में होने के साथ-साथ लाभकारी रेशे भी खूब मात्रा में विद्यमान होते हैं। चीन के लोग इसे महा-औषधी एवं रसायन सदृश्य मानते हैं जो जीवन में अदभुत शक्ति का संचार करने में सक्षम है। इसके विविध गुणों के कारण रोम निवासी मशरूम को ईश्वर का आहार मानते हैं। इसमें विशेष प्रकार की आकर्षक खुशबू होने के कारण लोगों द्वारा आहार के रूप में ज्यादा पसन्द किया जाता है। शुरूआती दौर में मशरूम को केवल इनकी स्वादिष्टता के कारण ही सेवन किया जाता था लेकिन औषधीय गुणों के कारण अब यह गुणकारी आहार के रूप में स्थापित हो चुकी है। दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों में इस्तेमाल होने वाली पारंपरिक दवाइयों में इसे एक प्रशंसनीय स्थान भी मिला है। आजकल परम्परागत कृषि में सब्जियों को उगाने से लेकर आकर्षक रंग-रूप तक देने में रासायनिक खाद, कीटनाशक, फफूँदनाशक या कृषि उत्पाद को जल्दी बढ़ाने वाले हार्मोन इत्यादि का प्रयोग किया जाता है जोकि मानव स्वास्थ्य के लिये हानिकारक सिद्ध होता जा रहा है। इन कृषि उत्पादों के साथ रासायनिक तत्व हमारी आहार-श्रृंखला में प्रवेश कर शरीर में पहुँचकर धीरे-धीरे रोगरोधी तन्त्र को कमजोर बनाते हैं। मशरूम उत्पादन में किसी भी प्रकार के घातक रासायनों का उपयोग नहीं किया जाता है वरन् मशरूम-आधारित आहार अन्य प्रकार की सब्जियों के अधिक गुणकारी होने के साथ-साथ यह मानवीय शरीर में बीमारियों के प्रति रोगप्रतिरोधक क्षमता को भी बढ़ाता है। अतः इस सन्दर्भ में मशरूम की उपयोगिता लगातार बढ़ती जा रही है। यह पोषक गुणों से भरपूर शाकाहारी जनसंख्या के लिये महत्वपूर्ण विकल्प है। मशरूम में प्रचूर मात्रा में प्रोटीन, विटामिन, खनिज-लवण व अन्य पदार्थ अधिकांश पदार्थ सब्जियों की तुलना में अधिक पाये जाते हैं जो कि मानव जाति के लिए पौष्टिक, स्वादिष्ट व स्वास्थ्यवर्धक पाए गए हैं।

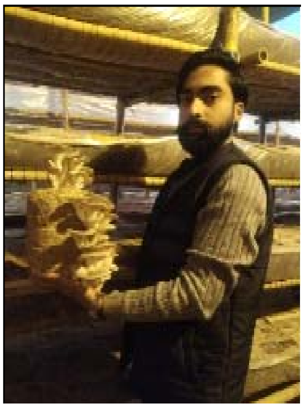

इसीलिए, खाद्य एवं कृषि संगठन ने भी मशरूम को सम्पूर्ण आहार का दर्जा दिया हुआ है।

भारत में प्रमुख रूप से छह प्रकार के मशरूम की खेती की जाती है: 1. सफेद बटन मशरूम 2. ऑयस्टर/ढिंगरी मशरूम 3. दूधिया मशरूम 4. पैडी स्ट्रॉ मशरूम 5. शिटाके मशरूम 6. ऋषि मशरूम

1.सफेद बटन मशरूम के औषधीय महत्व: यह विश्व में सर्वाधिक उगाया जाने वाला खाद्य मशरूम है लेकिन औषधीय गुणों की उपलब्धता के कारण इसका औषधीय महत्व भी है । यह उन लोगों के लिए कुछ स्वास्थ्य लाभ भी है जिन्हें मधुमेह और उत्सर्जन प्रणाली की बीमारियाँ हैं। इसमें हृदय सम्बन्धी रोगों के निदान हेतु रक्त के जमाव को रोकने के लिये लैक्टिन, कैंसर रोधी भरेटिन तथा जीवाणु रोधी हिर्सेटिक अम्ल, फिनोलिक व क्यूनाँन पाया जाता है। इस में भरेटिनी नामक कैंसर रोधी तथा हिर्सटिक अम्ल नामक जीवाणुरोधी पदार्थ पाया जाता है। इसका सेवन पाचन तंत्र को दक्ष बनाता है, बीमारियों के प्रति रोग रोधी क्षमता बढ़ाता है तथा रक्त में उपस्थित कोलेस्ट्राल को कम करके हृदय रोगों को दूर करता है।

2.ढिंगरी मशरूम के औषधीय महत्व: यह विश्व में उगाये जाने वाले मशरूमों में तीसरा प्रमुख मशरूम है तथा भारत में इसका दूसरा स्थान है। इस मशरूम को खाने से शरीर में ग्लूकोज सहन करने की क्षमता बढती है जिससे मधुमेह रोगियों के उपचार में अत्यन्त लाभकारी पाया गया है। जल में घुलनशील कार्बोहाइड्रेट की उपस्थिति के कारण इसमें कैंसर रोधी गुण पाये जाते है साथ ही उत्सर्जन तन्त्र सम्बन्धी रोगों एवं कोलेस्ट्राल को कम करने में भी सहायक है।

3.दूधिया मशरूम के औषधीय महत्व: दुग्ध मशरूम का पोषक मूल्य अन्य मशरूम के बराबर होता है। सी. इंडिका के परिपक्व फल शरीर में उच्चतम प्रोटीन (शुष्क वजन के आधार पर 17.2 प्रतिशत) होता है, जबकि युवा पिन हेड में सबसे कम प्रोटीन (शुष्क वजन के आधार पर 15 %), 4.1% वसा, 3.4% कच्चा फाइबर और 64.26 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट (शुष्क वजन के आधार पर) होता है।

4.धान के पुआल का मशरूम के औषधीय महत्व: यह मशरूम एक प्रकार का फंगस है जो गर्म मौसम में पाया जाता है। कुछ मशरूम में टॉक्सिन्स होते हैं जो कैंसर कोशिकाओं के विकास को रोकने में मदद कर सकते हैं। यह हृदय की समस्याओं, उच्च रक्तचाप, कोलेस्ट्रॉल की समस्याओं और कैंसर से संबंधित अन्य बीमारियों के इलाज में मददगार पाया गया है।

5.शिटाके मशरूम के औषधीय महत्व: शिटाके मशरूम एक प्रकार का मशरूम है जो दुनिया के कई हिस्सों में बहुत लोकप्रिय है। इनका उपयोग भोजन और दवा के रूप में किया जाता है और इसके कई स्वास्थ्य लाभ हैं। शिटाके मशरूम को इतना खास बनाने वाली चीजों में से एक यह है कि इनमें एरीटाडेनाइन नामक पदार्थ होता है। एरीटाडेनाइन रक्त में कोलेस्ट्रॉल, ट्राइग्लिसराइड्स और फॉस्फोलिपिड्स की मात्रा को कम करने में मदद करता है, जो रक्तचाप को कम करने में मदद कर सकता है। इसके अतिरिक्त, शिटाके मशरूम में पॉलीसेकेराइड्स (पदार्थ जो शरीर को बीमारी से बचाने में मदद करते हैं) होते हैं जो रक्त परिवहन, रक्तस्राव, आंख और गले की समस्याओं और मस्तिष्क संबंधी बीमारियों को रोकने में मदद कर सकते हैं।

6. ऋषि मशरूम के औषधीय महत्व: ऋषि मशरूम औषधीय गुणों से भरपूर हैं और विभिन्न स्वास्थ्य समस्याओं के इलाज के लिए इसके विभिन्न टानिक तथा टेबलेट बाजार में उपलब्ध हैं। ऋषि मशरूम में दो सबसे महत्वपूर्ण रसायन पॉलीसेकेराइड और ट्राइटरपेनॉयड हैं। ये पदार्थ उच्च रक्तचाप, मधुमेह, कैंसर और एड्स जैसी स्थितियों से लड़ने में मदद करते हैं। मानसिक तनाव को कम करने और विभिन्न स्वास्थ्य समस्याओं के इलाज के लिए लोग सदियों से ऋषि मशरूम का उपयोग करते आ रहे हैं।

विभिन्न मशरूम	पोष्टिक पदार्थ						
	प्रोटीन %	काबार्होइड्रेड %	फैट %	ऊर्जा %	रेसा %	खनिज %	पानी %
सफेद बटन मशरूम	26-29	56-60	8-10	350-355	8-9	9-11	91-94
ढिंगरी मशरूम	28-32	54-58	2-3	346-350	8-11	9-12	90-92
दूधिया मशरूम	16-20	63-65	3-6	360-363	6-8	6-8	84-87
पैडी स्ट्रॉ मशरूम	28-31	57-60	4-6	372-375	9-10	8-11	86-89
शिटाके मशरूम	2-5	5-9	0.3-0.5	357-359	2-4	12-15	86-90
ऋषि मशरूम	15-18	82-85	0.5-0.7	394-399	51-54	29-31	84-88

हमारे देश में कई तरह के मशरूम उगते हैं। कुछ लोगों को इसका उपयोग करना नहीं आता है, इसलिए वे इसके पूर्ण औषधीय लाभ प्राप्त करने में सक्षम नहीं होते हैं। मशरूम उत्पादन को विकसित करने में मदद करना हम सभी की जिम्मेदारी है ताकि अधिक से अधिक लोग इस मूल्यवान संसाधन से लाभान्वित हो सकें और हम मशरूम का उत्पादन करने वाले व्यवसायों को बढ़ावा देने में सहायता करके ऐसा कर सकते हैं। मशरूम की खेती न केवल पोषण और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करती है बल्कि यह एक लाभदायक उद्यम भी है जो देश के बेरोजगार युवाओं को रोजगार प्रदान कर सकता है और भारत के "आत्मनिर्भर भारत अभियान योजना 2023" में एक महत्वपूर्ण योगदान दे सकता हैं।

राजमा : मुख्य रोग एवं उनका उपचार

प्रोमिल कपूर, मनमोहन सिंह
दलविंद्र पाल सिंह
पादप रोग विभाग, चौ. चरण सिंह हरियाणा
कृषि विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

परिचय: राजमा दलहनी फसलों में बहुत ही महत्वपूर्ण फसल है। इसका वैज्ञानिक नाम फैजियोलस बल्गेरिस है। यह पोषक तत्वों से भरपूर एक शाकाहारी खाद्य पदार्थ है। इस फसल की उत्पति का स्थान अमेरिका माना जाता है। इसे राजमास, किडनी बीन, बलूबीन आदि कई नामों से जाना जाता है। इसका उपयोग सब्जी, व दाल के रुप में किया जाता है। राजमा के सेवन से कई फायदें मिलते हैं। इसमें 20-25% प्रोटीन,10% वसा व 60% कार्बोहाइड्रेट तथा प्रचुर मात्रा में कैल्शियम,फास्फोरस तथा लोहा पाया जाता है। राजमा का बीज लाल, चितकबरा, सफेद, नीला इत्यादि कई रंगों का होता है। राजमा की खेती रबी और खरीफ दोनों मौसम में होती है। राजमा को शीतोषण एवं समशीतोषण दोनों तरह की जलवायु में उगाया जाता है। राजमा की अच्छी बढ़वार हेतु 10 से 27 डिग्री सेंटीग्रेट तापमान की आवश्यकता पड़ती है और हल्की दोमट से लेकर भारी चिकनी मिट्टी इस फसल के लिए उपयुक्त मानी जाती है। हरियाणा और पंजाब में इसकी बुवाई अक्टूबर के पहले सप्ताह में की जा सकती है। राजमा की फसल में प्रमुख बाधक रोग है। यदि इन रोगों की सही पहचान करके उचित समय पर नियंर्तण कर लिया जाये तो अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। इस उद्देश्य को दृष्टि मे रखते हुए प्रस्तुत लेख में राजमा के प्रमुख रोगों के लक्षण एवं उनके प्रबधंन के बारे में जानकारी दी गई है।

1. **एन्थ्रेक्नोज रोग:** यह रोग उत्पन्न करने वाली कवक कोलेटोट्रिकम लिंडेमुथियानम है। यह रोग पौधे के किसी भी भाग को प्रभावित कर सकता है। संक्रमित बीज पत्र के अंकुरों पर भूरे रंग के धंसे हुए धब्बे होते है। यह धब्बे लम्बे हो जाते है तथा तने पर धंसे हुए दिखाई देते हैं। काले, धंसे हुए धब्बों की वजह से तथा फफूंद के फली में प्रवेश करने की वजह से फलियां सिकुड़ जाती है। आद्र मौसम में एन्थ्रेक्नोज के धब्बों का केंद्र गुलाबी दिखाई पड़ता है।

उपचार: प्रमाणित रोगमुक्त बीज का उपयोग करना चाहिए। रोग प्रतिरोधक किस्मों के उपयोग को प्राथमिकता देनी चाहिए। संक्रमित पौधों को उचित तरीके से हटा कर नष्ट कर देना चाहिए। बीजोपचार के लिए कार्बेंडाजिम 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपयोग करना चाहिए। खेत में रोग का संक्रमण दिखाई देते ही मेनकोजेब (0.2 प्रतिशत) या कार्बेंडाजिम (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए और 15 दिन बाद दोबारा छिड़काव करना चाहिए।

2. **रतुआ रोग:** यह रोग यूरोमाइसेस एपेंडीकुलाटस फफूंद की वजह से होता है। इस रोग में पत्तियों की निचली सतह पर जंग के रंग के छाले (उभरे हुए) दिखाई देते है। गंभीर संक्रमण तने व फली पर भी पहुंच जाता है व पत्तियाँ पीली हो कर गिर जाती हैं।

उपचार: रोग प्रतिरोधक किस्म, त्रिपुरा राजमा-1 उगानी चाहिए। प्रमाणित रोगमुक्त बीजों का उपयोग करना चाहिए। पिछले साल के अवशेषों को जला देना चाहिए। 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से थीरम .कार्बेंडाजिम (1:1) से बीजोपचार करना चाहिए। खेत में रोग दिखाई देने पर मेनकोजेब (0.2 प्रतिशत) या प्रोपिकोनाजोल (0.1 प्रतिशत) का घोल तैयार करके खेत में छिड़कना चाहिए तथा आवश्यक हो तो 15 दिन बाद फिर से दोहराना चाहिए। खेत में साफ-सफाई का ध्यान रखें व उचित फसल चक्र अपनायें।

3. **जड़ गलन:** यह रोग राइजोक्टोनिया बटाटिकोला फफूंद की वजह से होता है। इस रोग में बीज के सड़ने के कारण अंकुर नहीं निकल पाते और जलयुक्त सड़न हो जाती है जो कि मिट्टी की रेखा से थोड़ा ऊपर या नीचे पौधे को प्रभावित करती है। पत्तियाँ पीली हो जाती हैं।

उपचार: इस रोग के उपचार के लिए ग्रीष्म ऋतु में गहरी जुताई करनी चाहिए। रोग प्रतिरोधक किस्म, त्रिपुरा राजमा-1 उगानी चाहिए। खेत में 150 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से नीम केक डालना चाहिए। ट्राइकोडर्मा विरिडी 4 ग्राम प्रति किलोग्राम या स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस 10 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करना चाहिए। बीजाई से पहले कार्बेंडाजिम या थीरम से 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करना चाहिए।

4. **सफेद मोल्ड (फफूंद):** यह रोग स्क्लेरोटिनिया स्क्लेरोटियोरम फफूंद की वजह से होता है। पत्तियों की सतह और संक्रमित फूलों पर सफेद रूई जैसी माइसेलियम की उपस्थिति देख जा सकता है। शुरू में फली, पत्तियों, शाखाओं और तने पर मौजूद घाव छोटे, गोलाकार व जलयुक्त दिखाई देते है लेकिन आकार में बड़े हो जाते है। आद्र परिस्थितियों में सफेद बाहरी माइसेलियम की वृद्धि हो जाती है। कठोर काले रंग के स्क्लेरोटिया पौधे की फली व तने पर देखे जा सकते है। गंभीर संक्रमण होने पर पौधे भी मर जाते हैं।

उपचार: रोग प्रतिरोधक किस्मों का उपयोग करें। अनाज व मक्की जैसी अन्य फसलों के साथ फसल चक्र अपनायें। पौधों की पक्तियाँ हवा की दिशा के समानांतर लगाएं। अधिक नाइट्रोजन देने वाले उर्वरक का प्रयोग न करें। कार्बेंडाजिम (0.2 प्रतिशत) से बीजोपचार करना चाहिए। कार्बेंडाजिम (0.1 प्रतिशत) का फूल खिलने से पहले तथा फूल खिल जाने के बाद दो बार छिड़काव करना चाहिए।

5. **पत्तों का कोणीय धब्बा रोग:** यह रोग फियोइसारियोप्सिस ग्रिसोला फफूंद की वजह से होता है। इस रोग में पत्तों के किनारों से उलझे हुए कई छोटे गहरे भूरे धब्बे दिखाई देते हैं। धब्बों के जुड़ने से उनका आकार बढ़ जाता है, जिससे पत्ता पीला दिखाई पड़ता है और अंततः पत्ते परिगलित हो जाते हैं। पत्ते समय से पहले ही गिर जाते हैं।

उपचार: प्रमाणित व स्वस्थ बीज उपयोग करना चाहिए। खेत में स्वच्छता का ध्यान रखना चाहिए। रोग प्रतिरोधक किस्में जैसे कि त्रिपुरा राजमा-1 लगानी चाहिए । प्रमाणित व स्वस्थ बीज उपयोग करना चाहिए। बीज को थीरम .कार्बेंडाजिम 2 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से बीजोपचार करना चाहिए। खेत में बीमारी दिखाई देते ही मेनकोजेब (0.2 प्रतिशत) या कार्बेंडाजिम (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए। पिछले साल के फसल अवशेषों को नष्ट करने से रोग का प्रकोप कम हो जाता है।

6. **जीवाणु अंगमारी:** यह रोग जेनथोमोनास एक्जोनोपोडिस के कारण होता है व जलायुक्त धब्बे जो कि पीले रंग के क्षेत्र से घिरे होते है, विकसित हो जाते हैं। धब्बे धीरे-धीरे बड़े होकर परिगलित हो जाते हैं और पौधा जला हुआ दिखाई देता है। फलियाँ गोलाकार, धंसे हुए और लाल भूरे रंग के धब्बे धारण करती हैं। नमी के मौसम में ये धब्बे रिस सकते हैं।

उपचार: केवल प्रमाणित बीजों व रोग प्रतिरोधक किस्मों का उपयोग करें। जीवाणु को मारने के लिए बिजाई से 30 मिनट पहले 500 पीपीएम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन मिश्रण से बीज को उपचारित करना चाहिए। 2 से 3 साल का फसल चक्र अपनायें व फसल अवशेषों की गहरी जुताई करें। रोग की उपस्थिति के तुरंत बाद कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (3 ग्राम प्रति लीटर) का छिड़काव करें।

7. **साधारण मौजेक:** यह एक विषाणु जनित रोग है जो कि बीन कॉमन मौजेक विषाणु द्वारा होता है। साधारण मौजेक रोग में पत्तियाँ मुड़ जाती हैं और कप जैसे दिखाई देती हैं। पत्तियों पर गहरा हरे रंग का मौजेक साँचा दिखाई देता है व रोग ग्रस्त पौधों में छोटी और मुड़ी हुई फलियाँ बनती है।

उपचार: ग्रीष्म ऋतु में गहरी जुताई करनी चाहिए। स्वस्थ व प्रमाणित बीज का प्रयोग करें। रोगग्रस्त पौधों को उखाड़ देना चाहिए। बीजारोपण से पहले 20 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर कीदर से फोरेट मिट्टी में मिलाना चाहिए। थायोमिथोक्साम 25 डब्ल्यू जी का 100 ग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से बिजाई के 30 व 45 दिनों बाद छिड़काव करना चाहिए। खेत को खरपतवार मुक्त रखें।

शिवहरे किसान सेवा केन्द्र डबरा
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाईयों के खेरिज विक्रेता
हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती है

प्रो. ओमप्रकाश शिवहरे
82248-44542
78282-60543
पंजाब नेशनल बैंक के सामने, भितरवार रोड, डबरा
10/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

पशुओं में परजीवियों के लिए आयुर्वेदिक उपचार

✍ **डॉ. धीमान पतगिरी PhD,** भाकृअनुप – राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)

✍ **मनीषा चौधरी PhD,** भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)

सारांश

परजीवी संक्रमण विश्व स्तर पर पशुधन उत्पादन और पशु स्वास्थ्य हेतु एक महत्वपूर्ण चुनौती बने हुए हैं, विशेष रूप से उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में, जहाँ जलवायु परिस्थितियाँ परजीवियों की वृद्धि और अस्तित्व के लिए अनुकूल होती हैं। ये संक्रमण पशुधन उद्योग में उत्पादकता में गिरावट, विकास दर में कमी, और मृत्यु दर जैसी गंभीर आर्थिक हानियाँ पहुँचाते हैं। हाल के वर्षों में, सिंथेटिक कृमिनाशकों के व्यापक उपयोग से दवा-प्रतिरोधी परजीवियों का विकास हुआ है, जिससे वैकल्पिक उपचारों की आवश्यकता बढ़ गई है। यह अध्याय पशुओं में परजीवी संक्रमण के प्रबंधन हेतु आयुर्वेदिक दृष्टिकोण पर चर्चा करता है, जिसमें विशिष्ट औषधीय पौधों और जड़ी-बूटियों, उनके सक्रिय यौगिकों और उनके क्रियाविधि पर प्रकाश डाला गया है।

अज़ादिरैक्टा इंडिका (नीम), एलियम सैटिवम (लहसुन), कुर्कुमा लोंगा (हल्दी), और एम्बेलिया राइब्स (विडंग) जैसी जड़ी-बूटियों के उपयोग का विश्लेषण करते हुए, यह अध्याय दिखाता है कि कैसे आयुर्वेद पशु चिकित्सा में परजीवी संक्रमणों के लिए एक समग्र और टिकाऊ समाधान प्रदान करता है। इन उपचारों की प्रभावशीलता का समर्थन करने वाले वैज्ञानिक अध्ययनों की भी समीक्षा की गई है।

1. **परिचय:** परजीवी रोग विश्व स्तर पर पशुधन के स्वास्थ्य और उत्पादकता के लिए एक बड़ा खतरा हैं। ये परजीवी गाय, भेड़, मुर्गीपालन से लेकर पालतू जानवरों तक कई प्रकार के जीवों को प्रभावित करते हैं, जिससे चारा सेवन में कमी, विकास दर में गिरावट, दूध उत्पादन में कमी, और गंभीर मामलों में मृत्यु हो सकती है। परजीवी मुख्य रूप से दो प्रकार के होते हैं:

1.एंडोपैरासाइट्स (आंतरिक परजीवी): जैसे कृमि (हेल्मिन्थ्स) और प्रोटोज़ोआ, जो मेजबान के शरीर के अंदर रहते हैं। उदाहरणः हेमोनकस कॉन्टोर्टस, ओस्टरटाजिया ओस्टरटाजी, और ट्राइकोस्ट्रॅान्गिलस प्रजातियाँ ।

2.एक्टोपैरासाइट्स (बाहरी परजीवी): जैसे किलनी, जूं, और घुन, जो त्वचा या बाहरी शरीर के भागों को संक्रमित करते हैं। पारंपरिक कृमिनाशक दवाओं (जैसे बेंज़िमिडाज़ोल, इमिडाज़ोथियाज़ोल, और मैक्रोसाइक्लिक लैक्टोन्स) के प्रति परजीवियों की बढ़ती प्रतिरोधक क्षमता के कारण, वैकल्पिक चिकित्सा की खोज तेज़ हो गई है। साथ ही, रासायनिक उपचारों से मांस, दूध और अंडों में अवशेष रह सकते हैं, जिससे खाद्य सुरक्षा और पर्यावरण प्रदूषण की चिंताएँ बढ़ जाती हैं। इन चुनौतियों के समाधान के रूप में, आयुर्वेदिक उपचार एक प्राकृतिक और प्रभावी विकल्प प्रदान करते हैं।

2. आयुर्वेद में परजीवी रोगों का सिद्धांत

आयुर्वेद के अनुसार, स्वास्थ्य तीन दोषों– वात, पित्त और कफ– के संतुलन पर निर्भर करता है। परजीवी संक्रमण इन दोषों के असंतुलन को बढ़ाते हैं। **उदाहरण के लिए:**

* यदि पाचन विकार होते हैं, तो यह कफ दोष के असंतुलन से संबंधित हो सकता है।
* कमजोरी और थकान वात दोष के असंतुलन को दर्शाती है।
* बुखार और सूजन पित्त दोष के असंतुलन का संकेत देती है।

आयुर्वेदिक उपचार मुख्य रूप से तीन चरणों में कार्य करते हैं:

1.**डिटॉक्सिफिकेशन:** शरीर से विषैले पदार्थों को निकालना।

2.प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करनाः जिससे शरीर परजीवियों से खुद को बचा सके।

3.परजीवियों का प्रत्यक्ष उपचारः जड़ी-बूटियों के कृमिघ्न (एंटी-पैरासिटिक) गुणों के माध्यम से।

3. प्रमुख आयुर्वेदिक जड़ी-बूटियाँ और उनका परजीवी-रोधी प्रभाव

3.1. नीम (Azadirachta indica)

सक्रिय यौगिक : अज़ादिराच्टिन, निम्बिन, निम्बिडिन, क्वेरसेटिन।

प्रभाव तंत्र : अजादिराच्टिन परजीवियों के जीवन चक्र को बाधित करता है और उनके प्रजनन को रोकता है।

उपयोग : नीम की पत्तियाँ या तेल चारे में मिलाकर दिया जा सकता है या त्वचा पर लगाया जा सकता है।

लहसुन (Allium sativum)

सक्रिय यौगिक: एलिसिन, अजोन, डायलिल डिसल्फाइड।

प्रभाव तंत्र: परजीवियों की ऊर्जा चयापचय को बाधित करता है।

उपयोग: ताजा लहसुन को चारे में मिलाकर या तेल के रूप में दिया जा सकता है।

3.3. हल्दी (Curcuma longa)

सक्रिय यौगिक: करक्यूमिन, टरमरोन।

प्रभाव तंत्र: परजीवियों की कोशिका झिल्ली को नुकसान पहुँचाता है।

उपयोग: हल्दी पाउडर को चारे में मिलाया जा सकता है या त्वचा पर लगाया जा सकता है।

3.4. विडंग (Embelia ribes)

सक्रिय यौगिक: एम्बेलिन।

प्रभाव तंत्र: कृमियों को पंगु बनाकर बाहर निकालता है।

उपयोग: चूर्ण रूप में चारे में मिलाकर दिया जा सकता है।

आयुर्वेदिक योग और उनके लाभ

4.1. विदंगासव

मुख्य घटक: विडंग, काली मिर्च, अदरक, दालचीनी।

उपयोग: आंतों के कृमियों को नष्ट करने और पाचन सुधारने के लिए।

4.2. कृमिघ्न चूर्ण

मुख्य घटक: नीम, हल्दी, काली मिर्च, अजवाइन।

उपयोग: पेट के कीड़ों को खत्म करने के लिए।

5. वैज्ञानिक प्रमाण

नीम: (चक्रवर्ती एवं भट्टाचार्य, 2020) ने पाया कि नीम का उपयोग पशुओं में कृमियों की संख्या को कम करने में प्रभावी है।

लहसुन: (रहमान एवं लोवे, 2021) ने दिखाया कि लहसुन कृमिनाशक प्रभावी है।

हल्दी: (गुप्ता एवं अन्य, 2019) ने बताया कि हल्दी कृमियों की संख्या को कम करने में सहायक है।

6. **निष्कर्ष:** आयुर्वेदिक उपचार परजीवी संक्रमणों के लिए एक प्राकृतिक, सुरक्षित और टिकाऊ विकल्प प्रदान करते हैं। ये उपचार केवल परजीवियों को खत्म करने तक सीमित नहीं हैं, बल्कि पशुओं की प्रतिरक्षा और समग्र स्वास्थ्य में भी सुधार करते हैं। निरंतर अनुसंधान से इन औषधियों की प्रभावशीलता को और मजबूत किया जा सकता है, जिससे पशु चिकित्सा में उनका उपयोग बढ़ाया जा सके।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

कुकुर्बिट्स की डायरा खेती

✍शालू शर्मा (एम.एस.सी) डॉ. वाइएस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौनी, सोलन (हि.प्र.)

✍बलबीर सिंह डोगरा (प्रधान वैज्ञानिक) डॉ. वाइएस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौनी, सोलन (हि.प्र.)

✍शिवाली धीमान (पी.एच.डी.) डॉ. वाइएस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय नौनी, सोलन (हि.प्र.)

✍अंजली कुमारी (पी. एच. डी.) डा. वाइ एस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौनी, सोलन (हि.प्र.)

परिचयः रेत के जमाव के कारण नदी के अंदर बनाई गई भूमि का एक टुकड़ा दियारा भूमि या नदी तल के रूप में जाना जाता है। नदी के किनारों में खेती से ऑफ सीजन उत्पादन की सुविधा मिलती है जो कई कुकुरबिटेशियस सब्जियों में मजबूर सब्जी का एक प्रकार है जो विशुद्ध रूप से भारतीय सब्जी उत्पादकों का स्वदेशी और नवाचार है। ÷दियारा÷ शब्द ÷दिया÷ शब्द से लिया गया है जिसका अर्थ है मिट्टी का दीपक। ÷दीया÷ के आकार के अनुरूप रखते हुए, नदी के दोनों ओर प्राकृतिक तटबंधों के बीच स्थित सतह (अवसाद) पर कटोरा जैसी प्रणालियां छोटे ÷दीयों÷ की तरह दिखाई देती हैं जब बारिश के मौसम में बारिश का पानी उनमें जमा हो जाता है। सर्वेक्षण में यह देखा गया कि कुकुरबिट्स की खेती के तहत कुल क्षेत्र में से 60त्न क्षेत्र गर्मी के मौसम के दौरान नदी तल खेती के तहत है, कुल कुकुरबिट्स उत्पादन का लगभग 75-80त्न नदी तल या दियारा भूमि क्षेत्र में उत्पादित किया जा रहा है जो फरवरी से जून तक बाजार में उपलब्ध है।

मुख्य धारा से सटीक स्थान के आधार पर दियारा भूमि का वर्गीकरण

1. मुख्य नदी तल (निचली भूमि) डायरा- वास्तविक नदी तल, जिसमें सतह पर मोटे जमा करने के लिए महीन रेत होती है, गैर-मानसून मौसम यानी दिसंबर/जनवरी से मई/जून के दौरान उपलब्ध हो जाती है जब तक कि शुरुआती बारिश शुरू नहीं हो जाती। मुख्य फसल लौकी और करेला है।

2. मुख्य भूमि (मध्यम भूमि) दियारा- ये क्षेत्र नदी के तट पर स्थित हैं और इसकी चौड़ाई काफी भिन्न होती है। बरसात के मौसम में बाढ़ के पानी की सूजन से वे अक्सर जलमग्न हो जाते हैं। मुख्य डायरा क्षेत्र की गहराई विभिन्न स्थानों पर काफी भिन्न होती है। मुख्य फसल तरबूज, खीरा, लफ्फा, नुकीली लौकी और खरबूजा है।

3. अपलैंड डायरा- निरंतर जमाव के कारण, ऐसे क्षेत्रों को ऊंचा कर दिया गया है और मुख्य भूमि डायरा क्षेत्रों की तुलना में अपेक्षाकृत कम बार बाढ़ आती है। सभी प्रचालनात्मक उद्देश्यों के लिए ये क्षेत्र सामान्य (गैर-डायरा) भूमि से बहुत अलग नहीं हैं। मुख्य फसल नुकीली लौकी है।

अन्य वर्गीकरण

1. रिवरबेड दियारा- गैर-मानसून मौसम के दौरान नदी के तल के बहने वाले हिस्से के दोनों किनारों पर खेती के लिए उपलब्ध भूमि।

2. नदी के किनारे दियारा- नदी के किनारों और प्राकृतिक तटबंधों या मौजूदा तटबंधों के बीच खेती के लिए उपलब्ध भूमि की पट्टियाँ।

3. बाढ़ प्रभावित दियारा- असुरक्षित पहुंच से सटे खेती के लिए उपलब्ध भूमि। 4. बाढ़ प्रवण दियारा- नदी के तटबंधों या तटबंधों से परे दोनों तरफ का क्षेत्र।

खेती

भूमि की तैयारीः नदी के किनारे के भूखंडों को किसानों द्वारा चुना जाता है, जिसमें भूखंड नदियों के प्रवाह के लंबवत होते हैं। अक्तूबर-नवम्बर के दौरान बाढ़ के घटने और दक्षिण-पश्चिम मानसून के गड्ढे अथवा खाइयां अथवा नहरें तैयार की जाती हैं।

रोपण की प्रणालीः अधिकांश किसान व्यक्तिगत पसंद और श्रम की उपलब्धता के आधार पर रोपण की निम्नलिखित प्रणाली का चयन करते हैं। वे हैं -

रोपण की गड्ढे प्रणाली

रोपण की खाई प्रणाली

बीज दर, बीज उपचार और बुवाई/रोपाई का समयः उगाई जाने वाली फसलों के अनुसार बीज दर अलग-अलग होती है। बुवाई आमतौर पर नवंबर के पहले पखवाड़े और दिसंबर के पहले सप्ताह में अगेती फसल के लिए की जाती है। जनवरी का पहला सप्ताह देर से बुवाई के लिए सबसे अच्छा समय है। बीज खाई में 45-60 सेमी की दूरी पर और 3 से 4 सेमी की गहराई पर बोए जाते हैं। दो बीज आमतौर पर एक स्थान पर बोए जाते हैं। तापमान बहुत कम होने पर चिकनी अंकुरण के लिए पूर्व अंकुरित बीज बोए जाते हैं। इसके लिए, बीजों को 24 घंटे के लिए पहले से भिगो दें और नम बीजों को एक बोरे पर रखें और उन्हें सूती कपड़े से ढक दें और अंकुरित होने के लिए लगभग एक सप्ताह के लिए गर्म स्थान पर रख दें। कभी-कभी सिक्त बीजों को बोरों में लपेटा जाता है, जल्दी अंकुरण के लिए आग के पास छोड़ दिया जाता है और इस तरह अंकुरित होना 5-6 दिनों के बाद शुरू होता है। जैसे ही बीज कोट के बाहर अंकुरित उभरे, उन्हें लगाया जाता है। आम तौर पर, 3-4 पूर्व-अंकुरित बीज/पहाड़ी क्षेत्र गड्ढों में बोए जाते हैं।

जल प्रबंधनः कुकुर्बिट्स में गहरी जड़ प्रणाली, पौधे को डायरा भूमि में जीवित रहने में सक्षम बनाती है। घड़े की सिंचाई अंकुरण और वृद्धि के प्रारंभिक चरणों में तब तक दी जाती है जब तक कि पौधों की जड़ें रेत के नीचे पानी के शासन को छू न लें या इस तरह छोड़ दें। रेतीली मिट्टी में पोषक तत्वों के लीचिंग नुकसान से बचने के लिए ट्रिकल या स्प्रिंकलर सिंचाई प्रणाली काफी फायदेमंद है।

छप्पर की तैयारीः उत्तर-पश्चिम भारत में, जब दिसंबर-जनवरी में सर्दी 1-2 0 डिग्री सेल्सियस कम हो जाती है, तो युवा पौधों को अपने शुरुआती चरणों में कम तापमान और ठंड से बचाया जाना चाहिए। धान के भूसे, सैकरम घास या गन्ने के पत्तों जैसी स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्री से बनी छप्पर की स्क्रीन युवा पौरों के लिए सुरक्षा प्रदान करती है। फरवरी के महीने में रेत के ऊपर बिस्तर और गीली घास के रूप में घास फैलाई जाती है, ताकि गर्मियों के दौरान कोमल और युवा पौधों और फलों को गर्मी की रेत से बचाया जा सके और तेज हवाओं के दौरान बेलों को बहने से भी रोका जा सके। ठंढ से बचाव के लिए एक विधि के रूप में पॉलीथीन कवर अभी भी विकसित किया जाना है। यह सस्ती होगी और सामान्य उत्पादकों के लिए आसानी से उपलब्ध होगी।

फसल पैटर्नः मिश्रित फसल आमतौर पर नदी के किनारों में प्रचलित है। तरबूज और कस्तूरी तरबूज आम तौर पर एक साथ चलते हैं। मुख्य रूप से एक साथ उगाए जाने वाले अन्य कुकुरबिट्स ग्रीष्मकालीन स्क्वैश, बोतल लौकी, गोल तरबूज, ककड़ी, स्पंज लौकी, करेला, उत्तर भारत में लंबे तरबूज, तुरई हैं।

कटाई और उपजः कटाई तब की जानी चाहिए जब फल काफी कोमल और खाने योग्य हों। जिन फलों को खाने योग्य फल पकने की आवश्यकता होती है उन्हें 2-3 दिनों के अंतराल पर तोड़ा जाना चाहिए, अन्यथा बीजों की परिपक्वता के कारण गुणवत्ता बिगड़ जाती है और फल कठोर हो जाते हैं। जून के अंत तक अक्टूबर के अंत तक नियमित अंतराल पर कटाई की जा सकती है।

नदी तल की खेती के फायदे

* प्रति इकाई भूमि क्षेत्र में उच्च शुद्ध रिटर्न
* जल्दी और उच्च उपज सिंचाई में आसानी
* खेती की कम लागत, अत्यधिक उपजाऊ भूमि बाहरी खनिज आवश्यकताओं को कम करती है

सीमित खरपतवार की वृद्धि

* कीट और रोग को सांस्कृतिक प्रथाओं, लागत प्रभावी श्रम सुविधाओं द्वारा नियंत्रित किया जाता है
* भूमि स्वामित्व की आवश्यकता नहीं भूमिहीन और सीमांत किसानों की आय और खाद्य सुरक्षा जलवायु परिवर्तन के लिए स्थानीय अनुकूलन।

समाप्तिः नदी के किनारे खेती किसानों की भेद्यता पर्यावरणीय झटके को बढ़ा सकती है क्योंकि नदी के किनारे की खेती कम पर्यावरणीय-प्रभाव, आसान-सहिष्णु, लागत प्रभावी तकनीक है जो भूमिहीन परिवारों को अप्रयुक्त सीमांत भूमि का उत्पादन करने की अनुमति देती है। इस प्रकार की खेती छोटे किसानों और सीमांत किसानों के लिए सबसे उपयुक्त है जो अपने परिवारों के साथ खेतों में खुद काम कर सकते हैं, बड़ी संख्या में कुकुरबिट्स और अन्य सब्जियों का किफायती उत्पादन कर सकते हैं. अल्प शोषित संसाधनों का उपयोग करके और सीमांत मिट्टी पर छोटे धारकों के उत्पादक कौशल को बढ़ाकर, यह बाढ़ जैसे पर्यावरणीय झटके के प्रभावों से निपटने के लिए सीमांत किसानों के विकल्पों को बढ़ाता है। इसके लिए भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी ने जिम्मेदारी ली है और एक बहु-संस्थागत परियोजना शुरू की है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

हरा चारा उत्पादन की उन्नत तकनीक

रंजना सिन्हा, दीप नारायण सिंह
पशुधन फार्म परिसर, बिहार पशु चिकित्सा महाविद्यालय, पटना (बिहार)

अंजली कुमारी बिहार कृषि विश्वविद्यालय सबौर

भारत में कृषि के साथ पशुपालन एक महत्वपूर्ण व्यवसाय है, पशुपालन भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करता है और लोगों को रोजगार प्रदान करता है। दुग्ध उत्पादन में हमारा देश विश्व में पहला है। पशुओं में दुग्ध उत्पादन के लिए हरे चारे की महत्वपूर्ण भूमिका है। हरा चारा पशुधन उद्योग का बड़ा हिस्सा है क्योंकि यह पशुओं के लिए ऊर्जा और प्रोटीन का स्रोत है। पशुओं को हरे चारे से विटामिन एवं खनिज लवण मिलता है, जिससे दुग्ध उत्पादन में बढ़ोतरी होती है।

हरा चारा पशुओं के चारे में उगाई जाने वाली कई प्रकार की फसलें और घासों को संदर्भित करता है, जिनमें कुछ लोकप्रिय किस्में में ज्वार, बाजरा, मक्का, लोबिया, ग्वार और शामिल हैं। हरे चारे का उत्पादन बढ़ाने के लिए, फसल चक्र का उपयोग, मिट्टी परीक्षण, उचित खाद और सिंचाई, खरपतवार की रोकथाम और उन्नत प्रजातियों का उपयोग कर हरे चारे की गुणवत्ता और मात्रा दोनों को बढ़ाता है। चारा फसलों की उन्नत प्रजातियों का चयन करके तथा उनका सही समय पर बुआई तथा उसका प्रबंधन करके किसान अधिक पैदावार ले सकते है।

हरे चारे के लिए उन्नत प्रजातियां

बाजरा - राज बाजरा चरी-2, जायन्ट बाजरा, एम पी -171, अविका बाजरा चरी

मक्का - अफ्रीकन टाल, प्रताप मक्का-6, जे-1006,

लोबिया - जी एफ सी -1, जी एफ सी -2, जी एफ सी -3

ग्वार - एच एफ जी-119, एच एफ जी-156

जई - केंट, ओ एस-6, यु पी ओ-212

बरसीम - मसकावी, जे एच बी -146, वरदान

बहुवर्षीय हरे चारे की फसल

नेपियर घास - पूसा ज्वाइंट , पूसा नेपियर घास -2, संकर नेपियर घास, बी एन एच -10, फुले जयवंत, सीओ-5

गिन्नी घास - पूसा जाइंट, एन.बी.-21, इगफ्री-10, आर.बी.एन.-9, इगफ्री-3, इगफ्री-6

लूसर्न - आनंद-2, एल एल सी -3, टाइप -8, और आर एल-88, सिरसा -8, सिरसा -9

नेपियर घास की बुआई फरवरी-मार्च, जुलाई -अगस्त एवं अक्टूबर - नवम्बर में होता है , नेपियर घास कम उपजाऊ जमीन में भी हो सकती है। इस घास लगाने के लिए कतार से कतार की दुरी 60 सेंटी मीटर तथा पौधे से पौधे की दुरी 30 सेंटी मीटर रखनी चाहिए। नियमित रूप से सिंचाई करते रहना चाहिए, बुआई के 70 -80 दिन बाद पहली कटाई करते है।

गिन्नी घास बहुवर्षीय हरे चारे में बहुत महत्वपूर्ण है। यह घास तेजी से बढ़ता है और पशुओं को स्वादिष्ट खाने में लगता है। गिन्नी घास अफ्रीका के गर्म और उपोषण क्षेत्रों में पाया जाता है। वर्तमान में गिन्नी घास दुनिया के सभी उष्ण एवं उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में पैदावार अच्छी होती है।

लूसर्न, जिसे रिजका या अल्फाल्फा के नाम से जाना जाता है, जिसे हरे चारे की रानी भी कहा जाता है। यह प्रोटीन युक्त हरा चारा है, एक प्रोटीन से भरपूर चारे की फसल है जो पशुओं के लिए बहुत फायदेमंद होती है। यह एक सदाबहार किस्म है जो 3-4 साल तक लगातार हरे चारे की आपूर्ति करती है

मिट्टी परीक्षण: हरा चारा उगाने से पहले मिट्टी की जांच करना आवश्यक है ताकि पता लगाया जा सके कि मिट्टी में कौन-से पोषक तत्वों की कमी है और उनकी भरपाई कैसे की जाए। मिट्टी की जांच करने से पता चलता है कि उसमें पोटेशियम, नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्वों की कितनी कमी है। परीक्षण आपको बता सकता है कि कौन सा और कितना उर्वरक इस्तेमाल करना चाहिए ताकि चारे की अच्छी पैदावार हो सके।

सिंचाई: हरे चारे के उत्पादन में सिंचाई बहुत महत्वपूर्ण है, विशेकर गर्मी के मौसम में। किसानों को सिंचाई की समुचित सुविधाओं की कमी और कम वर्षा के कारण हरे चारे की बहुत कमी का सामना करना पड़ता है। 10 से 15 दिन के अंतराल पर जई, मक्का, लोबिया, ज्वार और बाजरा जैसी चारा फसलों को सिंचाई करने की आवश्यकता होती है।

सिंचाई की आवश्यकता

जई - बुवाई के 20-25 दिन बाद पहली सिंचाई और फिर 15-20 दिन के अंतराल पर.

मक्का - गर्म मौसम में, 12-15 दिन के अंतराल पर सिंचाई करें.

ज्वार - बुवाई के 15-20 दिनों के बाद पहली सिंचाई और फिर 10-15 दिनों के अंतराल पर.

लोबिया - 8-10 दिन के अंतराल पर सिंचाई.

बाजरा - आवश्यकतानुसार 15-20 दिन के अंतराल पर.

खरपतवार नियंत्रण: हरा चारे में कई तरह के खरपतवार पनपते है, जिससे चारे की वृद्धि एवं उसके गुणवत्ता को प्रभावित करते है। इसलिए खरपतवार को नियंत्रण करना जरुरी होता है। हरा चारा उत्पादन में खरपतवारों को पनपने से रोकने के लिए खेत में जुताई, निराई और खरपतवारनाशी का प्रयोग किया जा सकता है। मिट्टी पलटने वाले हल या कल्टीवेटर से जुताई करके मिट्टी को भुरभुरी बना लेते है, जिससे खरपतवार को नस्ट किया जाता है। बुआई के बाद बीच-बीच में निराई -गुराई करके खरपतवार को निकल देते है। खरपतवारों को नष्ट करने के लिए जैविक रसायनों का छिड़काव करें, चारे की फसल के लिए सुरक्षित खरपतवारनाशी का उपयोग करें।

फसल चक्र: बाजरे की फसल प्रति वर्ष एक ही खेत में लगातार उगाने से उपज कम हो जाती है, इसलिए फलीदार फसलों का प्रयोग करें। फसल चक्र में विभिन्न चारे वाली फसलों को शामिल करके वर्ष भर हरा चारा उत्पादन किया जा सकता है, जैसे कि रबी में बरसीम, जई और खरीफ में लोबिया, मक्का, ज्वार, बाजरा आदि । चारे के लिए बोई गयी खरीफ के बाद फलीदार पशुचारा बरसीम, रिजका, लोबिया, जई इत्यादि बोना चाहिए, जिससे मिट्टी में नाइट्रोजन की मात्रा और उर्वरकता बनी रहे।

हाइड्रोपोनिक तरीके से हरा चारा: हाइड्रोपोनिक तकनीक से हरा चारा कम समय में और कम लागत में उगाया जा सकता है। इसमें कम पानी और बिना मिट्टी के 10 दिन में हरा चारा तैयार हो जाता है। इस तकनीक में जल में घुलनशील पोषक तत्वों का उपयोग किया जाता है। यह कैल्सियम, मैग्निशियम, पोटैशियम, नाइट्रेट, सल्फेट और फॉस्फेट को पोषक तत्वों के रूप में इस्तेमाल किया जाता है और हरा चारा के लिए मक्का, गेहूं, बाजरा, और की फसल आसानी से उगाई जा सकती है। इस तकनीक से चाहे कमरे में या छत पर 10 दिन के भीतर हरा चारा उगा सकते हैं ।

हाइड्रोपोनिक विधि से चारा उगाने के लिए मक्का, ज्वार और बाजरा के दानो को 24 घंटे के लिए भिंगो कर रखा जाता है, इसके बाद जुट के बोरो में ढककर अंकुरण के लिए रखा जाता है। बीजो से अंकुरण निकलने के बाद ट्रे में बराबर मात्रा में फैलाया जाता है, जिसकी लम्बाई 2 फीट, चौड़ाई 1.5 फीट और गहराई 3 इंच होनी चाहिए। प्रत्येक में एक किलो सूखे बीज रखते है, प्रारम्भ में बीजो पर लगातार पानी का छिड़काव करते है। चौथे से दसवें दिन तक इनमे वृद्धि होती है, इस दौरान ट्रे में सात दिनों तक फब्बारा के द्वारा दिन में 8 से 10 बार सिंचाई के जाती है। दसवें दिन में लगभग 8-10 किलो तक हरा चारा तैयार किया जाता है, जिसकी ऊंचाई लगभग 6-8 इंच तक की होती है।

जैन बीज भण्डार
एवं पशु आहार
मैन बाजार, चीनोर रोड,
छीमक जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
प्रो. मुकेश जैन, मोबाइल: 9977638510
04/2023-24

नेहा सिन्हा, श्रद्धा सुमन, कुमारी पुष्पा
दिव्या तिवारी, संतोष कुमार चौधरी
फलों विज्ञान विभाग, नालंदा उद्यान महाविद्यालय (बिहार)

बिहार क्षेत्र में कटहल की खेती की संभावनाएं

सारांश: कटहल (आर्टोकार्पस हेटेरोफिलस), जिसे "गरीबों का भोजन" और "शाकाहारी मांस" के रूप में जाना जाता है, भारत के बागवानी क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण फसल के रूप में तेजी से लोकप्रिय हो रहा है। बिहार की अनुकूल जलवायु, उपजाऊ मिट्टी और बढ़ती बाजार मांग के चलते कटहल की खेती में अपार संभावनाएं हैं। पोषक तत्वों से भरपूर और कम देखभाल वाली यह फसल ताजे फल, प्रसंस्कृत उत्पाद और लकड़ी जैसे कई आय स्रोत प्रदान करती है। कटाई के बाद नुकसान और जागरूकता की कमी जैसी चुनौतियों के बावजूद, सरकारी और अनुसंधान संस्थानों के सहयोग तथा उच्च उत्पादक किस्मों को अपनाकर बिहार में कटहल की खेती को लाभदायक और टिकाऊ व्यवसाय बनाया जा सकता है।

परिचय: कटहल (Artocarpus heterophyllus) मोरेसी कुल का फल है। एक उभरती हुई फलवाली फसल के रूप में यह भारत के बागवानी क्षेत्र के लिए काफी संभावनाएं रखती है और इसे आमतौर पर "गरीबों का भोजन" या "शाकाहारी मांस" कहा जाता है। यह दुनिया का सबसे बड़ा पेड़ पर उगने वाला खाद्य फल है (30-40 किलोग्राम तक)। इसे मुख्यतः दो वर्गों में विभाजित किया जाता है, नरम गूदा और कठोर गूदा। नरम गूदा वाला कटहल पकाने के लिए उपयुक्त होता है जबकि कठोर गूदा वाला खाने के लिए। आमतौर पर यह व्यवस्थित रूप से बगीचों में नहीं उगाया जाता बल्कि रसोई बगीचों, अन्य फलों के बागों, सड़कों के किनारे या जंगलों में देखा जाता है।

भारत में यह असम, त्रिपुरा, बिहार, उत्तर प्रदेश, पुडुचेरी और महाराष्ट्र जैसे राज्यों में व्यापक रूप से पाया जाता है। यह भारत में एक लाख हेक्टेयर से अधिक क्षेत्र में फैला हुआ है और प्रति वर्ष 14 लाख मीट्रिक टन से अधिक उत्पादन होता है। भारत विश्व में कटहल का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है और इसे कटहल की जन्मभूमि माना जाता है। बिहार के गया, नालंदा, दरभंगा, पूर्णिया जैसे कई जिलों में इसका उत्पादन होता है, लेकिन अभी भी बड़े पैमाने पर उत्पादन की आवश्यकता है।

पोषण मूल्य: कटहल मानव आहार के लिए पोषक तत्वों का समृद्ध स्रोत है। इसके बीज भी प्रोटीन से भरपूर होते हैं और पोषक तत्वों से युक्त मेवे के रूप में सेवन किए जा सकते हैं। इसमें उच्च मात्रा में रेशा होता है जो पाचन तंत्र को स्वस्थ रखने में सहायक है। इसमें "जैकलिन" नामक तत्व होता है जो कोलन कैंसर को रोकने और प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करने में मदद करता है। * कोलेस्ट्रॉल मुक्त * सोडियम कम * पोटैशियम का अच्छा स्रोत * रेशा प्रचुर मात्रा में

घटक	-	मात्रा (प्रति 100 ग्रा)
शुगर	-	32 ग्राम
कैलोरी	-	157
फाइबर	-	2.5 ग्राम
वसा	-	1.1 ग्राम
प्रोटीन	-	2.8 ग्राम
सोडियम	-	2.8 मिलीग्राम
कार्बोहाइड्रेट	-	38.3 ग्राम
फाइबर रेंज	-	2.63.6 ग्राम

बिहार में खेती के लिए उपयुक्त क्षेत्र: बिहार के विभिन्न जिलों में इसकी खेती संभव है। कुछ प्रमुख उपयुक्त क्षेत्र हैं- पटना, गया, नालंदा, पूर्वी चंपारण, सीतामढ़ी, मधुबनी, भागलपुर, मुजफ्फरपुर, दरभंगा, पूर्णिया, अररिया।

मिट्टी और जलवायु: बिहार की उष्णकटिबंधीय और उप-उष्णकटिबंधीय जलवायु कटहल की खेती के लिए उपयुक्त है। यह 25-35°C के तापमान और 1000-2000 मिमी वर्षा में अच्छे से पनपता है। एक बार स्थापित हो जाने पर यह फसल सूखा-प्रतिरोधी होती है। इसे जैविक पदार्थों से भरपूर विभिन्न प्रकार की मिट्टी में उगाया जा सकता है। 6-7.5 का पीएच स्तर अनुकूल होता है। जलभराव से बचाना आवश्यक है। बिहार में उगाई जा रही प्रमुख किस्में हैं: स्थानीय (देशी), गुलाब, खाजा, चंपा।

खेती की विधियाँ: कटहल को सामान्यतः बीज से उगाया जाता है लेकिन इससे पौधों में विविधता आती है। "सही-प्रकार" पौधे प्राप्त करने के लिए वनस्पति प्रसार विधियाँ जैसे स्टूलिंग, माउंड लेयरिंग, कटिंग, एयर लेयरिंग, ग्राफ्टिंग और बडिंग अधिक प्रभावी हैं। रूद्राक्षी को सबसे अच्छा रूटस्टॉक माना जाता है जिससे जल्दी फलन और उच्च उत्पादकता मिलती है।

* **रोपण का सर्वोत्तम समय:** जून से अगस्त (बरसात का मौसम)

*__पारंपरिक खेती में दूरी:__ 10 मीटर × 10 मीटर

*__उच्च घनत्व खेती (HDP):__ 8 मीटर × 8 मीटर

*__गड्ढे का आकार:__ 1 मीटर म 1 मीटर × 1 मीटर

*__प्रति पौधा प्रति वर्ष:__ 15-20 किग्रा सड़ी हुई गोबर खाद

*__NPK अनुपात:__ 100:50:50 ग्राम प्रति पौधा प्रति वर्ष (युवा पौधों के लिए)

*__सिंचाई:__ सूखे की स्थिति में बार-बार सिंचाई आवश्यक फसल मार्च से मई के बीच कोमल अवस्था में सब्जी के लिए और मई से जून के बीच परिपक्व अवस्था में फल के रूप में तुड़ाई की जाती है। परिपक्व फल को थपथपाने पर कुंद आवाज आती है और इसके कांटे चपटे हो जाते हैं।

Figure 1 नालंदा कॉलेज ऑफ हॉर्टिकल्चर में कटहल का सघन बागान।

बिहार में कटहल की खेती में कीट एवं रोग प्रबंधन: बिहार में कटहल की खेती को कीटों और रोगों से जुड़ी विभिन्न चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। प्रमुख कीटों में तना एवं फल भेदक, कली छेदक (बड वीविल), और मिलीबग शामिल हैं। सामान्य रोगों में सॉफ्ट रॉट/फ्रूट रॉट, डाइबेक, और लीफ स्पॉट प्रमुख हैं।

प्रमुख कीट:

तना और फल छेदक (डायफेनिया कैसालिस): यह एक प्रमुख कीट है जो तने और फूलों पर हमला करता है।

बड वीविल (ओचिरोमेरा आर्टोकार्पी): यह कीट कलियों और नए विकसित फलों में छेद करता है, जिससे फलों की वृद्धि रुक जाती है।

मीलीबग (ड्रोसिचा मैंगिफेरा): यह पौधों का रस चूसता है, जिससे उनकी वृद्धि रुक जाती है।

स्पिटल बैग (कॉस्मोकार्पा रिलेटा): यह कीट तने और पुष्पगुच्छों को नुकसान पहुँचाता है।

डॉक्टर गर्ल कैटरपिलर (इंडरबेला टेट्राओनिस): यह तने में छेद करता है, जिससे पेड़ की वृद्धि रुक जाती है।

प्रमुख रोग:

सॉफ्ट रॉट/सॉफ्ट रॉट: यह एक रोगजनक रोग है जो गर्म और आर्द्र जलवायु में युवा फलों और पुष्पगुच्छों को रोकता है।

डाईबैक: इसमें तने और शाखाएँ मुरझा जाती हैं और सूख जाती हैं।

पत्ती का स्थान: ये नोड पर स्थिर सांख्यिकीय इकाइयाँ हैं जिनसे पत्तियों का निर्धारण किया जा सकता है।

प्रबंधन विधियाँ:

कीट नियंत्रण: * संक्रमित भागों को हटाकर नष्ट करना * उपयुक्त कीटनाशकों का प्रयोग * जैविक नियंत्रण उपायों को अपनाना

रोग नियंत्रण: * साफ-सफाई बनाए रखना * आवश्यकतानुसार फफूंदनाशकों का छिड़काव* संक्रमित शाखाओं की छंटाई करना

समेकित कीट प्रबंधन: यह एक समग्र दृष्टिकोण है जो विभिन्न तकनीकों को मिलाकर कीट और रोग नियंत्रण करता है, साथ ही पर्यावरण की सुरक्षा भी सुनिश्चित करता है।

आर्थिक लाभप्रदता और बाजार मांग

* **कम रख-रखाव वाली फसल**
* **बहुद्देशीय वृक्ष:** ताजे फल, प्रसंस्कृत उत्पाद, लकड़ी
* **घरेलू मांग:** सब्जी (कच्चा), फल (पका हुआ)
* **मूल्यवर्धित उत्पाद:** चिप्स, अचार, पापड़, मिठाइयाँ, जेली, पेय, आटा
* निर्यात क्षमताः मध्य पूर्व, यूरोप, अमेरिका में उच्च मांग
* (भारत से दुबई, सिंगापुर, मलेशिया को निर्यात)
* प्रोसेसिंग यूनिट्स और कोल्ड स्टोरेज से लाभ बढ़ सकता है

सरकारी सहायता: * बिहार सरकार 'एकीकृत बागवानी विकास मिशन' (IHDM) के तहत 50% सब्सिडी प्रदान करती है। * ICAR और राज्य कृषि विश्वविद्यालय अनुसंधान एवं प्रशिक्षण के माध्यम से कटहल की खेती को बढ़ावा दे रहे हैं।

निष्कर्ष: बिहार में कटहल की खेती कम निवेश पर अधिक लाभ दे सकती है। उचित कृषि पद्धतियाँ, रोग व कीट नियंत्रण और बाजार तक पहुँच इसे एक स्थायी और लाभदायक फसल बना सकती है। बागवानी विभाग उच्च उत्पादक व बेहतर गुणवत्ता वाली किस्में जैसे PLR1, स्वर्ण मनोहर अपनाने की सिफारिश करता है, क्योंकि ये बिहार की जलवायु के अनुकूल हैं। कटाई के बाद होने वाले भारी नुकसान को रोकने के लिए भंडारण और प्रसंस्करण इकाइयों की जरूरत है। आधुनिक खेती व प्रसंस्करण तकनीकों में प्रशिक्षण एवं जागरूकता आवश्यक है। निर्यातोन्मुख उत्पादन को प्राथमिकता देने से कट हल उत्पादकों के लिए नए आर्थिक अवसर खुल सकते हैं।

डॉ. दिनेश रजक (सह प्राध्यापक)
डॉ. विशाल कुमार (सह प्राध्यापक)
देवेन्द्र कुमार (प्राध्यापक) प्रसंस्करण एवं खाद्य अभियन्त्रिकी विभाग, कृषि अभियंत्रण एवं प्रौधोगीकी महविद्यालय, डॉ.रा.प्र.कें.कृ.वि. पूसा, समस्तीपुर, बिहार

श्रीअन्न विधि उत्पाद का प्रसंस्करण एवं भण्डारण

श्री अन्न विधि उत्कापाद का परिचयः श्री अन्न विधि उत्कापाद का अर्थ है उन विशेष प्रकार के अन्नों का उत्पादन, जिन्हें "श्री अन्न" कहा जाता है, जैसे कुट्टू, सिंघाड़ा, रागी, बाजरा, आदि। इन अन्नों का प्रसंस्करण और भण्डारण विधि विशेष महत्व रखती है, ताकि ये पोषण गुणों से भरपूर और लंबे समय तक सुरक्षित रहें। **इन प्रक्रियाओं में निम्नलिखित प्रमुख चरण शामिल हैं:**

1.श्री अन्न विधि का प्रथम प्रसंस्करणः श्री अन्न का संदर्भ उन विशेष प्रकार के अन्नों से है जो पोषण के दृष्टिकोण से बहुत ही लाभकारी होते हैं, जैसे कि कुट्टू, सिंघाड़ा, रागी, बाजरा, ज्वार, आदि। इन अन्नों का सेवन न केवल भारतीय पारंपरिक भोजन का हिस्सा है, बल्कि ये स्वास्थ्य के लिए भी अत्यधिक लाभकारी माने जाते हैं। श्री अन्न विधि का प्रथम प्रसंस्करण इस अन्न को उपयुक्त और सुरक्षित रूप से खाने के लिए तैयार करने की प्रक्रिया है।

2. श्री अन्न विधि का प्रथम प्रसंस्करण (प्रारंभिक प्रक्रिया): प्रथम प्रसंस्करण का मुख्य उद्देश्य इन अन्नों को खाद्य पदार्थ के रूप में तैयार करना है ताकि वे उपयोग करने योग्य, सुरक्षित और पोषणयुक्त हों। इस प्रक्रिया में निम्नलिखित मुख्य चरण शामिल होते हैं:

सफाईः

कच्चे अन्न का चयनः सबसे पहले, श्री अन्न (जैसे कुट्टू, बाजरा, रागी, आदि) को अच्छे से चुनकर एकत्र किया जाता है।

अशुद्धियों का हटानाः अन्न में से कंकड़, पत्थर, मिट्टी, कीट, या अन्य अशुद्धियों को हटाया जाता है। यह प्रक्रिया बहुत महत्वपूर्ण होती है क्योंकि इन अशुद्धियों से स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है।

धुलाईः * कुछ अन्नों को धोने की आवश्यकता होती है, खासकर सिंघाड़ा और कुट्टू जैसे अन्नों को, ताकि उनकी सतह पर किसी प्रकार की गंदगी या हानिकारक तत्वों को हटाया जा सके। * पानी का उपयोग इस प्रक्रिया में बहुत सावधानी से किया जाता है ताकि अन्न के पोषक तत्वों का नुकसान न हो।

सुखानाः * अन्न को अच्छे से सुखाया जाता है ताकि उसमें कोई नमी न रह जाए। अधिक नमी से अन्न में फफूंदी या बैक्टीरिया का खतरा हो सकता है। * यह प्रक्रिया प्राकृतिक धूप में या फिर सुखाने की मशीनों के द्वारा की जा सकती है। सूखने के बाद, अन्न को सुरक्षित रखने के लिए आगे की प्रक्रियाएँ की जाती हैं।

भुना या सेंकनाः * कुछ अन्नों को खाने योग्य बनाने के लिए भूनने या सेंकने की प्रक्रिया की जाती है। यह प्रक्रिया अन्न को स्वादिष्ट और हल्का बनाती है, साथ ही इसके पोषक तत्वों को भी संरक्षित रखती है। * उदाहरण के लिए, कुट्टू के आटे को सेंकने के बाद उसकी पोषकता और पाचन क्षमता बढ़ जाती है।

पिसाईः अगर अन्न को आटे के रूप में उपयोग करना है, तो उसे पीसा जाता है। इस प्रक्रिया में अन्न के दानों को आटा बनाने के लिए मशीनों या मिलों का उपयोग किया जाता है। पिसाई के दौरान सावधानी रखी जाती है ताकि अन्न के पोषक तत्व बचें और वह उपयुक्त रूप से पीस जाए।

पैकिंगः * प्रसंस्कृत अन्न को एकत्रित करने और सुरक्षित रखने के लिए उपयुक्त पैकिंग की जाती है। पैकिंग सामग्री में प्लास्टिक बैग, जूट बैग या वायुरोधी कंटेनर शामिल हो सकते हैं। * पैकिंग के दौरान अन्न को कीट, नमी और हवा से बचाने के लिए इसे वायुरोधी तरीके से पैक किया जाता है।

श्री अन्न विधि का द्वितीय प्रसंस्करणः श्री अन्न विधि का द्वितीय प्रसंस्करण वह प्रक्रिया है, जिसमें पहले से प्रसंस्कृत अन्न को खाद्य पदार्थ के रूप में उपयोग के लिए और अधिक तैयार किया जाता है। यह प्रसंस्करण मुख्य रूप से श्री अन्न को उसके अंतिम रूप में लाने के लिए किया जाता है, ताकि वह उपभोक्ताओं के लिए अधिक पोषक, स्वादिष्ट और उपयोग में आसान हो।

द्वितीय प्रसंस्करण की प्रमुख प्रक्रियाएं

ग्राइंडिंग और मिलिंग

अधिक पिसाईः यदि अन्न पहले से पिसा नहीं गया है या उसे आटे के रूप में बदलने की आवश्यकता है, तो उसे एक बार और पिसा जाता है। जैसे कुट्टू, बाजरा, रागी आदि को आटे में बदलने हेतु उन्हें ग्राइंडर या आटा मिलों में अच्छी तरह से पीसा जाता है।

सूक्ष्म ग्राइंडिंगः कुछ अन्नों को सूक्ष्म रूप से पीसने की आवश्यकता होती है ताकि उनका आटा मुलायम हो और भोजन के रूप में सेवन करने के लिए बेहतर हो।

मिश्रण

स्वाद और पोषण के लिए मिश्रणः यदि अन्न को किसी विशेष उत्पाद में बदलना हो जैसे कि मिक्स आटा, हलवा, या अन्य खाद्य सामग्री, तो उसमें विभिन्न प्रकार के मसाले, नमक, चीनी, या अन्य सामग्री मिलाई जाती है। यह मिश्रण स्वाद और पोषण दोनों के लिहाज से जरूरी होता है।

प्राकृतिक सामग्री का मिश्रणः इस चरण में अन्य पौष्टिक सामग्री, जैसे ताजे फल, सूखे मेवे, या जड़ी-बूटियाँ मिलाई जा सकती हैं ताकि उत्पाद को और अधिक पोषणमूलक बनाया जा सके।

पकाना और उपचार

उबालना और पकानाः अन्न के अंतिम रूप को तैयार करने के लिए उसे पकाया जा सकता है, जैसे कि चावल या कुट्टू को उबालना। पकाने से अन्न को नरम किया जाता है और यह स्वाद में भी बेहतर होता है।

भुनाई या सेंकनाः कुछ अन्नों को विशेष रूप से भूनने या सेंकने की आवश्यकता होती है ताकि उनका स्वाद और गुण बढ़े। उदाहरण के लिए, रागी या बाजरे को सेंकने से उनकी पोषण क्षमता बेहतर हो सकती है।

उत्पाद रूप में परिवर्तित करना

आटा या पिट्ठी का निर्माणः अन्न को एकत्रित करके आटे या पिट्ठी के रूप में परिवर्तित किया जाता है, जिससे उसे विभिन्न खाद्य उत्पादों में प्रयोग किया जा सकता है, जैसे रोटियां, पराठे, पकौड़ी, या हलवा।

स्नैक उत्पाद बनानाः कई श्री अन्नों का उपयोग स्नैक उत्पादों में भी किया जाता है, जैसे कुट्टू या बाजरे से नमकीन, बिस्किट, या पकोड़ी बनाना।

पैकेजिंगः द्वितीय प्रसंस्करण के अंत में उत्पाद को उपभोक्ता के लिए तैयार किया जाता है और पैक किया जाता है। पैकिंग इस प्रकार की जाती है कि उत्पाद सुरक्षित और ताजे रहे। वायुरोधी पैकिंग, प्लास्टिक बैग, जूट बैग, या कंटेनर का उपयोग किया जाता है।

ब्रांडिंग और लेबलिंगः पैकेजिंग के दौरान उत्पाद पर उसके पोषण गुण, उपयोग के तरीके और अन्य जानकारी की लेबलिंग की जाती है।

गुणवत्ता नियंत्रण * इस चरण में उत्पाद की गुणवत्ता का निरीक्षण किया जाता है। यह सुनिश्चित किया जाता है कि अन्न में कोई भी अशुद्धि न हो, और वह खाद्य सुरक्षा मानकों के अनुरूप हो। * गुणवत्ता नियंत्रण के तहत परीक्षण किए जाते हैं, जैसे कि अन्न की नमी, रंग, स्वाद और अन्य पोषक तत्वों की जाँच।

श्रीअन्न का भण्डारणः श्री अन्न का भण्डारण करते समय विशेष सावधानियाँ बरतनी चाहिए ताकि यह लंबे समय तक सुरक्षित रहे और इसके पोषक गुण खराब न हों:

ठंडी और सूखी जगहः अन्न को हमेशा ठंडी, सूखी और हवा से रहित स्थान पर भण्डारित करना चाहिए। उच्च आर्द्रता और गर्मी से अन्न में फफूंदी लग सकती है या उसमें कीट लग सकते हैं।

वायुरोधी कंटेनरः अन्न को वायुरोधी कंटेनरों में रखा जाता है ताकि वह नमी और हवा से बचा रहे। इसके लिए जूट के बैग, प्लास्टिक बिन, या धातु के कंटेनरों का उपयोग किया जा सकता है।

कीट नियंत्रणः कीटों से बचाने हेतु, कुछ प्राकृतिक उपाय किए जा सकते हैं जैसे नीम के पत्तों या हिंग का उपयोग। साथ ही, नियमित रूप से भण्डारण स्थान का निरीक्षण किया जाता है।

सूरज की सीधी रोशनी से बचावः अन्न को सूरज की सीधी रोशनी से दूर रखा जाता है, क्योंकि इससे उसकी गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ सकता है।

सामान्य तापमानः भण्डारण स्थान का तापमान सामान्य और स्थिर होना चाहिए। अत्यधिक ठंडे या गर्म स्थानों में अन्न का भण्डारण करने से इसके गुण प्रभावित हो सकते हैं।

श्री अन्न के स्वास्थ्य लाभः श्री अन्न के विभिन्न प्रकार के अन्नों में प्रोटीन, फाइबर, विटामिन, और खनिज तत्व होते हैं जो स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभकारी हैं। ये पाचन में सुधार करते हैं, वजन नियंत्रित करने में मदद करते हैं, और शरीर में ऊर्जा का स्तर बनाए रखते हैं। श्री अन्न विधि उत्कापाद का प्रसंस्करण और भण्डारण सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए, ताकि अन्न अपने पोषक तत्वों को बरकरार रखे और लंबे समय तक सुरक्षित रहे। सही प्रसंस्करण और भण्डारण विधियों से श्री अन्न का उपयोग पोषण और स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद बन सकता है।

निष्कर्षः श्री अन्न विधि का प्रथम प्रसंस्करण एवं द्वीतीय प्रसंस्करण अन्न को खाद्य उपयोग के लिए तैयार करने की महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया इस प्रकार की जाती है कि अन्न के पोषक गुण बरकरार रहें, वह सुरक्षित और उपयोग में आसान हो। इस प्रसंस्करण में साफ-सफाई, धुलाई, सुखाना, भूनना, पिसाई, मिश्रण, पकाने, उत्पाद रूप में परिवर्तित करना और पैकिंग जैसे कदम शामिल होते हैं, जिनका उद्देश्य अन्न को सर्वोत्तम गुणवत्ता में बदलना होता है। बल्कि वह स्वास्थ्यवर्धक और स्वादिष्ट भी बनता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

प्रा. डॉ, शैलेश आचार्य
प्रा. अश्विनी सहाणे, प्रा. विक्रम कोरडे
अमृतवाहिनी शेती आणि शिक्षण विकास संस्था
सहकारमहर्षी भाऊसाहेब थोरात कृषी महाविद्यालय
अमृतनगर, संगमनेर, अहिल्यानगर महाराष्ट्र

AI (कृत्रिम बुद्धिमत्ता) और GIS (भौगोलिक सूचना प्रणाली) भारतीय कृषि को कैसे बदल रहे हैं?

कृषि भारत में ग्रामीण आजीविका की रीढ़ है जो खाद्य उत्पादन बढ़ाने, ऋण सुधार और विपणन रणनीतियों की शुरूआत में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। कृषि अभी भी भारत की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देती है (भारत की जीडीपी का लगभग 18-19%) कृषि खाद्य प्रसंस्करण, कपड़ा और कृषि व्यवसाय जैसे उद्योगों हेतु कच्चा माल प्रदान करती है। छोटी भूमि का स्वामित्व, कृषि मशीनीकरण का कम उपयोग, अत्यधिक सरकारी नियंत्रण और सरकारी सहायता पर निर्भरता जैसी अक्षमताओं से आर्थिक विकास बाधित होता है।

भारतीय कृषि पारिस्थितिकी तंत्र में चुनौतियां

1. **खंडित भूमि:** भारत में अधिकांश किसानों के पास खंडित भूमि है। इससे आधुनिक कृषि पद्धतियों को अपनाने की उनकी क्षमता सीमित हो जाती है, क्योंकि उन्हें पैमाने की अर्थव्यवस्थाओं से लाभ नहीं होगा।

2. **भूमि निम्नीकरण:** क्षेत्र में कृषि उत्पादकता में तेजी से वृद्धि का मिट्टी के स्वास्थ्य पर बड़ा प्रभाव पड़ा है, जिसमें शहरी विस्तार और कृषि पद्धतियों में बदलाव के कारण बड़े पैमाने पर कटाव, लवणीकरण और वनों की कटाई शामिल है। इन चुनौतियों ने कृषि को खतरे में डाल दिया है और किसानों को अधिक असुरक्षित बना दिया है, जिससे बेहतर भूमि प्रबंधन और टिकाऊ कृषि पद्धतियों की आवश्यकता पर बल मिलता है।

3. **मिट्टी की गुणवत्ता में गिरावट:** हरित क्रांति के दौरान कृषि रसायनों के अत्यधिक उपयोग से मिट्टी की गुणवत्ता में गिरावट आई है, विशेष रूप से पोषक तत्व चक्र और संरचना के लिए आवश्यक मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ। रासायनिक उर्वरकों से मिट्टी के अम्लीकरण ने उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में मिट्टी का स्वास्थ्य खराब कर दिया है, इससे भारत की 60% से अधिक कृषि भूमि प्रभावित हुई है। ये चुनौतियाँ भविष्य की फसल की पैदावार को खतरे में डालती हैं और मिट्टी की जैव विविधता और उर्वरता को बनाए रखने के लिए टिकाऊ कृषि पद्धतियों की आवश्यकता को रेखांकित करती हैं।

4. **जल की कमी एवं लवणीकरण:** भारत के कई क्षेत्रों में कृषि काफी हद तक मानसूनी बारिश पर निर्भर करती है, जिससे अक्सर शुष्क अवधि के दौरान पानी की कमी हो जाती है। अपर्याप्त सिंचाई बुनियादी ढांचे और अकुशल जल प्रबंधन ने चुनौती को बढ़ा दिया है। इसके अलावा, सिंचाई हेतु पानी के अंधाधुंध उपयोग और जलवायु परिवर्तन के कारण पानी की बढ़ती उपलब्धता के कारण मिट्टी में लवणता बढ़ गई है, जिससे जलभराव बढ़ गया है।

5. **कीट, रोग और जलवायु परिवर्तन:** टी रिसर्च एसोसिएशन ने अपने बयान में कहा कि किसानों को कीटों, बीमारियों और बदलते जलवायु पैटर्न के कारण चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, चाय बागानों में कीटों के संक्रमण से सालाना 2,865 करोड़ रुपये का राजस्व नुकसान होता है। अनियमित मौसम की स्थिति, सूखे, बाढ़ और गर्मी की लहरों में वृद्धि फसल उत्पादन और आजीविका को प्रभावित करती है। 2023 में आंध्र प्रदेश में आया चक्रवात एक ऐसी घटना है जिसने हजारों एकड़ खड़ी फसल को नष्ट कर दिया।

6. **भोजन भंडारण की कमी और भोजन की बर्बादी:** खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय (एमएफपीआई) के अनुसार, अपर्याप्त भंडारण और परिवहन सुविधाओं के कारण भारत हर साल अपने कृषि उत्पादन का लगभग 30% खो देता है। बुनियादी ढांचे को बढ़ाने से इन नुकसानों को काफी हद तक कम किया जा सकता है,जिससे अधिक भोजन उपलब्धता और कम बर्बादी सुनिश्चित हो सके।

7. **अपर्याप्त कृषि अनुसंधान एवं शिक्षा, प्रशिक्षण एवं विस्तार:** 2019 में, भारत ने अपने कृषि सकल राष्ट्रीय उत्पाद का केवल 0.7% कृषि अनुसंधान, शिक्षा, विस्तार और प्रशिक्षण के लिए आवंटित किया जो विश्व बैंक द्वारा अनुशंसित 2% की सीमा से काफी कम है। किसानों को शिक्षा और प्रशिक्षण की कमी के कारण किसान नई टिकाऊ प्रथाओं से वंचित रह जाते हैं।

कृषि में एआई और सैटेलाइट इमेजरी की भूमिका: आधुनिक कृषि को बदलने में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) और उपग्रह इमेजरी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं:

1. **सटीक खेती:** एआई और उपग्रह इमेजरी मिट्टी की नमी, फसल स्वास्थ्य और मौसम के पैटर्न पर वास्तविक समय डेटा प्रदान करके सटीक खेती तकनीकों को सक्षम बनाती है। इससे किसानों को सिंचाई, उर्वरक और कीटनाशकों के उपयोग को अनुकूलित करने की अनुमति मिलती है जिससे फसल की पैदावार और संसाधन दक्षता में सुधार होता है। ऐतिहासिक डेटा, मिट्टी की जानकारी और मौसम के पूर्वानुमान के आधार पर प्रत्येक फसल के लिए सिंचाई सलाह प्रदान करने हेतु एआई और एमएल मॉडल को प्रोग्राम किया जा सकता है। यह एकीकृत प्लेटफार्मों के माध्यम से किया जा सकता है जो कई सूचना प्रणालियों जैसे कि मौसम स्टेशन, मिट्टी सेंसर, ऐतिहासिक डेटा बेस और बहुत कुछ के साथ एकीकृत हैं।

2. **फसल की निगरानी और प्रबंधन:** उपग्रह चित्र बड़े क्षेत्रों में फसल की वृद्धि और स्वास्थ्य के बारे में विस्तृत जानकारी प्रदान करते हैं। एआई एल्गोरिदम बीमारी, कीटों या पोषक तत्वों की कमी का तुरंत पता लगाने हेतु इस डेटा का विश्लेषण करता है जिससे जोखिम को कम करने और रिटर्न को अनुकूलित करने हेतु समय पर हस्तक्षेप संभव हो सके।2017-2018 के दौरान, क्षेत्रवार कीट प्रारंभिक चेतावनी मॉड्यूल ने गुलाबी बॉलवर्म के कारण 6-7 लाख हे. कपास और आर्मीवर्म के कारण 1.8-2 लाख हे. मक्का और ज्वार के नुकसान को रोका।

3. **पूर्वानुमानित विश्लेषण:** एआई मॉडल ऐतिहासिक डेटा, मौसम पूर्वानुमान और उपग्रह छवियों के आधार पर फसल की पैदावार की भविष्यवाणी कर सकते हैं। इससे किसानों और नीति निर्माताओं को रोपण, कटाई और बाजार योजना पर सूचित निर्णय लेने में मदद मिलती है। 2018 में, आंध्र प्रदेश के अनंतपुर जिले में क्षेत्रवार बुआई सलाह सुविधा ने मूंगफली उत्पादन में पिछले वर्ष की तुलना में 10%-15% की वृद्धि की।

4. **भूमि उपयोग योजना:** सैटेलाइट इमेजरी स्थायी भूमि प्रबंधन प्रथाओं का समर्थन करते हुए भूमि उपयोग परिवर्तन, मिट्टी के कटाव और वनों की कटाई की निगरानी में मदद करती है। एआई एल्गोरिदम भूमि उपयोग निर्णयों को अनुकूलित करने और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए इस डेटा का विश्लेषण करते हैं।

5. **मौसम और मौसम की निगरानी:** उपग्रह मौसम के पैटर्न और जलवायु परिवर्तन की निरंतर निगरानी प्रदान करते हैं। एआई मॉडल सूखे या बाढ़ जैसी चरम मौसम स्थितियों की भविष्यवाणी करने के लिए इस डेटा का विश्लेषण करते हैं। जो किसानों को पहले से ही अनुकूली रणनीतियों को लागू करने में सक्षम बनाता है। फ़ील्डवाइज के सूखा पूर्वानुमान मॉड्यूल ने 677 उच्च जोखिम वाले जिलों में से 274 की पहचान की। इस शुरुआती पहचान से इनपुट सब्सिडी का समय पर प्रावधान संभव हो सका, जिससे किसानों को आर्थिक लाभ हुआ।

6. **बाजार पहुंच और आपूर्ति श्रृंखला अनुकूलन:** एआई एल्गोरिदम बाजार की मांग की भविष्यवाणी करने, रसद का अनुकूलन करने और आपूर्ति श्रृंखला दक्षता में सुधार करने के लिए उपग्रह डेटा का विश्लेषण करता है। इससे किसानों को बाजारों तक अधिक प्रभावी ढंग से पहुंचने और फसल के बाद के नुकसान को कम करने में मदद मिलती है।

7. **फार्म ऑटोमेशन:** एआई-संचालित रोबोटिक्स और सैटेलाइट-निर्देशित नेविगेशन से लैस ड्रोन रोपण, छिड़काव और कटाई जैसे कार्यों में मदद करते हैं। इससे श्रम लागत कम होती है, दक्षता बढ़ती है और पर्यावरणीय प्रभाव कम होता है।

8. **सीमा मानचित्रण:** सटीक कृषि में, सीमाएँ आवश्यक हैं क्योंकि वे खेतों के आकार और क्षेत्र को परिभाषित करती हैं। ये सीमाएँ निगरानी प्रणालियों और मैपिंग सॉफ्टवेयर के लिए महत्वपूर्ण हैं, सटीक फ़ील्ड स्थान और बहिष्करण सुनिश्चित करती हैं। उपग्रह इमेजरी और एआई की मदद से, किसान डेटा के विरुद्ध क्षेत्र की सीमाओं को सटीक रूप से मैप किया जा सकता है। यह सरकारों, उद्योगों और वित्तीय संस्थानों को कृषि विवरणों की निगरानी और सत्यापन करने में मदद करता है।

9. **GenAI की भूमिका:** किसानों और अधिकारियों को उनकी मातृभाषा में कृषि सलाह प्रदान करने के लिए GenAI-संचालित चैटबॉट विकसित किए जा सकते हैं। इससे किसानों को कृषि पद्धतियों से संबंधित नवीनतम ज्ञान और निष्कर्ष आसानी से प्राप्त हो सकते हैं। किसान इन चैटबॉट्स का उपयोग मौसम की सलाह, सिंचाई युक्तियों और कीट पहचान निर्देश प्राप्त करने हेतु कर सकते हैं, जिससे उनकी कृषि पद्धतियाँ अनुकूलित हो सकती हैं।

सरकारी पहलों को समर्थन: भारत के कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय ने कृषि क्षेत्र में विभिन्न चुनौतियों का समाधान करने और किसानों का समर्थन करने के लिए कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) का उपयोग किया है।

कुछ गतिविधियों में शामिल हैं:

'किसान ई-मित्र': एक एआई-संचालित चैटबॉट जिसे प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि योजना से संबंधित प्रश्नों में किसानों की मदद के लिए डिज़ाइन किया गया है। यह चैटबॉट कई भाषाओं का समर्थन करता है और अन्य सरकारी कार्यक्रमों को कवर करने के लिए इसका विस्तार किया जा रहा है।

राष्ट्रीय कीटक देखरेख प्रणाली: हवामान बदलामुळे होणाऱ्या पिकांच्या नुकसानाचे निरीक्षण करण्यासाठी आणि कमी करण्यासाठी एआय आणि मशीन लर्निंगचा वापर करते. ही प्रणाली पिकांच्या समस्या लवकर शोधते, निरोगी पिकांसाठी वेळेवर हस्तक्षेप करण्यास मदत करते.

एआई-आधारित विश्लेषण: फसल स्वास्थ्य मूल्यांकन के लिए, फ़ील्ड छवियों का उपयोग करता है और चावल और गेहूं की फसलों की निगरानी के लिए उपग्रह, मौसम और मिट्टी की नमी डेटासेट को एकीकृत करता है।

इन पहलों की घोषणा फरवरी 2024 में केन्द्रीय कृषि और किसान मंत्री द्वारा की गई थी। सरकार ने राष्ट्रीय कृषि ई-गवर्नेंस योजना (NeGP-A) शुरू की है। यह आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई), मशीन लर्निंग (एमएल), रोबोटिक्स, ड्रोन, डेटा एनालिटिक्स और ब्लॉकचेन जैसी उन्नत प्रौद्योगिकियों का उपयोग करने वाली परियोजनाओं के लिए राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों को धन आवंटित करता है। इन प्रयासों का उद्देश्य कृषि में महत्वपूर्ण जानकारी और डिजिटल बुनियादी ढांचे की उपलब्धता बढ़ाने हेतु राज्यों के प्रस्तावों के बाद अभिनव समाधान विकसित करना है। इसके अतिरिक्त, सरकार ने कृषि हेतु डिजिटल पब्लिक इंफ्रास्ट्रक्चर (डीपीआई) के विकास की घोषणा की है। यह किसानों को फसल योजना, स्वास्थ्य निगरानी, इनपुट की उपलब्धता, ऋण, बीमा, फसल पूर्वानुमान और बाजार खुफिया जैसी व्यापक सेवाओं के साथ सशक्त बनाने हेतु ओपन-सोर्स और इंटरऑपरेबल समाधानों को बढ़ावा देगा।

निष्कर्ष: एआई और सैटेलाइट इमेजरी मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करके और संसाधन प्रबंधन को अनुकूलित करके, उत्पादकता में सुधार और टिकाऊ प्रथाओं को बढ़ावा देकर कृषि में क्रांति लाती है। विश्व बैंक और संयुक्त राष्ट्र जैसी संस्थाएँ और सरकारें अनुसंधान के लिए धन, प्रौद्योगिकी अपनाने के लिए अनुदान प्रदान करती हैं। वे प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रदान करके और कृषि में नई पहल और तकनीकी एकीकरण को बढ़ावा देने वाली नीतियां स्थापित करके किसानों को इन प्रौद्योगिकियों को अपनाने में मदद करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह योगदान खाद्य सुरक्षा को बढ़ाता है और वैश्विक स्तर पर आर्थिक विकास को बढ़ावा देता है।

श्री गणेशाय नमः

श्री सॉवलिया सेठ

किसान कृषि सेवा केन्द्र

Gmail
Kisankrishisevakendramanasa@gmail.com
7692967419 9109726855

हमारी सेवाएँ:-

सभी तरह के उन्नत बीज- अश्वगंधा, अकरकरा, कलोंजी, तुलसी, केमोमाईल, चिया, जीरा, हल्दी, सौप, सर्पगंधा, तरबूज एवं सभी प्रकार की सब्जिया एवं फुलो के बीज, कृषि दवाईया, उर्वरक, वर्मी कम्पोस्ट यूनिट, अजोला यूनिट, किसान के घर पर तैयार वर्मी कम्पोस्ट, जैविक खेती से संबंधित सभी कार्य, सभी फसलो के फोरोमेन ट्रेप, सोयाबीन स्पाईरल ग्रेडर, कृषि एवं किसान संबंधित समस्त प्रकार के ऑर्डर की विश्वास पूर्ण, पूर्ति करना हमारा परम ध्येय है।

कृषि विभाग एवं उद्यानिकी विभाग संबंधित सभी योजनाओं के पंजियन किए जाते है।

उन्नत किस्म के नर्सरी के पौधे, मासिक, साप्ताहिक कृषि साहित्य सभी प्रकार की पत्रिका उपलब्ध है।

स्थान- पुराना टॉकीज, एल.आई.सी. ऑफिस के सामने, रामपुरा रोड़ मनासा जिला नीमच (म.प्र.) 458110

An ISO 9001:2008 Certified Company

कृषि दर्शन®

खेत-खलिहान का राजा

1988

सुदर्शन इण्डस्ट्रीज

विक्रम नगर मौलाना, बड़नगर, जिला-उज्जैन-456771 (म.प्र.)
फोन : 07367-262235, मोबा.: 09827078882
वेब : www.krishidarshan.com, ई-मेल : krishidarshan@rediffmail.com

Postal Regd. No.: Gwalior/40020242/2025-27

R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946

मध्य भारत कृषक भारती

मई -2025

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक, प्रधान संपादक राजू गुर्जर द्वारा सर्वोदय प्रिंटिंग प्रेस, महाडिक की गोठ, जनक हॉस्पिटल के पीछे कम्पू रोड, लश्कर-ग्वालियर से मुद्रित एवं ई.एम.-120, कुशवाह मार्केट के पास दीनदयाल नगर ग्वालियर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादकः राजू गुर्जर. मोबा. 9425101132, 94245-22090